आज़ादी का अमृत महोत्सव

जनवरी, 2022
I.S.S.N. : 2457-0494

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

प्रधान संपादक

श्री कमला कान्त

संपादक

श्री अविनाश शुक्ला
श्री असलम खान

सहायक संपादक

श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक

श्री महीपाल सिंह
श्री जसवन्त सिंह

ISSN-2457-0494

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 195/-

वार्षिक : ₹ 2,100/-

© 2022 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0494

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

जनवरी, 2022 अंक - 1

प्रधान संपादक
कमला कान्त

संपादक
अविनाश शुक्ला

[2022] 1 उम. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on
Website → https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001. दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका प्रतिमाह आपके अवलोकनार्थ उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित प्रतिवेद्य निर्णय, जो न्यायाधीशों, अधिवक्ताओं, विधि छात्रों और अकादमीशियनों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, का प्रकाशन करता है । आप लोगों से प्राप्त सुझावों के आधार पर हमको अपनी पत्रिका की गुणवत्ता सुधारने और अपने कार्य को और अधिक निखारने की शक्ति प्राप्त होती है । कृपया अपने अमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराते रहें और हमारा मार्गदर्शन करते रहें ।

इस अंक के माध्यम से हमने आपके अवलोकनार्थ माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **केवल कृष्ण** बनाम **राजेश कुमार और अन्य** [2022] 1 उम. नि. प. 1 वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 54 के उपबंधों के आधार पर पारित निर्णय प्रस्तुत किया है । इस मामले में अपीलार्थी ने संपत्तियों के विक्रय के बाबत अपने भाई-प्रत्यर्थी के पक्ष में एक मुख्तारनामा निष्पादित किया था, जिसके द्वारा उसने प्रत्यर्थी को मुख्तार के रूप में यह अधिकार प्रदान किया था कि वह प्रार्थी की संपत्ति का विक्रय विलेख निष्पादित कर सके । किंतु प्रत्यर्थी ने उक्त संपत्तियों का विक्रय विलेख अपनी पत्नी और नाबालिक पुत्रों के पक्ष में बिना किसी प्रतिफल के संदाय के निष्पादित कर दिया । अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी के इस कृत्य को चुनौती दिए जाने पर प्रत्यर्थी अपनी पत्नी और नाबालिक पुत्रों की आय की स्रोत साबित नहीं कर सका । अत: माननीय न्यायालय ने निर्णय दिया कि स्थावर संपत्ति के विक्रय के बाबत किए गए ऐसे विक्रय संव्यवहार, जिनमें प्रतिफल का संदाय नहीं किया गया और क्रेताओं के आय के स्रोत भी साबित नहीं किए गए, शून्य होने के कारण निष्प्रभावी घोषित किए जाने योग्य हैं ।

यह अंक विद्यार्थियों, विधिवेत्ताओं, न्यायाधीशों और आम जनता

के लिए बहुत उपयोगी है । इस अंक में माल-विक्रय अधिनियम, 1930 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ को भी ज्ञानार्थ प्रकाशित किया जा रहा है । इस संपूर्ण अंक का परिशीलन करने के पश्चात् आपकी बहुमूल्य प्रतिक्रियाएं ईप्सित हैं ।

अविनाश शुक्ला

संपादक

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

जनवरी, 2022

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
अमित कुमार **बनाम** सुमन बेनीवाल	43
केवल कृष्ण **बनाम** राजेश कुमार और अन्य इत्यादि	1
पप्पू तिवारी **बनाम** झारखंड राज्य	132
पार्वती देवी **बनाम** बिहार राज्य अब झारखंड राज्य और अन्य	61
फूल सिंह **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य	18
भगवानी **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य	108
मध्य प्रदेश राज्य **बनाम** जोगेन्द्र और एक अन्य	81
राम सहाय महतो **बनाम** बिहार राज्य अब झारखंड राज्य और अन्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 61)	
लॉ तिवारी **उर्फ** उपेन्द्र कुमार तिवारी **बनाम** झारखंड राज्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 132)	

संसद् के अधिनियम

माल-विक्रय अधिनियम, 1930 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 - 30

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)

– धारा 302/34 [सपठित आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 27] – हत्या – दोषसिद्धि – अभियुक्तों में से एक अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा घटना की तारीख को अन्यत्र उपस्थित होने का अभिवाक् किया जाना – सबूत – जहां अभियुक्त द्वारा यह अभिवाक् किया गया हो कि वह घटना की तारीख को किसी दूसरे स्थान पर उपस्थित था और वहां उसकी टांग का अस्थि-भंग होने के कारण उपचार के लिए अस्पताल में भर्ती था और उसे मामले में मिथ्या रूप से फंसाया गया था, किंतु जब उसके द्वारा अस्पताल में भर्ती होने का कोई कागजात प्रस्तुत नहीं किया गया और न ही उपचार करने वाले डाक्टर को प्रतिरक्षा साक्षी के रूप में पेश या समन किया गया, वहां अभियुक्त अपने अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् को सिद्ध करने के भार का निर्वहन करने में असफल रहने पर उसके ऐसे अभिवाक् को मान्य नहीं ठहराया जा सकता है और प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य के आधार पर की गई उसकी दोषसिद्धि उचित है ।

पप्पू तिवारी बनाम **झारखंड राज्य** 132

– धारा 302/34 [सपठित आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 27] – हत्या – दोषसिद्धि – अभियुक्तों द्वारा मृतक पर गोली चलाकर और चाकुओं से प्रहार करके हत्या किया जाना – दोषसिद्धि – प्रथम इत्तिला रिपोर्ट समय-पूर्व होने और इत्तिलाकर्ता मृतक का घनिष्ठ नातेदार होने का अभिवाक् किया जाना – संधार्यता – मृतक के भाई के विश्वसनीय परिसाक्ष्य को

पृष्ठ संख्या

मात्र इस आधार पर त्यक्त नहीं किया जा सकता है कि वह मृतक का घनिष्ठ नातेदार है और जहां अन्वेषक अभिकरण द्वारा घटना की इत्तिला प्राप्त होने पर शीघ्रतापूर्वक इत्तिलाकर्ता का फर्दब्यान लेखबद्ध किया गया हो, तुरंत मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट तैयार की गई हो और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई हो तथा शव को शीघ्रातिशीघ्र मरणोत्तर परीक्षा के लिए भेजा गया हो और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अगले दिन सवेरे ही न्यायालय में प्रेषित की गई हो, वहां ऐसा अभिवाक् मान्य नहीं है और प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य के आधार पर की गई अभियुक्तों की दोषसिद्धि उचित है ।

पप्पू तिवारी बनाम **झारखंड राज्य** 132

– धारा 304ख और 201 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113ख और दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 2] – दहेज मृत्यु और साक्ष्य का विलोपन – अभियुक्त-अपीलार्थी (सं. 1) के साथ मृतका का विवाह होने के कुछ ही माह के पश्चात् दहेज की मांग के संबंध में उसके साथ क्रूरता और उसे तंग किया जाना – मृतका के माता-पिता द्वारा दहेज की मांग को पूरा करने में असमर्थता व्यक्त करना – मृतका का दांपत्य गृह से गुम हो जाना – गुम होने के कई दिनों के पश्चात् उसका शव एक नदी के किनारे पाया जाना – पारिस्थितिक साक्ष्य – उपधारणा – दोषसिद्धि – जहां विवाहित स्त्री अपने विवाह के कुछ ही माह के भीतर और उसके ससुराल वालों द्वारा उससे दहेज की मांग करने के ठीक पश्चात् अपने दांपत्य गृह से गुम हो गई और उसका शव एक नदी के किनारे पाया गया तथा

पृष्ठ संख्या

अभियुक्त-पति द्वारा उसके गुम होने के बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया, वहां उसकी मृत्यु असामान्य परिस्थितियों में होने के कारण 'दहेज मृत्यु' की उपधारणा की जाएगी और अभियुक्त-पति की दोषसिद्धि उचित है किंतु उसकी माता (अभियुक्त 2) के विरुद्ध कोई विनिर्दिष्ट अभिकथन न होने के कारण उसे दोषमुक्त करना उचित होगा ।

पार्वती देवी बनाम **बिहार राज्य अब झारखंड राज्य और अन्य** 61

– धारा 304ख और 498क [सपठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 2] – दहेज मृत्यु और क्रूरता – अभियुक्तों-पति और ससुर द्वारा मृतका-विवाहित स्त्री से विवाह के छह माह के पश्चात् से मकान का निर्माण करने के लिए अपने परिवार वालों से धन लाने की मांग किया जाना – मांग पूरी न होने पर अभियुक्तों द्वारा उसे तंग और उसके साथ क्रूरता किया जाना – मृतका द्वारा परेशान होकर विवाह के चार वर्ष के भीतर अपने दांपत्य-गृह में आत्महत्या कर लेना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को दोषसिद्ध और आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा मकान के निर्माण के लिए की गई धन की मांग को दहेज की मांग न मानते हुए अभियुक्तों को धारा 304ख के अधीन अपराध के लिए दोषमुक्त किया जाना – ससुर को धारा 498क के अधीन भी दोषमुक्त किया जाना – संधार्यता – 'दहेज' शब्द की परिभाषा एक व्यापक परिभाषा होने के कारण इसके अंतर्गत सभी प्रकार की संपत्ति और मूल्यवान प्रतिभूति

पृष्ठ संख्या

आती है, इसलिए जहां साक्षियों के अविचल साक्ष्य से युक्तियुक्त संदेह के परे यह सिद्ध हो जाता है कि अभियुक्तों द्वारा मृतका से सतत रूप से की जा रही धन की मांग पूरी न होने के कारण उसे तंग और उसके साथ क्रूरता की गई थी तथा उसे परेशान और मजबूर होकर आत्महत्या करनी पड़ी थी, वहां अभियुक्तों की धारा 304ख और 498क के अधीन दोषसिद्धि उचित है, तथापि, उनके कठोर आजीवन कारावास के दंडादेश को सात वर्ष के कठोर कारावास में परिवर्तित करने से न्याय की पूर्ति हो जाएगी ।

मध्य प्रदेश राज्य बनाम **जोगेन्द्र और एक अन्य** 81

– धारा 363, 364, 366क, 376क, 376घ, 302 और 201 [सपठित लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम, 2012 की धारा 5 (च)(ड) और धारा 6] – अभियुक्तों द्वारा 11 वर्षीया अप्राप्तवय बालिका का व्यपहरण किया जाना और उसके साथ बलात्संग तथा हत्या किया जाना – पारिस्थितिक साक्ष्य – दोषसिद्धि – संधार्यता – जहां मृतका को अंतिम बार अभियुक्तों के साथ देखा जाना, जो अपनी शाल रखने के लिए अभियुक्तों में से एक अभियुक्त के मकान पर आई थी और उसके बाद उसका गुम हो जाना, विपदग्रस्त लड़की की रक्तरंजित शाल और कंबल अभियुक्त के मकान से उसके द्वारा किए गए प्रकटन कथन के आधार पर बरामद होना, घटनास्थल से बरामद कमीज का बटन सह-अभियुक्त की कमीज का होना साबित किया जाना, अभियुक्त के शरीर पर पाए गए खरोंच के चिह्नों के बारे में उसके द्वारा कोई स्पष्टीकरण न दिया

पृष्ठ संख्या

जाना और न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला की रिपोर्ट से भी यह साबित होना कि अभियुक्तों से अभिगृहीत उनके द्वारा पहने हुए वस्त्रों पर मृतका के रक्त के मिलान का रक्त पाया गया था, वहां परिस्थितियों की श्रृंखला पूर्ण होने पर अभियुक्तों की दोषसिद्ध उचित है ।

भगवानी बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** 108

– धारा 363, 364, 366क, 376क, 376घ, 302 और 201 [सपठित लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम, 2012 की धारा 5(च)(ढ) और धारा 6] – अभियुक्तों द्वारा 11 वर्षीया अप्राप्तवय बालिका का व्यपहरण किया जाना और उसके साथ बलात्संग तथा हत्या किया जाना – दोषसिद्धि – मृत्यु दंडादेश – जहां मृत्यु दंडादेश अधिरोपित करते समय केवल अपराध की गंभीरता पर विचार किया गया हो और न्यूनकारी परिस्थितियों तथा अभियुक्त में सुधार होने या उसके पुनर्वासित होने की बात पर विचार न किया गया हो, वहां मृत्यु दंडादेश को 30 वर्ष के आजीवन कारावास में, किसी परिहार के बिना, लघुकृत करने से न्याय की पूर्ति हो जाएगी ।

भगवानी बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** 108

– धारा 376 – बलात्संग – अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि – संधार्यता – जहां मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर बलात्संग की शिकार-अभियोक्त्री का परिसाक्ष्य विश्वसनीय और भरोसेमंद पाया गया हो और घटना के आरंभ से ही वह अपने कथन पर अडिग रही हो और अभियोजन के पक्षकथन का पूर्णत: समर्थन किया हो, वहां अभियोक्त्री के

पृष्ठ संख्या

एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर उसकी संपुष्टि के बिना भी अभियुक्त को दोषसिद्ध किया जा सकता है ।

फूल सिंह बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** 18

– धारा 376 – बलात्संग – दोषसिद्धि – अभियोक्त्री के शरीर पर कोई बाह्य या आंतरिक क्षति न पाया जाना – सहमतिजन्य पक्षकार – जहां बलात्संग की शिकार-अभियोक्त्री के शरीर पर कोई बाह्य या आंतरिक क्षति न पाई गई हो, इसका यह अर्थ नहीं है कि वह एक सहमति का मामला हो सकता है, जबकि प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा विचारण के दौरान दूर-दूर तक उससे ऐसा कोई प्रश्न तक न पूछा गया हो, वहां अभियोक्त्री को सहमतिजन्य पक्षकार नहीं कहा जा सकता है और अभियुक्त की दोषसिद्धि उचित है ।

फूल सिंह बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** 18

संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 (1882 का 4)

– धारा 54 – विक्रय विलेख – अपीलार्थी द्वारा वादांतर्गत संपत्तियों की बाबत अपने भाई (प्रत्यर्थियों में से एक) के पक्ष में मुख्तारनामा निष्पादित किया जाना – प्रत्यर्थी द्वारा उक्त संपत्तियों का अपने अप्राप्तवय पुत्रों और पत्नी के पक्ष में उनके द्वारा प्रतिफल का संदाय किए बिना विक्रय विलेख निष्पादित किया जाना – क्रेताओं-प्रत्यर्थी के अप्राप्तवय पुत्रों और पत्नी का कोई उपार्जन का स्रोत होना सिद्ध न किया जाना – वादांतर्गत स्थावर संपत्ति की बाबत निष्पादित किए गए ऐसे विक्रय विलेख, जिनमें प्रतिफल का संदाय किया जाना साबित न किया गया हो, शून्य होने के कारण निष्प्रभावी घोषित करना न्यायोचित होगा ।

केवल कृष्ण बनाम **राजेश कुमार और अन्य इत्यादि** 1

पृष्ठ संख्या

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25)

– धारा 13ख और धारा 14, परंतुक – पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद – पति-पत्नी (उच्च शिक्षित और उच्च पदासीन अधिकारी) द्वारा विवाह के पश्चात् केवल तीन दिन एक-साथ रहने के उपरांत प्रचंड मतभेदों के कारण अलग-अलग हो जाना – विवाह के एक वर्ष पश्चात् पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद के लिए अर्जी फाइल किया जाना – पक्षकारों द्वारा छह माह की प्रतीक्षा अवधि का अधित्यजन करने के लिए आवेदन फाइल किया जाना – इस आवेदन और पुनरीक्षण आवेदन को खारिज किया जाना – अपील – विवाह-विच्छेद के लिए अर्जी फाइल करने की तारीख से छह माह की प्रतीक्षा अवधि पक्षकारों द्वारा विवाह के पवित्र बंधन को सदैव के लिए समाप्त करने से पूर्व अपने विनिश्चय पर पुनर्विचार करने के आशय से उपबंधित की गई है, किंतु जहां पक्षकारों के बीच सुलह और पुनर्मिलन की कोई संभावना न हो और विवाह असुधार्य रूप से टूट गया हो, वहां पक्षकारों की व्यथा को और अधिक बढ़ाने की बजाय प्रतीक्षा अवधि का अधित्यजन करना उचित होगा चूंकि यह एक निदेशात्मक उपबंध है न कि आज्ञापक ।

अमित कुमार बनाम **सुमन बेनीवाल** 43

[2022] 1 उम. नि. प. 1

केवल कृष्ण

बनाम

राजेश कुमार और अन्य इत्यादि

[2021 की सिविल अपील सं. 6989-6992]

22 नवंबर, 2021

न्यायमूर्ति अजय रस्तोगी और न्यायमूर्ति अभय एस. ओका

संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 (1882 का 4) – धारा 54 – विक्रय विलेख – अपीलार्थी द्वारा वादांतर्गत संपत्तियों की बाबत अपने भाई (प्रत्यर्थियों में से एक) के पक्ष में मुख्तारनामा निष्पादित किया जाना – प्रत्यर्थी द्वारा उक्त संपत्तियों का अपने अप्राप्तवय पुत्रों और पत्नी के पक्ष में उनके द्वारा प्रतिफल का संदाय किए बिना विक्रय विलेख निष्पादित किया जाना – क्रेताओं-प्रत्यर्थी के अप्राप्तवय पुत्रों और पत्नी का कोई उपार्जन का स्रोत होना सिद्ध न किया जाना – वादांतर्गत स्थावर संपत्ति की बाबत निष्पादित किए गए ऐसे विक्रय विलेख, जिनमें प्रतिफल का संदाय किया जाना साबित न किया गया हो, शून्य होने के कारण निष्प्रभावी घोषित करना न्यायोचित होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी केवल कृष्ण और उसके बड़े भाई सुदर्शन कुमार (प्रत्यर्थियों में से एक) ने तारीख 12 अगस्त, 1976 और 29 अक्तूबर, 1976 के विक्रय विलेखों के अधीन संपत्तियां (संक्षेप में 'वादांतर्गत संपत्ति'), अर्जित की थी । अपीलार्थी ने तारीख 28 मार्च, 1980 को सुदर्शन कुमार के पक्ष में एक मुख्तारनामा निष्पादित किया था । सुदर्शन कुमार द्वारा उक्त मुख्तारनामे के आधार पर कार्य करते हुए तारीख 10 अप्रैल, 1981 को दो विक्रय विलेख निष्पादित किए गए । उसके द्वारा जो पहला विक्रय विलेख निष्पादित

किया गया था, उसके द्वारा उसने वादांतर्गत संपत्तियों के एक भाग का तात्पर्यित रूप से अपने अप्राप्तवय पुत्रों को विक्रय किया था । विक्रय प्रतिफल 5,500/- रुपए दर्शाया गया था । सुदर्शन कुमार द्वारा वादांतर्गत संपत्तियों के शेष भाग की बाबत दूसरा विक्रय विलेख अपनी पत्नी के पक्ष में किया गया था । इस विक्रय विलेख में दर्शाया गया प्रतिफल 6,875/- रुपए था । अपीलार्थी द्वारा तारीख 10 मई, 1983 को दो अलग-अलग वाद संस्थित किए गए जिनमें एक सुदर्शन कुमार और उसके दो पुत्रों के विरुद्ध और दूसरा सुदर्शन कुमार और उसकी पत्नी के विरुद्ध था । दोनों वाद, जो मूल रूप से फाइल किए गए थे, प्रत्यर्थियों को अपीलार्थी के कब्जे में हस्तक्षेप करने और वाद संपत्तियों में अपीलार्थी के हिस्से का अन्य-संक्रामण करने से अवरुद्ध करने हेतु व्यादेश के लिए थे । अनुकल्पत:, कब्जे के लिए डिक्री पारित करने के लिए अनुरोध किया गया था । तारीख 23 नवंबर, 1985 को दोनों वादों में के वादपत्र को यह घोषणा करने के अनुतोष को सम्मिलित करते हुए संशोधित किया गया था कि मुख्तारनामा और विक्रय विलेख अकृत और शून्य थे । वादांतर्गत संपत्तियों पर एक ट्यूबवैल की बाबत अधिनिर्णीत प्रतिकर में अपीलार्थी के हिस्से के लिए एक धनीय डिक्री सम्मिलित करने का भी अनुरोध किया गया था । सुदर्शन कुमार ने अन्य प्रत्यर्थियों के साथ-साथ वाद का प्रतिवाद किया । सुदर्शन कुमार का यह पक्षकथन था कि वह मस्कट में नियोजित था और अच्छी-खासी कमाई कर रहा था । सुदर्शन कुमार का यह भी पक्षकथन था कि सुसंगत समय पर अपीलार्थी बेरोजगार था । उसने समय-समय पर स्वयं अपनी कमाई से अपीलार्थी को रकम भेजी । सुदर्शन कुमार ने वादांतर्गत संपत्तियों को खरीदने के लिए बातचीत की थी । उसके पक्षकथन के अनुसार, वाद संपत्तियां केवल उसके नाम पर खरीदी जानी थीं । उसकी दलील यह थी कि तारीख 12 अगस्त, 1976 और 19 अक्तूबर, 1976 को विक्रय विलेख निष्पादित करते समय अपीलार्थी ने क्रेता के रूप में सुदर्शन कुमार के साथ-साथ अपना नाम सम्मिलित करा लिया था । सुदर्शन कुमार के पक्षकथन के अनुसार, अपीलार्थी एक बेनामीदार था । संक्षेप में, सुदर्शन कुमार की दलील यह थी कि वह वादांतर्गत संपत्तियों का एकमात्र स्वामी है । उसकी यह भी दलील थी कि अपीलार्थी ने तारीख 15 अप्रैल, 1980

को उसे एक पत्र लिखकर उसके एकमात्र स्वामित्व को स्वीकार किया था और यही कारण है कि अपीलार्थी ने स्वेच्छा से तारीख 23 मार्च, 1980 का मुख्तारनामा निष्पादित किया था जिसे भारतीय रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1908 के अधीन सम्यक् रूप से रजिस्ट्रीकृत किया गया था, जिसके अधीन सुदर्शन कुमार को वादांतर्गत संपत्तियों की बाबत उसके अटर्नी के रूप में नियुक्त किया गया था । अत: सुदर्शन कुमार की दलील यह थी कि विक्रय विलेख वैध और विधिमान्य हैं । विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा फाइल किए गए वादों को खारिज कर दिया । विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि वादांतर्गत भूमि केवल सुदर्शन कुमार द्वारा क्रय की जानी आशयित थीं और यही कारण है कि मूल विक्रय विलेख सुदर्शन कुमार के कब्जे में थे । अपीलार्थी ने विचारण न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर जिला न्यायालय के समक्ष दो अपीलें फाइल कीं । इन अपीलों को भागत: मंजूर किया गया । जिला न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि सुदर्शन कुमार कठघरे में नहीं आया और सुदर्शन कुमार के अटर्नी द्वारा अपने साक्ष्य में किए गए अस्पष्ट कथन के सिवाय यह दर्शित करने के लिए अभिलेख पर कुछ प्रस्तुत नहीं किया गया कि वादांतर्गत संपत्तियों को अर्जित करने के लिए संपूर्ण विक्रय प्रतिफल उसके द्वारा संदत्त किया गया था । जिला न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि चूंकि सुदर्शन कुमार का पक्षकथन यह था कि अपीलार्थी को विदेश से धन भेजा गया था, इसलिए सुदर्शन कुमार के लिए दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत करना आसानी से संभव था जिससे यह दर्शित किया जा सकता कि धन अपीलार्थी को अंतरित किया गया था, जैसा कि उसके लिखित कथन में अभिकथित है । जिला न्यायालय ने यह स्वीकार किया कि अपीलार्थी और सुदर्शन कुमार दोनों वादांतर्गत संपत्तियों के संयुक्त स्वामी थे । यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि सुदर्शन कुमार, उसके पुत्र और उसकी पत्नी यह दर्शित करने के लिए कोई साक्ष्य प्रस्तुत करने में असफल रहे थे कि उस कीमत का संदाय किया गया था जो आक्षेपित विक्रय विलेखों में वर्णित है । अत: जिला न्यायालय ने तारीख 10 अप्रैल, 1981 के विक्रय विलेखों को अपास्त करते हुए संयुक्त कब्जा प्रदान करके वाद को डिक्रीत किया । प्रत्यर्थियों द्वारा उक्त निर्णय को चुनौती देते हुए उच्च

न्यायालय के समक्ष अलग-अलग द्वितीय अपीलें फाइल की गई । उच्च न्यायालय ने जिला न्यायालय के इस निष्कर्ष को कायम रखा कि सुदर्शन कुमार यह साबित करने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने में असफल रहा था कि उसने विदेश से अपीलार्थी को धन भेजा था । अत: उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी और सुदर्शन कुमार वादांतर्गत संपत्तियों के संयुक्त स्वामी हैं । उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि मुख्तारनामा विधिमान्य था । उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि तारीख 10 अप्रैल, 1981 को निष्पादित विक्रय विलेखों में वर्णित क्रमश: 5,500/- रुपए और 6,875/- रुपए विक्रय प्रतिफल अत्यधिक नहीं था और इसलिए ये रकम सुदर्शन कुमार के पुत्रों और सुदर्शन कुमार की पत्नी की पहुंच के बाहर नहीं थी । चूंकि उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा अपीलार्थी को वादांतर्गत संपत्तियों में आधे हिस्से का स्वामी होना अभिनिर्धारित किया था और चूंकि मुख्तारनामे को विधिमान्य होना अभिनिर्धारित किया था, इसलिए उसने सुदर्शन कुमार को तारीख 10 अप्रैल, 1981 के विक्रय विलेखों में प्रतिफल में अपीलार्थी के हिस्से का विक्रय विलेखों के निष्पादन की तारीख से 12 प्रतिशत ब्याज के साथ संदाय करने का निदेश दिया । अपीलार्थी द्वारा अपीलें फाइल करके उक्त निर्णय और आदेश को उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलें मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – किसी स्थावर संपत्ति का विक्रय एक कीमत के लिए होना चाहिए । कीमत भविष्य में संदेय हो सकती है । इसका भागत: संदाय किया जा सकता है और शेष भाग को भविष्य में संदेय बनाया जा सकता है । कीमत का संदाय संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 54 के अंतर्गत आने वाले विक्रय का एक आवश्यक भाग है । यदि किसी स्थावर संपत्ति के संबंध में विक्रय विलेख कीमत का संदाय किए बिना निष्पादित किया जाता है और यदि किसी भविष्य की तारीख पर कीमत के संदाय के लिए इसमें उपबंध नहीं किया जाता है, तो यह विधि की दृष्टि में कतई विक्रय नहीं है । इसका कोई विधिक प्रभाव नहीं है । इसलिए ऐसा विक्रय शून्य होगा । इससे स्थावर संपत्ति का अंतरण नहीं

होगा । प्रस्तुत मामले में दोनों विक्रय विलेखों में यह अभिलिखित है कि प्रतिफल का संदाय कर दिया गया है । प्रत्यर्थियों का यह विनिर्दिष्ट पक्षकथन है । वादपत्र, जो मूल रूप से फाइल किए गए थे, उनमें किया गया विनिर्दिष्ट पक्षकथन यह है कि विक्रय विलेख शून्य हैं क्योंकि वे प्रतिफल के बिना हैं । यह अभिवाक् किया गया है कि ये विक्रय विलेख बनावटी हैं क्योंकि क्रेताओं का, जो सुदर्शन कुमार के अप्राप्तवय पुत्र और पत्नी हैं, कोई उपार्जन सामर्थ्य नहीं था । सुदर्शन कुमार द्वारा विक्रय विलेखों में उल्लिखित कीमत के संदाय तथा सुसंगत समय पर उसकी पत्नी और अप्राप्तवय पुत्रों के उपार्जन सामर्थ्य के बारे में कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था । इसलिए विक्रय विलेखों को प्रतिफल के बिना निष्पादित किए जाने के कारण शून्य ठहराया जाना होगा । अत: इन विक्रय विलेखों से वादांतर्गत संपत्तियों में अपीलार्थी के आधे हिस्से पर किसी रीति में प्रभाव नहीं पड़ता है । वास्तव में, सुदर्शन कुमार द्वारा अपीलार्थी के मुख्तारनामे के आधार पर वादांतर्गत संपत्तियों को स्वयं अपनी पत्नी और अप्राप्तवय पुत्रों को बेचने के लिए किया गया संव्यवहार एक बनावटी संव्यवहार है । अत: तारीख 10 अप्रैल, 1981 के विक्रय विलेखों से सुदर्शन कुमार की पत्नी और बालकों पर कोई अधिकार, हक और हित प्रदत्त नहीं होगा क्योंकि विक्रय विलेखों को शून्य होने के कारण उनकी अनदेखी करनी होगी । अपीलार्थी के लिए वादपत्र का संशोधन करके विक्रय विलेखों के विषय में विनिर्दिष्ट रूप से घोषणा के लिए दावा करना आवश्यक नहीं था । इसका कारण यह है कि मूल रूप से जो वादपत्र फाइल किए गए थे, उनमें यह विनिर्दिष्ट अभिवचन किए गए थे कि विक्रय विलेख शून्य थे । कोई दस्तावेज जो शून्य है, उसे घोषणा का दावा करके चुनौती देने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि उक्त अभिवाक् को सांपार्श्विक कार्यवाहियों में भी उठाया जा सकता है और साबित किया जा सकता है । अत: संशोधन करके घोषणा के लिए सम्मिलित किए गए अनुरोधों पर परिसीमा के वर्जन का विवाद्यक कतई उद्भूत नहीं होता है । प्रत्यर्थियों द्वारा तारीख 16 नवंबर, 2021 को किए गए अतिरिक्त निवेदनों का कतई कोई सुसंगतता नहीं है । चूंकि उक्त विक्रय विलेखों के अधीन कोई हक अंतरित नहीं हुआ था, इसलिए अपीलार्थी का वादांतर्गत संपत्तियों में अविभाजित

आधा हिस्सा बना रहेगा । यही कारण है कि जिला न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए डिक्री पारित की थी कि अपीलार्थी वादांतर्गत संपत्तियों पर सुदर्शन कुमार के साथ-साथ संयुक्त कब्जे का हकदार है । अत: ऊपर अभिलिखित किए गए कारणों से, उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय और आदेश को अपास्त करते हुए जिला न्यायालय द्वारा पारित डिक्री प्रत्यावर्तित किए जाने योग्य है । (पैरा 15, 16 और 17)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2011 की सिविल अपील सं. 6989-6992.

1988 के आर. एस. ए. सं. 1930 और 1931 में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री नीरज कुमार जैन, उमंग शंकर और निर्मल सिंह बेरचीवाल

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री सुरजीत सिंह, ज्येष्ठ अधिवक्ता, रोशनलाल शर्मा, के. जी. भगत, विनीत भगत, (सुश्री) अर्चना मिढा और (सुश्री) मंजु भगत

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अभय एस. ओका ने दिया ।

न्या. ओका – इजाजत दी गई ।

अपीलार्थी केवल कृष्ण और उसके बड़े भाई सुदर्शन कुमार (प्रत्यर्थियों में से एक) ने तारीख 12 अगस्त, 1976 और 29 अक्तूबर, 1976 के विक्रय विलेखों के अधीन संपत्तियां, जो इन अपीलों की विषय-वस्तु हैं (संक्षेप में 'वादांतर्गत संपत्ति'), अर्जित की थी ।

2. अपीलार्थी केवल कृष्ण ने तारीख 28 मार्च, 1980 को सुदर्शन कुमार के पक्ष में एक मुख्तारनामा निष्पादित किया था । सुदर्शन कुमार द्वारा उक्त मुख्तारनामे के आधार पर कार्य करते हुए तारीख 10 अप्रैल, 1981 को दो विक्रय विलेख निष्पादित किए गए थे । उसके द्वारा पहला विक्रय विलेख निष्पादित किया गया था, जिसके द्वारा उसने वादांतर्गत संपत्तियों के एक भाग का तात्पर्यित रूप से अपने अप्राप्तवय पुत्रों को

विक्रय किया था । विक्रय प्रतिफल 5,500/- रुपए दर्शाया गया था । सुदर्शन कुमार द्वारा वादांतर्गत संपत्तियों के शेष भाग की बाबत दूसरा विक्रय विलेख अपनी पत्नी के पक्ष में किया गया था । इस विक्रय विलेख में दर्शाया गया प्रतिफल 6,875/- रुपए था । सुदर्शन कुमार, उसकी पत्नी और उसके पुत्र प्रत्यर्थी हैं ।

3. अपीलार्थी द्वारा तारीख 10 मई, 1983 को दो अलग-अलग वाद संस्थित किए गए थे । एक सुदर्शन कुमार और उसके दो पुत्रों के विरुद्ध था और दूसरा सुदर्शन कुमार और उसकी पत्नी के विरुद्ध था । दोनों वाद, जो मूल रूप से फाइल किए गए थे, प्रत्यर्थियों को अपीलार्थी के कब्जे में हस्तक्षेप करने और वाद संपत्तियों में अपीलार्थी के हिस्से का अन्य- संक्रामण करने से अवरुद्ध करने हेतु व्यादेश के लिए थे । अनुकल्पत:, कब्जे के लिए डिक्री पारित करने के लिए अनुरोध किया गया था । तारीख 23 नवंबर, 1985 को दोनों वादों में के वादपत्र को यह घोषणा करने के अनुतोष को सम्मिलित करते हुए संशोधित किया गया था कि मुख्तारनामा और विक्रय विलेख अकृत और शून्य थे । वादांतर्गत संपत्तियों पर एक ट्यूबवैल की बाबत अधिनिर्णीत प्रतिकर में अपीलार्थी के हिस्से के लिए एक धनीय डिक्री सम्मिलित करने का भी अनुरोध किया गया था ।

4. सुदर्शन कुमार ने अन्य प्रत्यर्थियों के साथ-साथ वाद का प्रतिवाद किया । सुदर्शन कुमार का यह पक्षकथन था कि वह मस्कट में नियोजित था और अच्छी-खासी कमाई कर रहा था । सुदर्शन कुमार का यह भी पक्षकथन था कि सुसंगत समय पर अपीलार्थी बेरोजगार था । उसने समय-समय पर स्वयं अपनी कमाई से अपीलार्थी को रकम भेजी । सुदर्शन कुमार ने वादांतर्गत संपत्तियों को खरीदने के लिए बातचीत की थी । उसके पक्षकथन के अनुसार, वाद संपत्तियां केवल उसके नाम पर खरीदी जानी थीं । उसकी दलील यह थी कि तारीख 12 अगस्त, 1976 और 19 अक्तूबर, 1976 को विक्रय विलेख निष्पादित करते समय अपीलार्थी ने क्रेता के रूप में सुदर्शन कुमार के साथ-साथ अपना नाम सम्मिलित करा लिया था । सुदर्शन कुमार के पक्षकथन के अनुसार, अपीलार्थी एक बेनामीदार था । संक्षेप में, सुदर्शन कुमार की दलील यह

थी कि वह वादांतर्गत संपत्तियों का एकमात्र स्वामी है । उसकी यह भी दलील थी कि अपीलार्थी ने तारीख 15 अप्रैल, 1980 को उसे एक पत्र लिखकर उसके एकमात्र स्वामित्व को स्वीकार किया था और यही कारण है कि अपीलार्थी ने स्वेच्छा से तारीख 23 मार्च, 1980 का मुख्तारनामा निष्पादित किया था जिसे भारतीय रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1908 के अधीन सम्यक् रूप से रजिस्ट्रीकृत किया गया था, जिसके अधीन सुदर्शन कुमार को वादांतर्गत संपत्तियों की बाबत उसके अटर्नी के रूप में नियुक्त किया गया था । अत: सुदर्शन कुमार की दलील यह थी कि विक्रय विलेख वैध और विधिमान्य हैं । गुणागुण के आधार पर इन दलीलों के अतिरिक्त सुदर्शन कुमार द्वारा यह दलील दी गई कि दोनों विक्रय विलेखों के संबंध में बाद में संशोधन के द्वारा सम्मिलित घोषणा के लिए अनुरोध परिसीमा द्वारा वर्जित थे । यह दलील दी गई कि यहां तक कि ट्यूबवैल की बाबत प्रतिकर में उसका हिस्सा देने के लिए किया गया अनुरोध भी वर्जित था ।

5. विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा फाइल किए गए वादों को खारिज कर दिया । विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि वादांतर्गत भूमि केवल सुदर्शन कुमार द्वारा क्रय की जानी आशयित थीं और यही कारण है कि मूल विक्रय विलेख सुदर्शन कुमार के कब्जे में थे । विचारण न्यायालय ने इस दलील को स्वीकार किया कि वह अनन्य स्वामी था और अपीलार्थी बेनामीदार था । विचारण न्यायालय ने मुख्तारनामा की वैधता और विधिमान्यता के संबंध में सुदर्शन कुमार की दलील और दोनों विक्रय विलेखों, जो चुनौती की विषयवस्तु थे, को कायम रखा । विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि चूंकि सुदर्शन कुमार वादांतर्गत संपत्तियों का एकमात्र स्वामी था, इसलिए अपीलार्थी किसी अनुतोष का हकदार नहीं है । विचारण न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि ट्यूबवैल की बाबत प्रतिकर में हिस्सा देने के लिए अनुरोध भी सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 2 के नियम 2 के उपबंधों द्वारा वर्जित है ।

6. अपीलार्थी ने विचारण न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर जिला न्यायालय के समक्ष दो अपीलें फाइल कीं । इन अपीलों को

भागत: मंजूर किया गया । जिला न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि सुदर्शन कुमार कठघरे में नहीं आया और सुदर्शन कुमार के अटर्नी द्वारा अपने साक्ष्य में किए गए अस्पष्ट कथन के सिवाय यह दर्शित करने के लिए अभिलेख पर कुछ प्रस्तुत नहीं किया गया कि वादांतर्गत संपत्तियों को अर्जित करने के लिए संपूर्ण विक्रय प्रतिफल उसके द्वारा संदत्त किया गया था । जिला न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि चूंकि सुदर्शन कुमार का पक्षकथन यह था कि अपीलार्थी को विदेश से धन भेजा गया था, इसलिए सुदर्शन कुमार के लिए दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत करना आसानी से संभव था जिससे यह दर्शित किया जा सकता कि धन अपीलार्थी को अंतरित किया गया था, जैसा कि उसके लिखित कथन में अभिकथित है । जिला न्यायालय ने यह स्वीकार किया कि अपीलार्थी और सुदर्शन कुमार दोनों वादांतर्गत संपत्तियों के संयुक्त स्वामी थे । जिला न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि सुदर्शन कुमार के पुत्र और सुदर्शन कुमार की पत्नी को इस बात की जानकारी थी कि अपीलार्थी का वादांतर्गत संपत्तियों में आधा हिस्सा है क्योंकि सुदर्शन कुमार द्वारा निष्पादित किए गए विक्रय विलेखों में इस आशय का एक परिवर्णन था । यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि सुदर्शन कुमार, उसके पुत्र और उसकी पत्नी यह दर्शित करने के लिए कोई साक्ष्य प्रस्तुत करने में असफल रहे थे कि उस कीमत का संदाय किया गया था जो आक्षेपित विक्रय विलेखों में वर्णित है । जिला न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि सुदर्शन कुमार ने अपनी पत्नी के पक्ष में विक्रय विलेख का निष्पादन करते समय उसने अपनी पत्नी को मेहर चंद नामक व्यक्ति की पुत्री के रूप में वर्णित किया था और उसे अपनी पत्नी के रूप में वर्णित नहीं किया गया था । जिला न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि तारीख 10 अप्रैल, 1981 के विक्रय विलेख प्रतिफल रहित थे । अत: जिला न्यायालय ने तारीख 10 अप्रैल, 1981 के विक्रय विलेखों को अपास्त करते हुए संयुक्त कब्जा प्रदान करके वाद को डिक्रीत किया । तथापि, ट्यूबवैल की बाबत प्रतिकर के लिए अनुरोध को नामंजूर कर दिया गया ।

7. प्रत्यर्थियों ने उच्च न्यायालय के समक्ष अलग-अलग द्वितीय

अपील फाइल कीं, जो आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा मंजूर की गई हैं । उच्च न्यायालय ने जिला न्यायालय के इस निष्कर्ष को कायम रखा कि सुदर्शन कुमार यह साबित करने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने में असफल रहा था कि उसने विदेश से अपीलार्थी को धन भेजा था । अत: उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी और सुदर्शन कुमार वादांतर्गत संपत्तियों के संयुक्त स्वामी हैं । उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि मुख्तारनामा विधिमान्य था । उच्च न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि विक्रय विलेखों की अविधिमान्यता की घोषणा के लिए वाद परिसीमा द्वारा वर्जित थे क्योंकि उक्त अनुरोध तारीख 23 नवंबर, 1985 को विलंब से सम्मिलित किए गए थे । उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि तारीख 10 अप्रैल, 1981 को निष्पादित विक्रय विलेखों में वर्णित क्रमश: 5,500/- रुपए और 6,875/- रुपए विक्रय प्रतिफल अत्यधिक नहीं था और इसलिए ये रकम सुदर्शन कुमार के पुत्रों और सुदर्शन कुमार की पत्नी की पहुंच के बाहर नहीं थी । चूंकि उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा अपीलार्थी को वादांतर्गत संपत्तियों में आधे हिस्से का स्वामी होना अभिनिर्धारित किया था और चूंकि मुख्तारनामे को विधिमान्य होना अभिनिर्धारित किया था, इसलिए उसने सुदर्शन कुमार को तारीख 10 अप्रैल, 1981 के विक्रय विलेखों में प्रतिफल में अपीलार्थी के हिस्से का विक्रय विलेखों के निष्पादन की तारीख से 12 प्रतिशत ब्याज के साथ संदाय करने का निदेश दिया । उक्त निर्णय और आदेश को इन अपीलों में आक्षेपित किया गया है ।

अपीलार्थी की दलीलें

8. अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री नीरज कुमार जैन ने यह दलील दी कि यहां तक कि उच्च न्यायालय ने यह स्वीकार किया था कि यह दर्शित करने के लिए कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था कि तारीख 10 अप्रैल, 1981 के विक्रय विलेखों के अधीन क्रेताओं ने सुदर्शन कुमार को प्रतिफल का संदाय किया था । उन्होंने यह दलील दी कि उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष कि प्रतिफल की रकम क्रेताओं की पहुंच से बाहर नहीं थी, किसी आधार के

बिना है क्योंकि सुदर्शन कुमार का यह पक्षकथन नहीं था कि उसकी पत्नी और अप्राप्तवय पुत्रों का सुसंगत समय पर आय का कोई स्रोत था ।

9. विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि यहां तक कि असंशोधित वादपत्रों में भी ये विनिर्दिष्ट प्रकथन किए गए थे कि विक्रय विलेख अकृत और शून्य थे क्योंकि ये प्रतिफल के बिना थे । उन्होंने यह उल्लेख किया कि असंशोधित वादपत्रों में यह एक विनिर्दिष्ट दलील अंतर्विष्ट थी कि विक्रय संव्यवहार बनावटी संव्यवहार थे । विनिर्दिष्ट रूप से यह अभिवाक् किया गया कि वादांतर्गत संपत्तियों का बाजार मूल्य 30,000/- रुपए से अधिक था और विक्रय विलेखों में दर्शायी गई कीमत पर वादांतर्गत संपत्तियों को बेचने का कोई कारण नहीं था । उन्होंने यह उल्लेख किया कि असंशोधित वादपत्रों में यह अभिवाक् किया गया था कि सुदर्शन कुमार के अप्राप्तवय पुत्रों और उसकी पत्नी का उपार्जन का कोई स्रोत नहीं था । उन्होंने यह दलील दी कि चूंकि विक्रय विलेख प्रतिफल के बिना थे, इसलिए ये शून्य थे । उन्होंने यह उल्लेख किया कि व्यादेश के लिए वाद अपीलार्थी द्वारा वादांतर्गत संपत्तियों के एक संयुक्त स्वामी के रूप में किए गए हक के अभिवाक् पर आधारित था और इसलिए अपीलार्थी वादांतर्गत संपत्तियों में अपने हिस्से का स्वामी बना रहा था क्योंकि विक्रय विलेख शून्य और बनावटी हैं । उन्होंने यह दलील दी कि वादपत्र का संशोधन करना और मुख्तारनामा तथा विक्रय विलेखों की अविधिमान्यता के संबंध में एक विनिर्दिष्ट घोषणा की ईप्सा करना आवश्यक नहीं था । उन्होंने यह उल्लेख किया कि उच्च न्यायालय ने परिसीमा के वर्जन पर निष्कर्ष अभिलिखित करते समय एक स्पष्ट गलती कारित की थी । उन्होंने आक्षेपित निर्णय के पैरा 28 की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया जो इस आधार पर अग्रसर होता है कि अपीलार्थी ने तारीख 12 मार्च, 1976 और 19 अक्तूबर, 1976 के विक्रय विलेखों की वैधता और विधिमान्यता को चुनौती दी है । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि विनिर्दिष्ट चुनौती तारीख 10 अप्रैल, 1981 के दो विक्रय विलेखों के लिए थी । उन्होंने यह दलील दी कि उच्च न्यायालय ने जिला न्यायालय द्वारा पारित की गई डिक्री में हस्तक्षेप करके गलती की थी ।

प्रत्यर्थियों की दलीलें

10. प्रत्यर्थियों का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री सुरजीत सिंह ने हमारा ध्यान अपीलार्थी द्वारा सुदर्शन कुमार को संबोधित तारीख 5 अप्रैल, 1985 के पत्र (प्रदर्श डी-3) की ओर आकर्षित किया । उन्होंने यह उल्लेख किया कि उक्त पत्र में अपीलार्थी ने यह स्वीकार किया था कि वादांतर्गत भूमि सुदर्शन कुमार द्वारा भेजी गई रकम में से खरीदी गई थीं और वास्तव में अपीलार्थी वादांतर्गत संपत्तियों का सुदर्शन कुमार के नाम में अंतरण करने के लिए सहमत हुआ था । अत: उन्होंने यह दलील दी कि अपीलार्थी का वादांतर्गत संपत्तियों में कोई अधिकार, हक और हित नहीं है । उन्होंने यह दलील दी कि मई, 1983 में फाइल किए गए वादों में अपीलार्थी ने विक्रय विलेखों और मुख्तारनामे के संबंध में किसी प्रकार की घोषणा के लिए अनुरोध नहीं किया था । उन्होंने यह उल्लेख किया कि केवल नवंबर, 1985 में तारीख 28 मार्च, 1980 के मुख्तारनामे और तारीख 10 अप्रैल, 1981 के विक्रय विलेखों के संबंध में घोषणा के लिए अनुरोधों को सम्मिलित करने के लिए वादपत्र को संशोधित किया गया था । अत: उन्होंने यह दलील दी कि घोषणा के लिए अनुरोध परिसीमा द्वारा वर्जित थे । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी कि विक्रय विलेखों की अविधिमान्यता या अकृतता के संबंध में घोषणा की प्राप्ति के बिना अपीलार्थी को कोई अनुतोष नहीं मिल सकता है । उन्होंने यह दलील दी कि अपीलार्थी ने कठघरे में आकर अपने ऊपर के आरंभिक भार का निर्वहन नहीं किया था । अत: उन्होंने यह दलील दी कि आक्षेपित निर्णय और आदेश में कोई हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है ।

11. इन अपीलों में तारीख 11 नवंबर, 2021 को निर्णय को आरक्षित रखने के पश्चात् प्रत्यर्थियों ने तारीख 16 नवंबर, 2021 को यह अभिवाक् करते हुए लिखित दलीलें फाइल कीं कि यह विवाद्यक कि क्या विक्रय विलेखों के अधीन क्रेता सद्भावी क्रेता थे या नहीं, अनावश्यक है । उन्होंने यह आग्रह किया कि अपीलार्थी द्वारा यह दलील नहीं दी गई थी कि सुदर्शन कुमार द्वारा गठित अटर्नी एक सक्षम साक्षी नहीं था ।

दलीलों पर विचार और कारण

12. हमने दलीलों पर सावधानीपूर्वक विचार किया है । प्रत्यर्थियों

द्वारा अपने लिखित कथन में बनाया गया मामला यह था कि सुदर्शन कुमार, जो विदेश में नियोजित था, ने अपने छोटे भाई अपीलार्थी को, जो उस समय बेरोजगार था, काफी सारी रकम भेजी थी । प्रत्यर्थियों का पक्षकथन यह था कि वर्ष 1976 के विक्रय विलेखों के अधीन वादांतर्गत संपत्तियां अर्जित करने के लिए संपूर्ण प्रतिफल का संदाय सुदर्शन कुमार ने किया था । प्रत्यर्थियों की दलील यह है कि वादांतर्गत संपत्तियों को केवल सुदर्शन कुमार के नाम पर खरीदने के बजाय अपीलार्थी ने विक्रय विलेखों में सुदर्शन कुमार के साथ-साथ अपना नाम सम्मिलित करा लिया था । यह एक स्वीकृत स्थिति है कि उक्त सुदर्शन कुमार कठघरे में नहीं आया था । इसके अतिरिक्त, जिला न्यायालय द्वारा अभिलिखित किया गया एक निष्कर्ष यह है कि सुदर्शन कुमार ने यह साबित करने के लिए कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया था कि उसके द्वारा विदेश से अपीलार्थी को अमूक रकम भेजी गई थीं । इस निष्कर्ष में उच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया गया था । उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा पारित उपांतरित डिक्री इस निष्कर्ष के आधार पर पारित की गई थी कि अपीलार्थी सुदर्शन कुमार वादांतर्गत संपत्तियों के संयुक्त स्वामी हैं क्योंकि सुदर्शन कुमार अपने इस दावें को सिद्ध करने में असफल रहा है कि वह वादांतर्गत संपत्तियों का एकमात्र स्वामी है । प्रत्यर्थियों ने आक्षेपित निर्णय और आदेश को चुनौती नहीं दी है और इसलिए यह निष्कर्ष अंतिम बन गया है कि अपीलार्थी और सुदर्शन कुमार वादांतर्गत संपत्तियों के संयुक्त स्वामी हैं । अत: प्रत्यर्थियों द्वारा लिए गए प्रदर्श डी-3 पर पत्र के अवलंब से उन्हें कोई सहायता नहीं मिलेगी ।

13. दो वादों में से एक में के असंशोधित वादपत्र की प्रति प्रति-शपथपत्र के साथ अभिलेख पर प्रस्तुत की गई है । असंशोधित वादपत्र के पैरा 3 में यह एक विनिर्दिष्ट अभिवाक् किया गया है कि तारीख 10 अप्रैल, 1981 के दोनों विक्रय विलेख अकृत और शून्य थे क्योंकि वे प्रतिफल के बिना थे । वादपत्र में विनिर्दिष्ट रूप से यह अभिवाक् किया गया है कि वादांतर्गत संपत्तियों को, जिनकी कीमत 30,000/- रुपए से अधिक थी, बहुत सस्ते में बेचा गया था । असंशोधित वादपत्र में व्यादेश

के लिए अनुरोध अपीलार्थी द्वारा वादांतर्गत संपत्तियों का सुदर्शन कुमार के साथ-साथ एक संयुक्त स्वामी के रूप में दावाकृत हक के आधार पर किया गया था ।

14. स्वीकृतत:, अभिलेख पर सुदर्शन कुमार द्वारा प्रस्तुत किया गया ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है कि उसके अप्राप्तवय पुत्रों का सुसंगत समय पर कोई आय का स्रोत था और उन्होंने उसे विक्रय विलेख में यथा उल्लिखित प्रतिफल का संदाय किया था । इसी प्रकार, यह दर्शित करने के लिए कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था कि सुदर्शन कुमार की पत्नी का कोई आय का स्रोत था और उसने विक्रय विलेख में उल्लिखित प्रतिफल का संदाय किया था । विचारण न्यायालय द्वारा विक्रय विलेखों की विधिमान्यता पर विनिर्दिष्ट रूप से एक विवाद्यक विरचित किया गया था । जिला न्यायालय द्वारा अभिलिखित यह एक विनिर्दिष्ट निष्कर्ष है कि यह दर्शित करने के लिए कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है कि सुदर्शन कुमार की पत्नी और अप्राप्तवय बालकों ने विक्रय विलेखों में दर्शाए गए प्रतिफल का संदाय किया था । वास्तव में, जिला न्यायालय के समक्ष यह अभिवाक् किया गया था कि सुदर्शन कुमार की पत्नी अपने माता-पिता से कुछ धन लेकर आई थी । जिला न्यायालय ने निर्णय के पैरा 11 में यह अभिनिर्धारित किया था कि उक्त दलील को साबित करने के लिए कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है । अत: जिला न्यायालय द्वारा उसी पैराग्राफ में अभिलिखित यह एक स्पष्ट निष्कर्ष है कि सुदर्शन कुमार ने मुख्तारनामा का फायदा उठाकर वादांतर्गत भूमि को स्वयं अपने अप्राप्तवय पुत्रों और पत्नी को किसी प्रतिफल के बिना अंतरित कर दिया था । उच्च न्यायालय ने तारीख 10 अप्रैल, 1981 के विक्रय विलेखों के अधीन प्रतिफल के संदाय के संबंध में प्रत्यर्थियों द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत करने में असफल रहने के संबंध में जिला न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं किया था । उच्च न्यायालय ने पैरा 29 में मात्र यह मत व्यक्त किया था कि 5,500/- रुपए और 6,875/- रुपए का विक्रय प्रतिफल अत्यधिक नहीं था और सुदर्शन कुमार के पुत्रों और पत्नी की पहुंच के बाहर नहीं था । शायद, उच्च न्यायालय ने इस बात की उपेक्षा की थी कि वह वर्ष 1981

के विक्रय विलेखों के एक मामले पर विचार कर रहा है और दो विक्रय विलेखों में से एक के अधीन क्रेता सुदर्शन कुमार के अप्राप्तवय पुत्र थे और यह भी अभिवाक् नहीं किया गया था कि उनका कोई आय का स्रोत था । ये स्थिति सुदर्शन कुमार द्वारा अपनी पत्नी के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख की है । इस प्रकार, निर्विवाद तथ्यात्मक स्थिति यह है कि प्रत्यर्थी यह साबित करने के लिए कोई साक्ष्य प्रस्तुत करने में असफल रहे थे कि अप्राप्तवय पुत्रों का कोई आय का स्रोत था और उन्होंने विक्रय विलेख के अधीन संदेय प्रतिफल का संदाय किया था । उन्होंने यह दर्शित करने के लिए कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया था कि सुदर्शन कुमार की पत्नी की कोई कमाई थी और उसने वास्तव में विक्रय विलेख में यथा उल्लिखित प्रतिफल का संदाय किया था ।

15. संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 54 निम्नलिखित है :–

> "**54. 'विक्रय' की परिभाषा** – 'विक्रय' ऐसी कीमत के बदले में स्वामित्व का अंतरण है जो दी जा चुकी हो या जिसके देने का वचन दिया गया हो या जिसका कोई भाग दे दिया गया हो और किसी भाग के देने का वचन दिया गया हो ।
>
> **विक्रय कैसे किया जाता है** – ऐसा अंतरण एक सौ रुपए और उससे अधिक के मूल्य की मूर्त स्थावर संपत्ति की दशा में, या किसी उत्तर-भाग या अन्य अमूर्त वस्तु की दशा में केवल रजिस्ट्रीकृत लिखत द्वारा किया जा सकता है ।
>
> एक सौ रुपए से कम मूल्य की मूर्त स्थावर संपत्ति की दशा में ऐसा अंतरण या तो रजिस्ट्रीकृत लिखत द्वारा या संपत्ति के परिदान द्वारा किया जा सकेगा ।
>
> मूर्त स्थावर संपत्ति का परिदान तब हो जाता है जब विक्रेता क्रेता या क्रेता द्वारा निर्दिष्ट व्यक्ति का संपत्ति पर कब्जा करा देता है ।
>
> **विक्रय-संविदा** – स्थावर संपत्ति की विक्रय-संविदा वह संविदा है कि उस स्थावर संपत्ति का विक्रय पक्षकारों के बीच तय हुए

निबंधनों पर होगा ।

वह स्वत: ऐसी संपत्ति में कोई हित या उस पर कोई भार स्पष्ट नहीं करती ।"

अत: किसी स्थावर संपत्ति का विक्रय एक कीमत के लिए होना चाहिए । कीमत भविष्य में संदेय हो सकती है । इसका भागत: संदाय किया जा सकता है और शेष भाग को भविष्य में संदेय बनाया जा सकता है । कीमत का संदाय संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 54 के अंतर्गत आने वाले विक्रय का एक आवश्यक भाग है । यदि किसी स्थावर संपत्ति के संबंध में विक्रय विलेख कीमत का संदाय किए बिना निष्पादित किया जाता है और यदि किसी भविष्य की तारीख पर कीमत के संदाय के लिए इसमें उपबंध नहीं किया जाता है, तो यह विधि की दृष्टि में कतई विक्रय नहीं है । इसका कोई विधिक प्रभाव नहीं है । इसलिए ऐसा विक्रय शून्य होगा । इससे स्थावर संपत्ति का अंतरण नहीं होगा ।

16. अब प्रस्तुत मामले पर आते हैं । दोनों विक्रय विलेखों में यह अभिलिखित है कि प्रतिफल का संदाय कर दिया गया है । प्रत्यर्थियों का यह विनिर्दिष्ट पक्षकथन है । वादपत्र, जो मूल रूप से फाइल किए गए थे, उनमें किया गया विनिर्दिष्ट पक्षकथन यह है कि विक्रय विलेख शून्य हैं क्योंकि वे प्रतिफल के बिना हैं । यह अभिवाक् किया गया है कि ये विक्रय विलेख बनावटी हैं क्योंकि क्रेताओं का, जो सुदर्शन कुमार के अप्राप्तवय पुत्र और पत्नी हैं, कोई उपार्जन सामर्थ्य नहीं था । सुदर्शन कुमार द्वारा विक्रय विलेखों में उल्लिखित कीमत के संदाय तथा सुसंगत समय पर उसकी पत्नी और अप्राप्तवय पुत्रों के उपार्जन सामर्थ्य के बारे में कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था । इसलिए विक्रय विलेखों को प्रतिफल के बिना निष्पादित किए जाने के कारण शून्य ठहराया जाना होगा । अत: इन विक्रय विलेखों से वादांतर्गत संपत्तियों में अपीलार्थी के आधे हिस्से पर किसी रीति में प्रभाव नहीं पड़ता है । वास्तव में, सुदर्शन कुमार द्वारा अपीलार्थी के मुख्तारनामे के आधार पर वादांतर्गत संपत्तियों को स्वयं अपनी पत्नी और अप्राप्तवय पुत्रों को बेचने के लिए किया गया संव्यवहार एक बनावटी संव्यवहार है । अत: तारीख 10 अप्रैल, 1981 के विक्रय विलेखों से सुदर्शन कुमार की पत्नी और बालकों पर कोई अधिकार, हक और हित प्रदत्त नहीं होगा क्योंकि विक्रय विलेखों

को शून्य होने के कारण उनकी अनदेखी करनी होगी । अपीलार्थी के लिए वादपत्र का संशोधन करके विक्रय विलेखों के विषय में विनिर्दिष्ट रूप से घोषणा के लिए दावा करना आवश्यक नहीं था । इसका कारण यह है कि मूल रूप से जो वादपत्र फाइल किए गए थे, उनमें यह विनिर्दिष्ट अभिवचन किए गए थे कि विक्रय विलेख शून्य थे । कोई दस्तावेज जो शून्य है, उसे घोषणा का दावा करके चुनौती देने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि उक्त अभिवाक् को सांपार्श्विक कार्यवाहियों में भी उठाया जा सकता है और साबित किया जा सकता है । अत: संशोधन करके घोषणा के लिए सम्मिलित किए गए अनुरोधों पर परिसीमा के वर्जन का विवाद्यक कतई उद्भूत नहीं होता है । प्रत्यर्थियों द्वारा तारीख 16 नवंबर, 2021 को किए गए अतिरिक्त निवेदनों का कतई कोई सुसंगतता नहीं है ।

17. चूंकि उक्त विक्रय विलेखों के अधीन कोई हक अंतरित नहीं हुआ था, इसलिए अपीलार्थी का वादांतर्गत संपत्तियों में अविभाजित आधा हिस्सा बना रहेगा । यही कारण है कि जिला न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए डिक्री पारित की थी कि अपीलार्थी वादांतर्गत संपत्तियों पर सुदर्शन कुमार के साथ-साथ संयुक्त कब्जे का हकदार है । अत: ऊपर अभिलिखित किए गए कारणों से, उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय और आदेश को अपास्त करते हुए जिला न्यायालय द्वारा पारित डिक्री प्रत्यावर्तित किए जाने योग्य है ।

18. तद्नुसार, ये अपीलें मंजूर की जाती हैं । उच्च न्यायालय का आक्षेपित निर्णय अपास्त किया जाता है और अपर जिला न्यायाधीश, रोपण, पंजाब द्वारा सिविल अपील सं. 31/256/23.07.1986 और सिविल अपील सं. 34/257/23.07.1986 में तारीख 21 मई, 1988 को पारित किए गए सामान्य निर्णय और आदेश को तद्द्वारा प्रत्यावर्तित किया जाता है ।

19. खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

जस.

[2022] 1 उम. नि. प. 18

फूल सिंह

बनाम

मध्य प्रदेश राज्य

[2021 की दांडिक अपील सं. 1520]

1 दिसंबर, 2021

न्यायमूर्ति एम. आर. शाह और न्यायमूर्ति संजीव खन्ना

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 376 – बलात्संग – अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि – संधार्यता – जहां मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर बलात्संग की शिकार-अभियोक्त्री का परिसाक्ष्य विश्वसनीय और भरोसेमंद पाया गया हो और घटना के आरंभ से ही वह अपने कथन पर अडिग रही हो और अभियोजन के पक्षकथन का पूर्णत: समर्थन किया हो, वहां अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर उसकी संपुष्टि के बिना भी अभियुक्त को दोषसिद्ध किया जा सकता है ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 376 – बलात्संग – दोषसिद्धि – अभियोक्त्री के शरीर पर कोई बाह्य या आंतरिक क्षति न पाया जाना – सहमतिजन्य पक्षकार – जहां बलात्संग की शिकार-अभियोक्त्री के शरीर पर कोई बाह्य या आंतरिक क्षति न पाई गई हो, इसका यह अर्थ नहीं है कि वह एक सहमति का मामला हो सकता है, जबकि प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा विचारण के दौरान दूर-दूर तक उससे ऐसा कोई प्रश्न तक न पूछा गया हो, वहां अभियोक्त्री को सहमतिजन्य पक्षकार नहीं कहा जा सकता है और अभियुक्त की दोषसिद्धि उचित है ।

इस मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि तारीख 9 अगस्त, 1999 की मध्यवर्ती रात्रि में और जब विपदग्रस्त/अभियोक्त्री का पति एक अन्य गांव में गया हुआ था और वह अकेली थी तथा अपने कमरे में सो रही थी, अभियुक्त दीवार फांदकर अभियोक्त्री के कमरे में घुस गया ।

अभियुक्त को देखकर अभियोक्त्री जाग गई और बल्ब की रोशनी में उसने अभियुक्त को पहचान लिया । इसके पश्चात् अभियुक्त ने अभियोक्त्री का मुंह दबाया और बलात्संग किया तथा उसके पश्चात् वह दीवार फांदकर भाग गया । अभियोक्त्री ने इस घटना को अपनी जेठानी और सास को बताया किंतु उन्होंने उस पर विश्वास नहीं किया । इसके विपरीत, उसकी पिटाई की गई । इसके पश्चात् अभियोक्त्री ने अपने दांपत्य गृह के अन्य सदस्यों को भी यह घटना बताई किंतु किसी ने कोई कार्रवाई नहीं की । अभियोक्त्री ने अपने पैतृक गृह में सूचना भेजी । इसके पश्चात्, उसका चाचा और अन्य व्यक्ति उसके दांपत्य गृह आए और अभियोक्त्री ने उन्हें घटना के बारे में बताया । वे उसे दांपत्य गृह ले आए । इसके पश्चात्, तारीख 12 अगस्त, 1999 को एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई । उसे चिकित्सीय परीक्षण के लिए भेजा गया । अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात्, अभियुक्त के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आरोप पत्र फाइल किया गया । मामला विद्वान् सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया । अभियुक्त ने अन्यत्र उपस्थित होने का अभिवाक् किया और कहा कि वह घटना के दिन इंदौर गया हुआ था और उस दिन गांव में नहीं था । उसने प्रतिरक्षा साक्षी की प्रति. सा. 1 के रूप में परीक्षा कराई । विद्वान् विचारण न्यायालय ने तर्कपूर्ण कारण देते हुए अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् और प्रति. सा. 1 पर विश्वास नहीं किया । इसके पश्चात् अभिलेख पर के साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया । अपीलार्थी-अभियुक्त द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई । उच्च न्यायालय द्वारा उक्त अपील को खारिज कर दिया गया । उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर अभियुक्त द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभियोक्त्री ने अभियोजन के पक्षकथन का पूरी तरह से

समर्थन किया है । वह आरंभ से ही अडिग रही थी । ऐसी किसी बात का विनिर्दिष्ट रूप से उल्लेख नहीं किया गया है कि क्यों अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य पर विश्वास न किया जाए । गहन प्रतिपरीक्षा के पश्चात् भी वह अपनी उस बात पर अडिग रही थी जो उसने कही थी और अभियोजन के पक्षकथन का पूरी तरह से समर्थन किया था । हमें अभियोक्त्री की विश्वसनीयता और/या सत्यता पर संदेह करने का कोई कारण दिखाई नहीं पड़ता है । जहां तक अभियुक्त की ओर से दी गई इस दलील का संबंध है कि किसी अन्य स्वतंत्र साक्षी की परीक्षा नहीं की गई थी और/या अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया था तथा अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता है, पूर्वोक्त दलील में कोई सार नहीं है । (पैरा 5.1)

अब जहां तक अभियुक्त की ओर से दी गई इस दलील का संबंध है कि चूंकि अभियोक्त्री के शरीर पर कोई बाह्य या आंतरिक क्षतियां नहीं पाई गई थी और इसलिए यह एक सहमति का मामला हो सकता है, पूर्वोक्त दलील में कतई कोई सार नहीं है । अभियोक्त्री से उसकी प्रतिपरीक्षा में दूर-दूर तक भी ऐसा कोई प्रश्न नहीं पूछा गया था । इसलिए पूर्वोक्त दलील को एकदम नामंजूर किया जाना चाहिए । अब जहां तक अभियुक्त की ओर से दी गई इस दलील का संबंध है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने प्रति. सा. 1 पर विश्वास न करके और अन्यत्र उपस्थित होने की इस प्रतिरक्षा पर विश्वास न करके गलती की है कि घटना की रात्रि को वह इंदौर गया हुआ था और गांव में मौजूद नहीं था, प्रारंभ में यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा प्रति. सा. 1 पर विश्वास न करने और अभियुक्त द्वारा अन्यत्र उपस्थित होने के लिए किए गए अभिवाक् पर विश्वास न करने के लिए तर्कपूर्ण कारण दिए गए हैं । प्रति. सा. 1 अभियुक्त के गांव का ही रहने वाला है । इंदौर जाने के कारण को न्यायालय द्वारा अविश्वसनीय माना गया है । अभियुक्त तथा प्रतिरक्षा पक्ष की ओर से यह पक्षकथन था कि चूंकि बाबूलाल नामक व्यक्ति के साथ दुर्घटना हो गई थी, इसलिए प्रति. सा. 1 और अभियुक्त बाबूलाल को लेने के लिए इंदौर गए थे और वे उस रात्रि को इंदौर में रुके थे । तथापि, यह पाया गया था कि बाबूलाल को क्षति दो माह पूर्व पहुंची थी ।

प्रतिरक्षा पक्ष ने अस्पताल के अभिलेख को प्रस्तुत नहीं किया था या उस अस्पताल के डाक्टर या कर्मचारी की परीक्षा नहीं कराई थी, जहां बाबूलाल को उपचार के लिए ले जाया गया था । प्रतिरक्षा पक्ष के अनुसार, वे इंदौर में तुलसीराम के मकान में ठहरे थे किंतु उक्त तुलसीराम की परीक्षा नहीं कराई गई थी । यहां तक कि बाबूलाल की भी परीक्षा नहीं कराई गई थी । इन परिस्थितियों में, विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियुक्त द्वारा अन्यत्र उपस्थित होने के किए गए अभिवाक् पर ठीक ही विश्वास नहीं किया था और प्रति. सा. 1 पर भी ठीक ही विश्वास नहीं किया था । विद्वान् विचारण न्यायालय ने साक्ष्य का मूल्यांकन करने पर विनिर्दिष्ट रूप से यह मत व्यक्त किया था कि प्रति. सा. 1 के अभिसाक्ष्य से कोई विश्वास प्रेरित नहीं होता है । अब जहां तक अभियुक्त की ओर से दी गई इस दलील का संबंध है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में तीन दिन का विलंब हुआ था, प्रारंभ में यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि अभियोक्त्री की ओर से यह विनिर्दिष्ट और सतत पक्षकथन था कि घटना घटने के तुरंत पश्चात् उसने अपनी जेठानी और सास को घटना के बारे में बताया था किंतु उन्होंने अभियोक्त्री पर विश्वास नहीं किया । इसके विपरीत, उन्होंने उसकी पिटाई की । यहां तक कि उसके दांपत्य-गृह के किसी सदस्य ने भी अभियोक्त्री का समर्थन नहीं किया और इसलिए उसने अपने पैतृक-गृह में संदेश भेजा और उसके पश्चात् उसे उसके पैतृक-गृह लाया गया तथा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई । यह बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण है कि इस मामले में जेठानी और सास ने स्त्री होते हुए अभियोक्त्री का समर्थन नहीं किया । इसके विपरीत, उसे मजबूर होकर अपने दांपत्य-गृह जाना पड़ा और उसके पश्चात् प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी । कम से कम जेठानी और सास को स्त्री होते हुए अभियोक्त्री का समर्थन करना चाहिए था । इसलिए जब ऐसी स्थिति में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में विलंब हुआ था, तो ऐसे विलंब का फायदा अभियुक्त को, जो नातेदार था, नहीं दिया जा सकता है । अब जहां तक भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के परंतुक पर विचार करते हुए दंडादेश को कम करने के लिए अभियुक्त की ओर से किए गए अनुरोध का संबंध है, भारतीय दंड संहिता की धारा 376, संशोधन से पूर्व, के अनुसार न्यूनतम दंडादेश सात वर्ष होगा । तथापि, परंतुक के अनुसार, न्यायालय निर्णय

में वर्णित किए गए पर्याप्त और विशेष कारणों से सात वर्ष से कम अवधि के कारावास का दंडादेश अधिरोपित कर सकेगा । सात वर्ष से कम अवधि के कारावास का दंडादेश अधिरोपित करने के लिए कोई आपवादिक और/या विशेष कारण सिद्ध नहीं किए गए हैं । इसके विपरीत, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में यह कहा जा सकता है कि अभियुक्त पर केवल न्यूनतम सात वर्ष का कठोर कारावास अधिरोपित करके नरमी बरती गई है । विपदग्रस्त नातेदार है । दांपत्य-गृह में परिवार के किसी सदस्य ने उसका समर्थन नहीं किया था और उसे आघात सहना पड़ा था । वह अपने पैतृक-गृह में जाने के लिए मजबूर हुई थी और उसके पश्चात् वह प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करा सकी थी । अभियुक्त एक मिथ्या मामले/अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् के साथ आया था जिसे निचले न्यायालयों द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है । इन परिस्थितियों में, दंडादेश को कम करने और/या सात वर्ष के कठोर कारावास को सात वर्ष के साधारण कारावास में संपरिवर्तित करने के अपीलार्थी के अनुरोध को स्वीकार नहीं किया जाता है और इसे नामंजूर किया जाता है । (पैरा 7, 8, 9 और 10)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[2020]	(2020) 10 एस. सी. सी. 573 : **गणेशन** बनाम **राज्य** ;	4.2
[2020]	(2020) 3 एस. सी. सी. 443 : **संतोष प्रसाद** बनाम **बिहार राज्य ;**	4.2
[2019]	(2019) 16 एस. सी. सी. 759 : **हिमाचल प्रदेश राज्य** बनाम **मांगा सिंह** ;	4.2
[2019]	(2019) 11 एस. सी. सी. 575 : **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)** बनाम **पंकज चौधरी** ;	4.2
[2018]	(2018) 18 एस. सी. सी. 34 : **श्याम सिंह** बनाम **हरियाणा राज्य** ।	5.4

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2021 की दांडिक अपील सं. 1520.

2000 की दांडिक अपील सं. 870 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, इंदौर के तारीख 5 सितंबर, 2019 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री आदित्य गग्गर

प्रत्यर्थी की ओर से श्री अभय प्रकाश सहाय, अपर महाधिवक्ता

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एम. आर. शाह ने दिया ।

न्या. शाह – 2000 की दांडिक अपील सं. 875 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, इंदौर द्वारा तारीख 5 सितंबर, 2019 को पारित किए गए उस आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर मूल अभियुक्त ने यह फाइल की है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी-अभियुक्त द्वारा फाइल की गई उक्त अपील खारिज कर दी थी और 2000 के सेशन विचारण सं. 5 में विद्वान् सेशन न्यायाधीश, देवास (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'विद्वान् विचारण न्यायालय' कहा गया है) द्वारा अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध और उसे सात वर्ष का कठोर कारावास भुगतने और 500/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने तथा जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने के अनुबंध सहित दंडादिष्ट करते हुए तारीख 31 जुलाई, 2000 को पारित किए गए दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश की पुष्टि की थी ।

2. अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार, तारीख 9 अगस्त, 1999 की मध्यवर्ती रात्रि में और जब विपदग्रस्त/अभियोक्त्री का पति एक अन्य गांव में गया हुआ था और वह अकेली थी तथा अपने कमरे में सो रही थी, अभियुक्त दीवार फांदकर अभियोक्त्री के कमरे में घुस गया । अभियुक्त को देखकर अभियोक्त्री जाग गई और बल्ब की रोशनी में उसने अभियुक्त को पहचान लिया । इसके पश्चात् अभियुक्त ने अभियोक्त्री का मुंह दबाया और बलात्संग किया तथा उसके पश्चात् वह

दीवार फांदकर भाग गया । अभियोक्त्री के पक्षकथन के अनुसार, उसने इस घटना को अपनी जेठानी और सास को बताया किंतु उन्होंने उस पर विश्वास नहीं किया । इसके विपरीत, उसकी पिटाई की गई । इसके पश्चात् अभियोक्त्री ने अपने दांपत्य गृह के अन्य सदस्यों को भी यह घटना बताई किंतु किसी ने कोई कार्रवाई नहीं की । अभियोक्त्री ने अपने पैतृक गृह में सूचना भेजी । इसके पश्चात्, उसका चाचा और अन्य व्यक्ति उसके दांपत्य गृह आए और अभियोक्त्री ने उन्हें घटना के बारे में बताया । वे उसे दांपत्य गृह ले आए । इसके पश्चात्, तारीख 12 अगस्त, 1999 को एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई । उसे चिकित्सीय परीक्षण के लिए भेजा गया । अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात्, अभियुक्त के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आरोप पत्र फाइल किया गया । मामला विद्वान् सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया । अभियुक्त ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और इसलिए उसका पूर्वोक्त अपराध के लिए विचारण किया गया ।

2.1 अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त के विरुद्ध आरोप को साबित करने के लिए छह साक्षियों की परीक्षा की, जिनमें वह डाक्टर जिसने तारीख 12 अगस्त, 1999 को अभियोक्त्री का परीक्षण किया था, अभियोक्त्री-अभि. सा. 3 और अन्वेषक अधिकारी-अभि. सा. 6 सम्मिलित थे । साक्षियों में से एक साक्षी राजाराम-अभि. सा. 2 ने अभियोजन के वृत्तांत का समर्थन नहीं किया और उसे पक्षद्रोही घोषित किया गया । अभियुक्त ने अन्यत्र उपस्थित होने का अभिवाक् किया और उसके अनुसार वह घटना के दिन इंदौर गया था और वह उस दिन गांव में नहीं था । उसने प्रतिरक्षा साक्षी की प्रति. सा. 1 के रूप में परीक्षा कराई । विद्वान् विचारण न्यायालय ने तर्कपूर्ण कारण देते हुए अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् और प्रति. सा. 1 पर विश्वास नहीं किया । इसके पश्चात् अभिलेख पर के साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने तारीख 31 जुलाई, 2000 के निर्णय और आदेश द्वारा अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और अपीलार्थी को इसमें ऊपर वर्णित अनुसार दंडादिष्ट किया ।

2.2 अपीलार्थी-अभियुक्त ने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा उक्त अपील को खारिज कर दिया । इसलिए अभियुक्त की ओर से यह अपील फाइल की गई है ।

3. अभियुक्त की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ता, श्री आदित्य गग्गर ने जोरदार रूप से यह दलील दी कि प्रस्तुत मामले में चिकित्सीय साक्ष्य से अभियोक्त्री के पक्षकथन का समर्थन नहीं होता है । यह दलील दी गई कि डाक्टर ने अपने अभिसाक्ष्य मे विनिर्दिष्ट रूप से यह कथन किया था कि परीक्षण करने पर यह पाया गया था कि अभियोक्त्री के शरीर पर कोई बाह्य या आंतरिक क्षतियां नहीं पाई गई थी ।

3.1 यह भी दलील दी गई कि इसलिए अभियोजन का पक्षकथन एकमात्र रूप से केवल अभियोक्त्री के अभिसाक्ष्य पर आधारित है । यह दलील दी गई कि किसी अन्य स्वतंत्र साक्षी की परीक्षा नहीं की गई थी और/या अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया था ।

3.2 यह भी दलील दी गई कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में विलंब हुआ था । यह दलील दी गई कि घटना तारीख 9 अगस्त, 1999 को घटी थी और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट तारीख 12 अगस्त, 1999 को अर्थात् तीन दिन की अवधि के पश्चात् दर्ज कराई गई थी । यह दलील दी गई कि इसलिए अभियोजन के वृत्तांत की चिकित्सीय साक्ष्य से कोई संपुष्टि नहीं होती है और क्षतियों के किसी चिह्न के अभाव में इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि यदि यह मान भी लिया जाए कि मैथुन किया गया था तो यह यह पूर्णत: सहमतिजन्य था ।

3.3 आगे यह भी दलील दी गई कि विद्वान् विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय दोनों ने प्रति. सा. 1 पर विश्वास न करके तात्विक रूप से गलती की थी, जिसने स्पष्ट रूप से यह कथन किया था कि अभिकथित घटना के दिन/रात्रि को अभियुक्त गांव में नहीं था और प्रति. सा. 1 के साथ इंदौर में था ।

3.4 उपरोक्त दलीलें देते हुए इस अपील को मंजूर करने का अनुरोध किया गया । अनुकल्पतः, यह प्रार्थना की गई कि दंडादेश को कम करके पहले ही भुगत ली गई अवधि तक कर दिया जाए और यह निवेदन किया गया कि अभियुक्त ने अब तक निचले न्यायालयों द्वारा अधिरोपित सात वर्ष के दंडादेश के विरुद्ध अढाई वर्ष का दंडादेश भुगत लिया है । यह भी अनुरोध किया गया कि सात वर्ष के कठोर कारावास को सात वर्ष के साधारण कारावास में संपरिवर्तित कर दिया जाए ।

4. प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अपर महाधिवक्ता, श्री अभय प्रकाश सहाय द्वारा इस अपील का जोरदार रूप से विरोध किया गया ।

4.1 यह दलील दी गई कि प्रस्तुत मामले में विद्वान् विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय दोनों ने अभियोक्त्री/विपदग्रस्त के एकमात्र परिसाक्ष्य का अवलंब लेकर अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध के लिए ठीक ही दोषसिद्ध किया है । यह दलील दी गई कि इसलिए अभियोक्त्री की विश्वसनीयता पर संदेह करने का कोई कारण नहीं है । यह दलील दी गई कि यहां तक कि अभियोक्त्री की प्रतिपरीक्षा के समय उससे इस बारे में कोई प्रश्न नहीं पूछा गया था कि अभियुक्त के विरुद्ध एक मिथ्या मामला फाइल किया गया है ।

4.2 यह दलील दी गई कि जब एक बार यह पाया जाता है कि अभियोक्त्री विश्वसनीय और भरोसेमंद है, उस मामले में एकमात्र साक्षी/विपदग्रस्त के अभिसाक्ष्य का अवलंब लेते हुए भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन बलात्संग के अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जा सकता है । **गणेशन** बनाम **राज्य**[1]**; संतोष प्रसाद** बनाम **बिहार राज्य**[2]**; हिमाचल प्रदेश राज्य** बनाम **मांगा सिंह**[3] और **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी**

---

[1] (2020) 10 एस. सी. सी. 573.

[2] (2020) 3 एस. सी. सी. 443.

[3] (2019) 16 एस. सी. सी. 759.

राज्यक्षेत्र, दिल्ली) बनाम **पंकज चौधरी**[1] वाले मामलों में इस न्यायालय के विनिश्चयों का अवलंब लिया गया ।

4.3 यह दलील दी गई कि **पंकज चौधरी** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा विनिर्दिष्ट रूप से यह मत व्यक्त किया गया था और अभिनिर्धारित किया गया था कि अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर, यदि यह विश्वासोत्पादक है, दोषसिद्धि कायम की जा सकती है और विधि का ऐसा कोई नियम या परिपाटी नहीं है कि अभियोक्त्री के साक्ष्य का अवलंब संपुष्टि के बिना नहीं लिया जा सकता है ।

4.4 अब जहां तक डाक्टर-अभि. सा. 1 के अभिसाक्ष्य का अवलंब लेकर अभियुक्त की ओर से दी गई इस दलील का संबंध है कि अभियोक्त्री के शरीर पर कोई बाह्य या आंतरिक क्षतियां नहीं पाई गई थीं और इसलिए अभियोजन के पक्षकथन पर विश्वास नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि इसका किसी संपुष्टिकारी साक्ष्य से समर्थन नहीं होता है और/या यह उपधारणा की जानी चाहिए कि यह मामला सहमति का मामला है, यह दलील दी गई कि सबसे बड़ी बात यह है कि अभियोक्त्री का चिकित्सीय परीक्षण घटना के तीन दिन के पश्चात् किया गया था । यह दलील दी गई कि अभियोक्त्री प्रारंभ से ही अपने साक्ष्य पर अडिग रही है और यहां तक कि प्रतिपरीक्षा में भी वह उस बात पर अडिग रही थी, जो उसने कही थी और उसने अभियोजन के पक्षकथन का पूरी तरह से समर्थन किया था । इसलिए यह दलील दी गई कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में और यहां तक कि अभियोक्त्री के शरीर पर किसी बाह्य या आंतरिक क्षतियों के अभाव में भी दोषसिद्धि कायम रखी जा सकती है ।

4.5 यह भी दलील दी गई कि यहां तक कि अभियोक्त्री की प्रतिपरीक्षा में ऐसा कोई सुझाव नहीं दिया गया था कि यह एक सहमति का मामला था ।

---

[1] (2019) 11 एस. सी. सी. 575.

4.6 राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अपर महाधिवक्ता द्वारा यह भी दलील दी गई कि प्रस्तुत मामले में एक ओर तो अभियुक्त ने यह अभिवाक् किया है कि यह सहमति का मामला था और दूसरी ओर अभियुक्त ने अन्यत्र उपस्थित होने का अभिवाक् किया था और वह घटना की तारीख/रात्रि को गांव में नहीं था । यह दलील दी गई कि दोनों बातें परस्पर विरोधाभासी हैं । यह दलील दी गई कि किसी भी दशा में विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा प्रति. सा. 1 पर विश्वास न करने के लिए तर्कपूर्ण कारण दिए गए हैं और विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा विनिर्दिष्ट रूप से यह मत व्यक्त किया गया है कि प्रति. सा. 1 के अभिसाक्ष्य से कोई विश्वास प्रेरित नहीं होता है ।

4.7 उपरोक्त दलीलें देने और पूर्वोक्त विनिश्चयों का अवलंब लेते हुए यह अनुरोध किया गया कि इस अपील को खारिज कर दिया जाए ।

5. हमने संबंधित पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों को विस्तारपूर्वक सुना । हमने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध करते हुए पारित किए गए दोषसिद्धि के निर्णय और आदेश तथा उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश का परिशीलन किया ।

5.1 प्रारंभ में, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि प्रस्तुत मामले में अभियोक्त्री ने अभियोजन के पक्षकथन का पूरी तरह से समर्थन किया है । वह आरंभ से ही अडिग रही थी । ऐसी किसी बात का विनिर्दिष्ट रूप से उल्लेख नहीं किया गया है कि क्यों अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य पर विश्वास न किया जाए । गहन प्रतिपरीक्षा के पश्चात् भी वह अपनी उस बात पर अडिग रही थी जो उसने कही थी और अभियोजन के पक्षकथन का पूरी तरह से समर्थन किया था । हमें अभियोक्त्री की विश्वसनीयता और/या सत्यता पर संदेह करने का कोई कारण दिखाई नहीं पड़ता है । जहां तक अभियुक्त की ओर से दी गई इस दलील का संबंध है कि किसी अन्य स्वतंत्र साक्षी की परीक्षा नहीं की गई थी और/या अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया था तथा

अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता है, पूर्वोक्त दलील में कोई सार नहीं है ।

5.2 **गणेशन** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था और अभिनिर्धारित किया था कि जब अभियोक्त्री का अभिसाक्ष्य भरोसेमंद, निष्कलंक, विश्वसनीय पाया जाता है और उसका साक्ष्य उत्तम गुणवत्ता का है, तो विपदग्रस्त/अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है । पूर्वोक्त मामले में, इस न्यायालय के पास अभियोक्त्री के एकमात्र साक्ष्य के आधार पर की गई दोषसिद्धि के इस न्यायालय के अनेक निर्णयों पर विचार करने का अवसर आया था । पैरा 10.1 से 10.3 में निम्नलिखित मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया था :–

> "10.1 क्या लैंगिक उत्पीड़न, लज्जाभंग आदि के मामलों में अभियोक्त्री के एकमात्र साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है या नहीं, विजय **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य [(2010) 8 एस. सी. सी. 191] वाले मामले के पैरा 9 से 14 में निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया है –
>
> > '9. महाराष्ट्र राज्य **बनाम** चंद्रप्रकाश केवलचंद जैन [(1990) 1 एस. सी. सी. 550] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि कोई स्त्री, जो लैंगिक हमले की शिकार है, वह अपराध में सह-अपराधी नहीं होती है अपितु अन्य व्यक्ति की वासना का शिकार होती है और इसलिए उसके साक्ष्य का परीक्षण उसी प्रकार के संदेह से नहीं करना चाहिए जैसा कि सह-अपराधी के साक्ष्य का किया जाता है । इस न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया था –
> >
> > > '16. किसी यौन अपराध की अभियोक्त्री को सह-अभियुक्त के समान ही नहीं रखा जा सकता । वह वास्तव में अपराध की शिकार होती है । साक्ष्य अधिनियम में कहीं पर भी यह नहीं कहा गया है कि उसके साक्ष्य को तब तक स्वीकार नहीं किया जा सकता

जब तक कि तात्विक विशिष्टियों पर इसकी संपुष्टि न हुई हो । वह निस्संदेह धारा 118 के अधीन एक सक्षम साक्षी है और उसके साक्ष्य को वही महत्व दिया जाना चाहिए जो कि शारीरिक हिंसा के मामलों में किसी क्षतिग्रस्त को दिया जाता है । उसी प्रकार की सावधानी और सतर्कता उसके साक्ष्य के मूल्यांकन में बरती जानी चाहिए जैसी कि किसी क्षतिग्रस्त परिवादी या साक्षी के मामले में बरती जाती है और इससे अधिक नहीं । जो आवश्यक है वह यह है कि न्यायालय को इस तथ्य के प्रति सचेत रहना चाहिए कि यह ऐसे व्यक्ति के साक्ष्य पर चर्चा कर रहा है जो उसके द्वारा लगाए गए आरोप के परिणाम में हितबद्ध है । यदि न्यायालय इस बात को विचार में रखता है और इस बाबत समाधान हो जाता है कि यह अभियोक्त्री के साक्ष्य के आधार पर कार्रवाई कर सकता है, तब धारा 114 के दृष्टांत (ख) के समान साक्ष्य अधिनियम में ऐसा कोई विधि का नियम या परिपाटी सम्मिलित नहीं की गई है जो इसकी संपुष्टि की अपेक्षा करे । यदि किसी कारण से न्यायालय को अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य पर विवक्षित अवलंब लेने में संकोच है तब यह एक ऐसे साक्ष्य की अपेक्षा कर सकता है जो किसी सह-अपराधी के मामले में अपेक्षित संपुष्टि से कम होते हुए उसके परिसाक्ष्य के संबंध में आश्वस्त कर सके । अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य के प्रति आश्वस्त होने के लिए, अपेक्षित साक्ष्य की प्रकृति प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर आवश्यक रूप से आधारित होती है । किंतु यदि अभियोक्त्री वयस्क है और उसे पूरी समझ है तब न्यायालय उसके परिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि कर सकता है जब तक यह दर्शित न किया जाए कि यह शिथिल और अविश्वसनीय है । यदि मामले के अभिलेख से प्रकट हुई संपूर्ण

परिस्थितियों से यह प्रकट होता है कि अभियोक्त्री का आरोपित व्यक्ति को मामले में मिथ्या रूप से आलिप्त करने के लिए कोई प्रबल हेतुक नहीं है तब न्यायालय को साधारणतया उसके साक्ष्य को स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए ।'

10. उत्तर प्रदेश राज्य **बनाम** पप्पु [(2005) 3 एस. एस. सी. 594] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि ऐसे मामले में भी जहां यह दर्शाया जाता है कि लड़की आसानी से वश में आने वाली लड़की है या मैथुन की अभ्यस्त लड़की है, तब भी यह अभियुक्त को बलात्संग के आरोप से अभिमुक्त करने के लिए एक आधार नहीं हो सकता । यह साबित किया जाना होगा कि उसके द्वारा उक्त विशेष अवसर के लिए सम्मति दी गई थी । अभियोक्त्री के शरीर पर क्षति का अभाव ऐसा पहलू नहीं है जिसके आधार पर न्यायालय अभियुक्त को अभिमुक्त कर सके । इस न्यायालय ने इसके आगे यह अभिनिर्धारित किया कि अभियोक्त्री के अकेले परिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है, और यदि न्यायालय अभियोक्त्री के पक्षकथन से संतुष्ट नहीं है तब यह अतिरिक्त प्रत्यक्ष या परिस्थितिक साक्ष्य की अवेक्षा कर सकता है जिसके द्वारा वह उसके परिसाक्ष्य के संबंध में आश्वस्त हो सके । न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया : (एस. सी. सी. पृष्ठ 597, पैरा 12) –

'12. यह सुस्थापित है कि बलात्संग के अपराध की शिकार होने का परिवाद करने वाली अभियोक्त्री अपराध में सह-अपराधी नहीं होती । विधि का ऐसा कोई नियम नहीं है कि उसके परिसाक्ष्य के आधार पर तात्विक विशिष्टि पर संपुष्टि के बिना कार्रवाई नहीं की जा सकती हो । वह किसी क्षतिग्रस्त साक्षी से उच्च स्थान

पर होती है । पश्चात्वर्ती मामले में शारीरिक प्रकार की क्षति होती है जब कि पूर्वतर मामले में शारीरिक के साथ-साथ मानसिक और भावनात्मक क्षति होती है । तथापि, यदि न्यायालय अभियोक्त्री के पक्षकथन को देखते हुए इसे स्वीकार करना कठिन पाता है तब वह ऐसे प्रत्यक्ष या पारिस्थितिक साक्ष्य की अपेक्षा कर सकता है जो उसके परिसाक्ष्य को आश्वस्त कर सके । किसी सह-अपराधी के संदर्भ में समझे जाने वाली संपुष्टि से कुछ कम होते हुए आश्वासन पर्याप्त होगा ।'

11. पंजाब राज्य **बनाम** गुरमीत सिंह [(1996) 2 एस. एस. सी. 1393] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यौन उत्पीड़न, जल्लाभंग इत्यादि अंतर्वलित करने वाले मामलों में न्यायालय को अत्यंत सावधानी से विचार करने की आवश्यकता होती है । किसी अभियोक्त्री के कथन में गौण विरोधाभास या महत्वहीन विसंगतियां, अन्यथा विश्वसनीय अभियोजन पक्षकथन को त्यक्त करने के लिए आधार नहीं होना चाहिए । यौन हमले की शिकार का साक्ष्य दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त है और यह किसी संपुष्टि की अपेक्षा नहीं करती जब तक कि संपुष्टि की ईप्सा करने के लिए बाध्यकारी कारण न हों । न्यायालय न्यायिक अंतश्चेतना के समाधान के लिए उसके कथन के संबंध में कुछ आश्वासनों की अपेक्षा कर सकता है । अभियोक्त्री का कथन किसी क्षतिग्रस्त साक्षी के बजाय अधिक विश्वसनीय है क्योंकि वह सह-अपराधी नहीं है । न्यायालय ने इसके आगे यह अभिनिर्धारित किया कि यौन अपराध के लिए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट फाइल किए जाने में विलंब, यदि उचित रूप से स्पष्ट भी नहीं किया गया है, तब भी यदि यह स्वाभाविक पाया जाता है तो अभियुक्त को उसका कोई फायदा नहीं दिया जा सकता है । न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया : (एस. सी. सी. पृष्ठ 394-96 और 403,

पैरा 8 और 21) –

'8. ..... न्यायालय ने ऐसी स्थिति को अनदेखा किया जिसमें एक निर्धन असहाय लड़की ने अपने को तीन दु:साहसी जवान लड़कों से घिरा हुआ पाया जो उसे धमकी दे रहे थे और उसे कोई चीख-पुकार करने से भी रोक रहे थे । पुन:, यदि अन्वेषक अधिकारी ने उचित रूप से अन्वेषण नहीं किया था या चालक अथवा कार का पता लगाने में समर्थ न होने के कारण उपेक्षावान था तब यह किस प्रकार से अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य को अभित्यक्त करने के लिए एक आधार बन सकता है ? अभियोक्त्री का अन्वेषक अभिकरण पर कोई नियंत्रण नहीं था और किसी अन्वेषक अधिकारी की उपेक्षा अभियोक्त्री के कथन की विश्वसनीयता को प्रभावित नहीं कर सकती ....। न्यायालयों को साक्ष्य का मूल्यांकन करते समय इस तथ्य के प्रति सचेत रहना चाहिए कि बलात्संग के मामले में कोई भी आत्मसम्मान वाली महिला न्यायालय के समक्ष अपनी स्वयं की गरिमा के विरुद्ध लज्जाजनक कथन करने के लिए आगे नहीं आएगी जैसाकि उसके साथ बलात्संग कारित किए जाने के मामले में अंतर्वलित होता है । यौन उत्पीड़न के मामलों में, ऐसी, तथाकथित बातों को जिनका अभियोजन पक्षकथन की सत्यता पर कोई तात्विक प्रभाव नहीं होता है या अभियोक्त्री के कथन में विसंगतियों को भी, जब तक कि ऐसी विसंगतियां घातक प्रकृति की न हों ; विश्वसनीय अभियोजन पक्षकथन को त्यक्त करने के लिए आधार बनाए जाने के लिए मंजूर नहीं किया जाना चाहिए । .....। नियमस्वरूप, ऐसे मामलों में उसके कथन पर अवलंब लेने के पूर्व उसकी संपुष्टि की ईप्सा करना क्षति के अतिरिक्त अपमान करना है । .....। अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य पर न्यायिक अवलंब लेने के लिए सशर्त संपुष्टि विधि की अपेक्षा नहीं है अपितु विशिष्ट परिस्थितियों के अधीन प्रज्ञा के मार्गदर्शन स्वरूप है .....।

* * * *

21. .....न्यायालयों को किसी मामले की व्यापक संभाव्यताओं की जांच करनी चाहिए और अभियोक्त्री के कथन में गौण विरोधाभासों या ऐसी महत्वहीन विसंगतियों से प्रभावित नहीं होना चाहिए जो कि घातक प्रकृति की न हों और विश्वसनीय अभियोजन पक्षकथन को त्यक्त नहीं करना चाहिए । यदि अभियोक्त्री का साक्ष्य विश्वास किए जाने को प्रेरित करता है, तब तात्विक विशिष्टियों पर उसके कथन की संपुष्टि की ईप्सा किए बिना इसका अवलंब लिया जाना चाहिए । यदि कुछ कारण से न्यायालय उसके परिसाक्ष्य पर विवक्षित अवलंब लेना कठिन पाता है तब यह किसी सह-अपराधी के मामले में अपेक्षित संपुष्टि से कम उसके परिसाक्ष्य को आश्वस्त करने वाले साक्ष्य की अपेक्षा कर सकता है । अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य का मूल्यांकन संपूर्ण मामले की पृष्ठभूमि में किया जाना चाहिए और विचारण न्यायालय को अपने दायित्व के प्रति सचेत होना चाहिए और यौन उत्पीड़न को अंतर्वलित करने वाले मामलों का निपटारा करते समय संवेदनशील होना चाहिए ।'

12. उड़ीसा राज्य **बनाम** ठाकरा बेसरा [(2002) 9 एस. सी. सी. 86] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि बलात्संग मात्र शारीरिक हमला नहीं है अपितु यह आहत (पीड़ित) के संपूर्ण व्यक्तित्व को नष्ट करता है । बलात्कारी असहाय स्त्री की आत्मा को लज्जित (अवमानित) करता है और इसलिए अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य का संपूर्ण मामले की पृष्ठभूमि में मूल्यांकन किया जाना चाहिए और ऐसे मामलों में अन्य साक्षियों की परीक्षा न किया जाना भी अभियोजन पक्षकथन में गंभीर शैथिल्यता नहीं हो सकती विशेष रूप से जब साक्षियों ने अपराध का कारित किया जाना नहीं देखा था ।

13. हिमाचल प्रदेश राज्य **बनाम** रघुबीर सिंह [(1993) 2 एस.

सी. सी. 622] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि दोषसिद्धि का कोई आदेश अभिलिखित करने के पूर्व अभियोक्त्री के साक्ष्य की संपुष्टि के लिए किसी अन्य साक्ष्य की अपेक्षा करने की कोई विधिक बाध्यता नहीं है । साक्ष्य का महत्व देखा जाना चाहिए और न कि उसकी गणना । दोषसिद्धि अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य पर आधारित की जा सकती है, यदि उसका साक्ष्य विश्वास किए जाने को प्रेरित करता है और उसकी सत्यता को कम करने के लिए परिस्थिति का अभाव है । इस न्यायालय द्वारा वाहिद खान **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य [(2010) 2 एस. सी. सी. 9] वाले मामले में रामेश्वर **बनाम** राजस्थान राज्य (ए. आई. आर. 1952 एस. सी. 54) वाले मामले में दिए गए पूर्वतर निर्णयों पर अवलंब लेते हुए समान मत दोहराया गया है ।

14. इस प्रकार इस मुद्दे पर उद्भूत हुई विधि यह है कि अभियोक्त्री का कथन यदि विश्वास किए जाने योग्य और विश्वसनीय पाया जाता है तब इसकी कोई संपुष्टि किया जाना अपेक्षित नहीं है । न्यायालय अभियोक्त्री के अकेले परिसाक्ष्य के आधार पर अभियुक्त को दोषसिद्ध कर सकता है ।

10.2 कृष्ण कुमार मलिक **बनाम** हरियाणा राज्य [(2011) 7 एस. सी. सी. 130] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है कि अभियुक्त को बलात्संग का अपराध कारित करने के लिए दोषी ठहराने हेतु अभियोक्त्री का एकमात्र परिसाक्ष्य पर्याप्त है, बशर्ते उसके साक्ष्य से विश्वास प्रेरित होता हो और पूर्णत: भरोसेमंद, निष्कलंक प्रतीत होता हो और वह साक्ष्य उत्तम गुणवत्ता का होना चाहिए ।

10.3 'उत्तम साक्षी' किसे कहा जा सकता है, इस बात पर इस न्यायालय द्वारा राय संदीप **बनाम** राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली) [(2012) 8 एस. सी. सी. 21] वाले मामले में विचार किया गया था । पैरा 22 में यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है (एस. सी. सी. पैरा 29) –

'10. हमारी सुविचारित राय में, 'उत्तम साक्षी' एक अत्यंत उच्च गुणवत्ता और चरित्रवान होना चाहिए जिसका वृत्तांत अचुनौतीपूर्ण होना चाहिए । ऐसे साक्षी के वृत्तांत पर विचार करने वाला न्यायालय किसी संकोच के बिना इस साक्ष्य को प्रत्यक्षत: स्वीकार करने की स्थिति में होना चाहिए । ऐसे साक्षी की गुणवत्ता का परीक्षण करने के लिए, साक्षी की हैसियत की बात अतात्विक होगी और सुसंगत बात ऐसे साक्षी द्वारा किए गए कथन की सत्यता होगी । अधिक सुसंगत बात आरंभिक बिंदु से लेकर अंत तक किए गए कथन की सुसंगतता होगी अर्थात् उस समय से लेकर जब साक्षी आरंभिक कथन करता है और अंततोगत्वा जब वह न्यायालय के समक्ष कथन करता है । यह कथन अभियुक्त के संबंध में स्वाभाविक और अभियोजन के पक्षकथन के अनुरूप होना चाहिए । ऐसे साक्षी के वृत्तांत में कोई छल-कपट नहीं होना चाहिए । ऐसा साक्षी कितनी ही विस्तृत और कितनी ही कठिन प्रतिपरीक्षा में अडिग रहने की स्थिति में होना चाहिए और किसी परिस्थिति में घटना की सत्यता, अंतर्वलित व्यक्तियों तथा इसके क्रम के बारे में किसी संदेह की गुंजाइश नहीं रहनी चाहिए । ऐसे वृत्तांत का सह-संबंध की गई बरामदगियों, प्रयुक्त किए गए आयुधों, अपराध कारित करने की रीति, वैज्ञानिक साक्ष्य और विशेषज्ञ राय जैसी प्रत्येक समर्थनकारी सामग्री से होना चाहिए । उक्त वृत्तांत का प्रत्येक अन्य साक्षी के वृत्तांत से सुसंगत रूप से मिलान होना चाहिए । यहां तक कहा जा सकता है कि यह पारिस्थितिक साक्ष्य के मामले में लागू किए जाने वाली कसौटी के समान होना चाहिए, जिसमें अभियुक्त को उसके विरुद्ध अभिकथित अपराध का दोषी ठहराने के लिए परिस्थितियों की श्रृंखला में कोई कड़ी गायब नहीं होनी चाहिए । केवल यदि ऐसे साक्षी का वृत्तांत उपरोक्त कसौटी और लागू की जाने वाली इसी प्रकार की अन्य कसौटियों पर खरा उतरता है, तो यह अभिनिर्धारित

> किया जा सकता है कि ऐसे साक्षी को 'उत्तम साक्षी' कहा जा सकता है, जिसके वृत्तांत को न्यायालय द्वारा किसी संपुष्टि के बिना स्वीकार किया जा सकता है और उसके आधार पर दोषी को दंडित किया जा सकता है । अधिक स्पष्ट करने के लिए, उक्त साक्षी का वृत्तांत अपराध के सारभूत भाग पर अविकल रहना चाहिए जबकि तात्विक विशिष्टियों में सभी अन्य विद्यमान सामग्री अर्थात् मौखिक, दस्तावेजी और तात्विक वस्तुओं का मिलान उक्त वृत्तांत से होना चाहिए जिससे अपराध का विचारण करने वाला न्यायालय अपराधी को अभिकथित अपराध का दोषी ठहराने के लिए अन्य समर्थनकारी सामग्री की छानबीन करके मुख्य वृत्तांत का अवलंब लेने के लिए समर्थ हो सके ।'"

5.3 **पंकज चौधरी** (उपर्युक्त) वाले मामले में यह मत व्यक्त किया गया और अभिनिर्धारित किया गया है कि एक साधारण नियम के तौर पर, एकमात्र परिसाक्ष्य, यदि विश्वसनीय हो, के आधार पर संपुष्टि के बिना अभियुक्त की दोषसिद्धि की जा सकती है । यह भी मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है कि न्यायालय द्वारा अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य पर केवल पूर्वधारणाओं और कल्पनाओं के आधार पर संदेह नहीं किया जाना चाहिए । पैरा 29 में यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है :–

> "29. अब विधि का यह सुस्थिर सिद्धांत है कि अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर, यदि यह विश्वासोत्पादक है, दोषसिद्धि कायम रखी जा सकती है । [विष्णु **बनाम** महाराष्ट्र राज्य, (2006) 1 एस. सी. सी. 283 वाला मामला देखें] । इस न्यायालय के अनेक विनिश्चयों द्वारा यह सुस्थिर है कि विधि का ऐसा कोई नियम या परिपाटी नहीं है कि अभियोक्त्री के साक्ष्य का संपुष्टि के बिना अवलंब न लिया जा सकता हो और इसलिए यह अधिकथित किया गया कि किसी बलात्संग के मामले में दोषसिद्धि के लिए संपुष्टि का होना आवश्यक नहीं है । यदि विपदग्रस्त का साक्ष्य

किसी मूलभूत खामी से ग्रस्त नहीं है और 'अधिसंभाव्यताओं का कारक' इसे अविश्वसनीय नहीं ठहराता है, तो एक साधारण नियम के तौर पर ऐसा कोई कारण नहीं है कि संपुष्टि पर जोर दिया जाए सिवाय चिकित्सीय साक्ष्य के, जहां मामले की परिस्थितियों पर विचार करते हुए चिकित्सीय साक्ष्य उपलब्ध होने की प्रत्याशा की जा सकती हो । [राजस्थान राज्य **बनाम** एन. के., (2000) 5 एस. एस. सी. 30 वाला मामला देखें] ।"

5.4 **श्याम सिंह** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में यह मत व्यक्त किया गया है कि विपदग्रस्त का परिसाक्ष्य महत्वपूर्ण है और जब तक ऐसे बाध्यकारी कारण न हों जिनमें उसके कथन की संपुष्टि करना आवश्यक हो, न्यायालयों को अभियुक्त की दोषसिद्धि करने के लिए विपदग्रस्त के एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर कार्रवाई करने हेतु वहां कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए जहां उसका परिसाक्ष्य विश्वासोत्पादक हो और विश्वसनीय पाया गया हो । यह भी मत व्यक्त किया गया है कि उसके कथन का अवलंब लेने से पूर्व इसकी संपुष्टि की ईप्सा करना, एक नियम के तौर पर, ऐसे मामलों में क्षति के साथ-साथ अपमान करने की कोटि में आता है । पैरा 6 और 7 में निम्नलिखित मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है :–

"6. हमें यह भान है कि बलात्संग के आरोपों पर अभियुक्त का विचारण करते समय न्यायालयों पर एक महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व होता है । उन्हें ऐसे मामलों पर अत्यधिक संवेदनशीलता से विचार करना चाहिए । न्यायालयों को मामले की व्यापक अधिसंभाव्यताओं की परीक्षा करनी चाहिए और अभियोक्त्री के कथन में आए छुट-पुट विरोधाभासों या महत्वहीन विसंगतियों से प्रभावित नहीं होना चाहिए, जो अभियोजन के एक अन्यथा विश्वसनीय पक्षकथन को नकारने के लिए घातक प्रकृति की न हों । यदि अभियोक्त्री का साक्ष्य विश्वासोत्पादक है, तो तात्विक विशिष्टियों में उसके कथन की संपुष्टि की ईप्सा किए बिना उस

[1] (2018) 18 एस. सी. सी. 34.

पर विश्वास किया जाना चाहिए । यदि किसी कारणवश न्यायालय उसके परिसाक्ष्य पर निर्विवाद अवलंब लेने में कठिनाई पाता है, तो वह ऐसे साक्ष्य की खोज कर सकता है जो उसके परिसाक्ष्य के लिए ऐसा आश्वासन दे सके जो उस संपुष्टि से कम हो जो सह-अपराधी के मामले में आवश्यक होती है । अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य का मूल्यांकन संपूर्ण मामले की पृष्ठभूमि में करना चाहिए और न्यायालय को यौन उत्पीड़न या लैंगिक हमले के मामलों पर विचार करते समय अपने उत्तरदायित्व के प्रति अवश्य सचेत और संवेदनशील होना चाहिए । [पंजाब राज्य **बनाम** गुरमीत सिंह, (1996) 2 एस. सी. सी. 384 वाला मामला देखें] ।

7. अब यह भी सुस्थिर है कि साक्ष्य का मूल्यांकन करते समय न्यायालयों को अवश्य इस तथ्य के प्रति सचेत रहना चाहिए कि बलात्संग के मामले में कोई आत्म-सम्मान वाली स्त्री अपने सम्मान के विरुद्ध यों ही यह अपमानजनक कथन करने के लिए न्यायालय में नहीं आएगी कि उसके साथ बलात्संग किया गया था । यौन उत्पीड़न के मामलों में, ऐसी तथाकथित बातों को जिनसे अभियोजन के पक्षकथन की सत्यता पर कोई तात्विक प्रभाव न पड़ता हो या अभियोक्त्री के कथन में आई विसंगतियों को भी, जब तक कि ये ऐसी न हों जो घातक प्रकृति की हों, अन्यथा विश्वसनीय अभियोजन के पक्षकथन को त्यक्त करने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जाना चाहिए । महिलाओं का अंतर्निहित संकोच और लैंगिक छेड़छाड़ की अपमानजनक बात को छिपाने की प्रवृत्ति ऐसी बातें हैं, जिनकी न्यायालयों को अनदेखी नहीं करनी चाहिए । ऐसे मामलों में विपदग्रस्त का परिसाक्ष्य महत्वपूर्ण होता है और जब तक ऐसे बाध्यकारी कारण न हों जिनमें उसके कथन की संपुष्टि करना आवश्यक हो, न्यायालयों को अभियुक्त की दोषसिद्धि करने के लिए विपदग्रस्त के एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर कार्रवाई करने हेतु वहां कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए जहां उसका परिसाक्ष्य विश्वासोत्पादक हो और विश्वसनीय पाया गया हो । ऐसे मामलों में, उसके कथन का अवलंब लेने से पूर्व इसकी संपुष्टि की

ईप्सा करना, एक नियम के तौर पर, क्षति के साथ-साथ अपमान करने की कोटि में आता है । [रणजीत हजारिका **बनाम** असम राज्य, (1998) 8 एस. सी. सी. 635 वाला मामला देखें] ।"

6. इस मामले के तथ्यों पर पूर्वोक्त विनिश्चयों में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि को लागू करते हुए और जैसा कि इसमें ऊपर मत व्यक्त किया गया है, हमें अभियोक्त्री की विश्वसनीयता और/या सत्यता पर संदेह करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है । उसे विश्वसनीय और भरोसेमंद पाया गया है । इसलिए किसी और संपुष्टि के बिना, अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य का अवलंब लेकर की गई अभियुक्त की दोषसिद्धि को कायम रखा जा सकता है ।

7. अब जहां तक अभियुक्त की ओर से दी गई इस दलील का संबंध है कि चूंकि अभियोक्त्री के शरीर पर कोई बाह्य या आंतरिक क्षतियां नहीं पाई गई थी और इसलिए यह एक सहमति का मामला हो सकता है, पूर्वोक्त दलील में कतई कोई सार नहीं है । अभियोक्त्री से उसकी प्रतिपरीक्षा में दूर-दूर तक भी ऐसा कोई प्रश्न नहीं पूछा गया था । इसलिए पूर्वोक्त दलील को एकदम नामंजूर किया जाना चाहिए ।

8. अब जहां तक अभियुक्त की ओर से दी गई इस दलील का संबंध है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने प्रति. सा. 1 पर विश्वास न करके और अन्यत्र उपस्थित होने की इस प्रतिरक्षा पर विश्वास न करके गलती की है कि घटना की रात्रि को वह इंदौर गया हुआ था और गांव में मौजूद नहीं था, प्रारंभ में यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा प्रति. सा. 1 पर विश्वास न करने और अभियुक्त द्वारा अन्यत्र उपस्थित होने के लिए किए गए अभिवाक् पर विश्वास न करने के लिए तर्कपूर्ण कारण दिए गए हैं । प्रति. सा. 1 अभियुक्त के गांव का ही रहने वाला है । इंदौर जाने के कारण को न्यायालय द्वारा अविश्वसनीय माना गया है । अभियुक्त तथा प्रतिरक्षा पक्ष की ओर से यह पक्षकथन था कि चूंकि बाबूलाल नामक व्यक्ति के साथ दुर्घटना हो गई थी, इसलिए प्रति. सा. 1 और अभियुक्त बाबूलाल को लेने के लिए इंदौर गए थे और वे उस रात्रि को इंदौर में रुके थे ।

तथापि, यह पाया गया था कि बाबूलाल को क्षति दो माह पूर्व पहुंची थी । प्रतिरक्षा पक्ष ने अस्पताल के अभिलेख को प्रस्तुत नहीं किया था या उस अस्पताल के डाक्टर या कर्मचारी की परीक्षा नहीं कराई थी, जहां बाबूलाल को उपचार के लिए ले जाया गया था । प्रतिरक्षा पक्ष के अनुसार, वे इंदौर में तुलसीराम के मकान में ठहरे थे किंतु उक्त तुलसीराम की परीक्षा नहीं कराई गई थी । यहां तक कि बाबूलाल की भी परीक्षा नहीं कराई गई थी । इन परिस्थितियों में, विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियुक्त द्वारा अन्यत्र उपस्थित होने के किए गए अभिवाक् पर ठीक ही विश्वास नहीं किया था और प्रति. सा. 1 पर भी ठीक ही विश्वास नहीं किया था । विद्वान् विचारण न्यायालय ने साक्ष्य का मूल्यांकन करने पर विनिर्दिष्ट रूप से यह मत व्यक्त किया था कि प्रति. सा. 1 के अभिसाक्ष्य से कोई विश्वास प्रेरित नहीं होता है ।

9. अब जहां तक अभियुक्त की ओर से दी गई इस दलील का संबंध है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में तीन दिन का विलंब हुआ था, प्रारंभ में यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि अभियोक्त्री की ओर से यह विनिर्दिष्ट और सतत् पक्षकथन था कि घटना घटने के तुरंत पश्चात् उसने अपनी जेठानी और सास को घटना के बारे में बताया था किंतु उन्होंने अभियोक्त्री पर विश्वास नहीं किया । इसके विपरीत, उन्होंने उसकी पिटाई की । यहां तक कि उसके दांपत्य-गृह के किसी सदस्य ने भी अभियोक्त्री का समर्थन नहीं किया और इसलिए उसने अपने पैतृक-गृह में संदेश भेजा और उसके पश्चात् उसे उसके पैतृक-गृह लाया गया तथा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई । यह बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण है कि इस मामले में जेठानी और सास ने स्त्री होते हुए अभियोक्त्री का समर्थन नहीं किया । इसके विपरीत, उसे मजबूर होकर अपने दांपत्य-गृह जाना पड़ा और उसके पश्चात् प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी । कम से कम जेठानी और सास को स्त्री होते हुए अभियोक्त्री का समर्थन करना चाहिए था । इसलिए जब ऐसी स्थिति में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में विलंब हुआ था, तो ऐसे विलंब का फायदा अभियुक्त को, जो नातेदार था, नहीं दिया जा सकता है ।

10. अब जहां तक भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के परंतुक पर विचार करते हुए दंडादेश को कम करने के लिए अभियुक्त की ओर से किए गए अनुरोध का संबंध है, भारतीय दंड संहिता की धारा 376, संशोधन से पूर्व, के अनुसार न्यूनतम दंडादेश सात वर्ष होगा । तथापि, परंतुक के अनुसार, न्यायालय निर्णय में वर्णित किए गए पर्याप्त और विशेष कारणों से सात वर्ष से कम अवधि के कारावास का दंडादेश अधिरोपित कर सकेगा । सात वर्ष से कम अवधि के कारावास का दंडादेश अधिरोपित करने के लिए कोई आपवादिक और/या विशेष कारण सिद्ध नहीं किए गए हैं । इसके विपरीत, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में यह कहा जा सकता है कि अभियुक्त पर केवल न्यूनतम सात वर्ष का कठोर कारावास अधिरोपित करके नरमी बरती गई है । विपदग्रस्त नातेदार है । दांपत्य-गृह में परिवार के किसी सदस्य ने उसका समर्थन नहीं किया था और उसे आघात सहना पड़ा था । वह अपने पैतृक-गृह में जाने के लिए मजबूर हुई थी और उसके पश्चात् वह प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करा सकी थी । अभियुक्त एक मिथ्या मामले/अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् के साथ आया था जिसे निचले न्यायालयों द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है । इन परिस्थितियों में, दंडादेश को कम करने और/या सात वर्ष के कठोर कारावास को सात वर्ष के साधारण कारावास में संपरिवर्तित करने के अपीलार्थी के अनुरोध को स्वीकार नहीं किया जाता है और इसे नामंजूर किया जाता है ।

11. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए और ऊपर उल्लिखित कारणों से यह अपील असफल होती है और इसे खारिज किया जाना चाहिए और तद्नुसार इसे खारिज किया जाता है । अभियुक्त-अपीलार्थी पर भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध के लिए अधिनिर्णीत दोषसिद्धि और दंडादेश की तद् द्वारा पुष्टि की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

जस.

[2022] 1 उम. नि. प. 43

अमित कुमार

बनाम

सुमन बेनीवाल

[2021 की सिविल अपील सं. 7650]

11 दिसंबर, 2021

न्यायमूर्ति इंदिरा बनर्जी और न्यायमूर्ति जे. के. महेश्वरी

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 13ख और धारा 14, परंतुक – पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद – पति-पत्नी (उच्च शिक्षित और उच्च पदासीन अधिकारी) द्वारा विवाह के पश्चात् केवल तीन दिन एक-साथ रहने के उपरांत प्रचंड मतभेदों के कारण अलग-अलग हो जाना – विवाह के एक वर्ष पश्चात् पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद के लिए अर्जी फाइल किया जाना – पक्षकारों द्वारा छह माह की प्रतीक्षा अवधि का अधित्यजन करने के लिए आवेदन फाइल किया जाना – इस आवेदन और पुनरीक्षण आवेदन को खारिज किया जाना – अपील – विवाह-विच्छेद के लिए अर्जी फाइल करने की तारीख से छह माह की प्रतीक्षा अवधि पक्षकारों द्वारा विवाह के पवित्र बंधन को सदैव के लिए समाप्त करने से पूर्व अपने विनिश्चय पर पुनर्विचार करने के आशय से उपबंधित की गई है, किंतु जहां पक्षकारों के बीच सुलह और पुनर्मिलन की कोई संभावना न हो और विवाह असुधार्य रूप से टूट गया हो, वहां पक्षकारों की व्यथा को और अधिक बढ़ाने की बजाय प्रतीक्षा अवधि का अधित्यजन करना उचित होगा चूंकि यह एक निदेशात्मक उपबंध है न कि आज्ञापक ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी, जो उच्च शिक्षित और उच्च पदासीन अधिकारी हैं (अपीलार्थी आईपीएस अधिकारी है और प्रत्यर्थी आईएफएस अधिकारी है), का विवाह तारीख 10 सितंबर, 2020 को हिंदू रीति-रिवाज के साथ हुआ था । स्वीकृततः, प्रचंड मतभेदों के कारण अपीलार्थी और प्रत्यर्थी तारीख 13 सितंबर, 2020 को

अर्थात् स्पष्ट रूप से विवाह के तीन दिन पश्चात्, अलग हो गए थे । इस पृथक्करण के एक वर्ष के पश्चात् तारीख 30 सितंबर, 2021 या इसके आसपास अपीलार्थी और प्रत्यर्थी ने हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13ख के अधीन पारस्परिक सम्मति द्वारा विवाह-विच्छेद की डिक्री के लिए कुटुंब न्यायालय में एक अर्जी फाइल की । तारीख 12 अक्तूबर, 2021 या इसके आसपास अपीलार्थी और प्रत्यर्थी ने कुटुंब न्यायालय के समक्ष एक अर्जी फाइल की और विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित करने हेतु हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन न्यायालय को प्रस्ताव देने के लिए छह माह की प्रतीक्षा अवधि का अधित्यजन करने की ईप्सा की । कुटुंब न्यायालय ने इस आवेदन को गुणागुण रहित और कायम रखने योग्य न होने के कारण खारिज कर दिया । अपीलार्थी द्वारा कुटुंब न्यायालय के आदेश को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय में एक सिविल पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया गया । उच्च न्यायालय द्वारा उक्त पुनरीक्षण आवेदन को खारिज कर दिया गया । अपीलार्थी द्वारा उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – विधानमंडल ने हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) अपनी प्रज्ञा से धारा 13ख(1) के अधीन विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल करने की तारीख से छह माह की प्रतीक्षा अवधि का उपबंध करने के लिए इसलिए अधिनियमित की थी, यदि पक्षकार अपना विचार बदल लें और अपने मतभेदों का निराकरण कर लें । छह माह के पश्चात् यदि पक्षकार फिर भी विवाह-विच्छेद के साथ आगे बढ़ना चाहते हैं और एक प्रस्ताव देते हैं तो न्यायालय ऐसी जांच करने के पश्चात्, जो वह ठीक समझे, डिक्री की तारीख से विवाह के विघटन की घोषणा करते हुए विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान करेगा । धारा 14 के साथ पठित धारा 13ख(2) का उद्देश्य जल्दबाजी में विवाह के विघटन को रोककर विवाह की संस्था को बचाना है । प्राय: यह कहा जाता है कि "समय सर्वोत्तम चिकित्सक है" । समय बीतने के साथ, गुस्सा शांत हो जाता है और

नाराजगी दूर हो जाती है । प्रतीक्षा अवधि पति या पत्नी को माफ करने और मतभेदों को भूल जाने का समय देती है । यदि ऐसे पति-पत्नी के बालक हैं, तो वे कुछ समय के पश्चात् अपने बालकों पर विवाह-विच्छेद के पड़ने वाले परिणामों के बारे में सोच सकते हैं और अलग-अलग होने के अपने विनिश्चय पर पुनर्विचार कर सकते हैं । अन्यथा भी, प्रतीक्षा अवधि ऐसे दंपत्ति को चिंतन-मनन करने और इस बारे में एक सुविचारित विनिश्चय करने का समय देती है कि क्या उन्हें वास्तव में सदैव के लिए विवाह को समाप्त कर देना चाहिए या नहीं । जहां कहीं सुलह की संभावना है, चाहे थोड़ी ही, विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल करने की तारीख से छह माह की प्रतीक्षा अवधि को प्रवृत्त किया जाना चाहिए । तथापि, यदि सुलह की कोई संभावना नहीं है, तो विवाह के पक्षकारों की व्यथा को लंबा खींचना निरर्थक होगा । अत: यदि विवाह असुधार्य रूप से टूट गया है, पति-पत्नी लंबे समय से अलग-अलग रह रहे हैं किंतु अपने मतभेदों को सुलझाने में समर्थ नहीं रहे हैं और आपसी सहमति से अलग होने का विनिश्चय किया है, तो पति-पत्नी दोनों को जीवन में आगे बढ़ने के लिए समर्थ बनाने हेतु यह बेहतर होगा कि विवाह का अंत कर दिया जाए । इस मामले में, जैसा कि ऊपर मत व्यक्त किया गया है, दोनों पक्षकार सुशिक्षित और बड़े पद पर आसीन सरकारी अधिकारी हैं । वे लगभग 15 माह तक विवाहित रहे थे । यह विवाह चल नहीं सका था । स्वीकृत रूप से, पक्षकार केवल तीन दिन एक-साथ रहे थे, जिसके पश्चात् वे सुलह न होने योग्य मतभेदों के कारण अलग-अलग हो गए थे । पक्षकार तीन दिन को छोड़कर अपने विवाह की संपूर्ण अवधि में अलग-अलग रहे हैं । पक्षकारों द्वारा संयुक्त रूप से यह कथन किया गया है कि सुलह के प्रयास असफल हो गए हैं । पक्षकार पति-पत्नी के रूप में एक-साथ रहने के लिए इच्छुक नहीं हैं । पक्षकार अलग होने के 14 माह से भी ज्यादा समय के पश्चात् अभी भी विवाह-विच्छेद के लिए अग्रसर होना चाहते हैं । पक्षकारों को प्रतीक्षा कराने से, उनकी व्यथा को बढ़ाने के सिवाय, किसी उपयोगी प्रयोजन की पूर्ति नहीं होगी । (पैरा 17, 18, 19 और 28)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2019] (2019) 10 एस. सी. सी. 415 :
अनिल कुमार जैन बनाम **माया जैन ;** 26

[2017] (2017) 8 एस. सी. सी. 746 :
अमरदीप सिंह बनाम **हरवीन कौर ;** 20, 21, 22, 23

[2016] (2016) 16 एस. सी. सी. 346 :
सोनी कुमारी बनाम **दीपक कुमार ;** 25

[2012] (2012) 8 एस. सी. सी. 580 :
देवेन्द्र सिंह नरुला बनाम **मीनाक्षी नांगिया** । 24

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2021 की सिविल अपील सं. 7650.

2021 के सिविल पुनरीक्षण आवेदन में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 17 नवंबर, 2021 को पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री विक्रम हेगड़े और शांतनु लखोटिया

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री यश सिन्हा, (सुश्री) आयुशी राजपूत, (सुश्री) रंगोली सेठ, प्रतीक के चड्ढा और शशांक रतनु

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति इंदिरा बनर्जी ने दिया ।

न्या. बनर्जी – इजाजत दी गई ।

2. अपीलार्थी द्वारा अपीलार्थी और प्रत्यर्थी द्वारा हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13ख(1) के अधीन पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद के लिए अर्जी फाइल करने की तारीख से कम से कम छह माह के पश्चात् उक्त अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन विवाह-विच्छेद की डिक्री के लिए प्रस्ताव देने की अपेक्षा का अधित्यजन करने के लिए अपीलार्थी द्वारा किए गए अनुरोध से इनकार करते हुए कुटुम्ब

न्यायालय, हिसार द्वारा तारीख 12 अक्तूबर, 2021 को पारित किए गए निर्णय के विरुद्ध फाइल किए गए 2021 के सिविल पुनरीक्षण आवेदन सं. 2537 को खारिज करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 17 नवंबर, 2021 को पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपीलार्थी द्वारा यह अपील फाइल की गई है ।

3. अपीलार्थी और प्रत्यर्थी, जो कि शिक्षित और जीवन में सुव्यवस्थित हैं (अपीलार्थी आईपीएस अधिकारी है और प्रत्यर्थी आईएफएस अधिकारी है), का विवाह तारीख 10 सितंबर, 2020 को हिंदू रीति-रिवाज के साथ हुआ था । स्वीकृततः, प्रचंड मतभेदों के कारण अपीलार्थी और प्रत्यर्थी तारीख 13 सितंबर, 2020 को अर्थात् स्पष्ट रूप से विवाह के तीन दिन पश्चात्, अलग हो गए थे ।

4. इस पृथक्करण के एक वर्ष के पश्चात् तारीख 30 सितंबर, 2021 या इसके आसपास अपीलार्थी और प्रत्यर्थी ने हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13ख के अधीन पारस्परिक सम्मति द्वारा विवाह-विच्छेद की डिक्री के लिए कुटुंब न्यायालय में एक अर्जी फाइल की । हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13ख निम्नलिखित है :–

> "**13ख. पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद** – (1) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए यह है कि विवाह के दोनों पक्षकार मिलकर विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा विवाह के विघटन के लिए अर्जी, चाहे ऐसा विवाह, विवाह विधि (संशोधन) अधिनियम, 1976 के प्रारंभ के पूर्व या उसके पश्चात् अनुष्ठापित किया गया हो, जिला न्यायालय ने, इस आधार पर पेश कर सकेंगे कि वे एक वर्ष या उससे अधिक समय से अलग-अलग रह रहे हैं और वे एक-साथ नहीं रह सके हैं तथा वे इस बात के लिए परस्पर सहमत हो गए हैं कि विवाह का विघटन कर दिया जाना चाहिए ।
>
> (2) उपधारा 1 में निर्दिष्ट अर्जी के पेश किए जाने की तारीख के छह माह के पश्चात् और उस तारीख से अठारह माह के अपश्चात् दोनों पक्षकारों द्वारा किए गए प्रस्ताव पर, यदि इस बीच अर्जी वापिस नहीं ले ली गई है, तो न्यायालय पक्षकारों को सुनने

के पश्चात् या ऐसी जांच करने के पश्चात्, जो वह ठीक समझे, अपना यह समाधान कर लेने पर कि विवाह अनुष्ठापित हुआ है और अर्जी में किए गए प्रकथन सही हैं, यह घोषणा करते हुए विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित करेगा कि विवाह डिक्री की तारीख से विघटित हो जाएगा ।"

5. हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(1) के निबंधनों के अनुसार, विवाह के पक्षकार पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा विवाह का विघटन करने के लिए इस आधार पर अर्जी फाइल कर सकते हैं कि वे एक वर्ष या उससे अधिक समय से अलग-अलग रह रहे हैं और वे एक-साथ नहीं रह सके हैं तथा वे इस बात के लिए परस्पर सहमत हो गए हैं कि विवाह का विघटन कर दिया जाना चाहिए ।

6. हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13ख की उपधारा (2) में यह उपबंधित है कि उपधारा (1) में निर्दिष्ट अर्जी के पेश किए जाने की तारीख से छह माह के पश्चात् और उस तारीख से अठारह माह के अपश्चात् दोनों पक्षकारों द्वारा किए गए प्रस्ताव पर, यदि इसी बीच अर्जी वापिस नहीं ले ली गई है, तो आवश्यक जांच करने के पश्चात् यह घोषणा करते हुए विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित करेगा कि विवाह डिक्री की तारीख से विघटित हो जाएगा ।

7. धारा 14 में यह उपबंधित है कि हिंदू विवाह अधिनियम में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, कोई भी न्यायालय विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा विवाह के विघटन की कोई अर्जी ग्रहण करने के लिए तब तक सक्षम नहीं होगा, जब तक कि विवाह की तारीख से उस अर्जी के पेश किए जाने की तारीख तक एक वर्ष बीत न चुका हो ।

8. धारा 14 के परंतुक के निबंधनों के अनुसार, न्यायालय उन नियमों के अनुसार किए गए आवेदन पर, जो उच्च न्यायालय द्वारा इस निमित्त बनाए जाएं, किसी अर्जी का विवाह की तारीख से एक वर्ष बीतने के पूर्व भी इस आधार पर उपस्थापित किया जाना अनुज्ञात कर सकेगा कि मामला अर्जीदार के लिए असाधारण कष्ट का है या प्रत्यर्थी

की असाधारण दुराचारिता से युक्त है । इस मामले में, धारा 13ख के अधीन अर्जी विवाह की तारीख से एक वर्ष बीत जाने के पश्चात् फाइल की गई थी ।

9. तारीख 12 अक्तूबर, 2021 या इसके आसपास अपीलार्थी और प्रत्यर्थी ने कुटुंब न्यायालय के समक्ष एक आवेदन फाइल किया और विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित करने हेतु हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन न्यायालय को प्रस्ताव देने के लिए छह माह की प्रतीक्षा अवधि का अधित्यजन करने की ईप्सा की ।

10. कुटुंब न्यायालय ने तारीख 12 अक्तूबर, 2021 के आदेश द्वारा, जिसे उच्च न्यायालय के समक्ष आक्षेपित किया गया था, अर्जी को गुणागुण रहित और कायम रखने योग्य न होने के कारण खारिज कर दिया । यह निदेश दिया गया कि पक्षकारों के द्वितीय प्रस्ताव पर कथन अभिलिखित करने के प्रयोजनार्थ मामले की फाइल को तारीख 4 अप्रैल, 2022 को प्रस्तुत किया जाए । कुटुंब न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था :–

> "अमरदीप सिंह **बनाम** हरवीन कौर [(2017) 4 आरसीआर (सिविल) 608 = ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 4447] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित मार्गदर्शक सिद्धांतों के अनुसार, अर्जीदारों का मामला हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन यथा वर्णित छह माह की अनुबंधित अवधि का अधित्यजन करने के लिए नियत किए गए मानदंडों के अंतर्गत नहीं आता है । ऊपर वर्णित मामले में यह स्पष्ट रूप से अधिकथित किया गया है कि जहां मामले पर विचार करने वाले न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन कानूनी अवधि का अधित्यजन करने के लिए मामला बनता है, तो वह निम्नलिखित बातों पर विचार करने के पश्चात् ऐसा कर सकता है –
>
> (1) धारा 13ख के अधीन पक्षकारों के अलग-अलग होने के पश्चात् एक वर्ष की कानूनी अवधि के अतिरिक्त धारा

13ख(2) में विनिर्दिष्ट छह माह की कानूनी अवधि प्रथम प्रस्ताव देने के पूर्व पहले ही समाप्त हो गई है ।

(2) .....

(3) .....

(4) .....

(6) प्रस्तुत मामले में प्रथम प्रस्ताव का कथन तारीख 30 सितंबर, 2021 को अभिलिखित किया गया था और पक्षकार तारीख 13 सितंबर, 2020 से अलग-अलग रह रहे हैं । इसका अर्थ यह है कि प्रथम प्रस्ताव का कथन अभिलिखित करने की तारीख को अलग-अलग होने की 18 माह की अवधि पूर्ण नहीं हुई थी । प्रस्तुत मामला निर्णय के पैरा 19 में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित किए गए मार्गदर्शक सिद्धांतों के अंतर्गत नहीं आता है । ऐसी परिस्थितियों में, यह न्यायालय हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन छह माह की अनुबंधित अवधि का अधित्यजन करने के लिए अनुज्ञा नहीं दे सकता है । तद्नुसार, अर्जी गुणागुण रहित और कामय रखने योग्य न होने के कारण खारिज की जाती है । अब फाइल को पहले से नियत प्रयोजनार्थ अर्थात् पक्षकारों के द्वितीय प्रस्ताव का कथन अभिलिखित करने के लिए तारीख 4 अप्रैल, 2022 को प्रस्तुत किया जाए ।"

11. अपीलार्थी ने कुटुंब न्यायालय द्वारा तारीख 12 अक्तूबर, 2021 को पारित किए गए पूर्वोक्त आदेश को चुनौती देते हुए भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन उच्च न्यायालय में एक सिविल पुनरीक्षण आवेदन सं. 2527-2021 (ओ एंड एम) फाइल किया ।

12. उच्च न्यायालय द्वारा उक्त सिविल पुनरीक्षण आवेदन को इस अपील में आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया । उच्च न्यायालय ने, अन्य बातों के साथ-साथ, यह अभिनिर्धारित किया :–

"5. अमरदीप सिंह (उपर्युक्त) वाले मामले में का निर्णय असंदेहास्पद है । इसमें यह अधिकथित किया गया है कि अधिनियम की धारा 13ख का उद्देश्य पक्षकारों को विवाह का विघटन, यदि यह असुधार्य रूप से टूट गया हो, सहमति से करने के लिए समर्थ बनाना है । यह उन्हें अन्य विकल्पों की खोज करने और जीवन में आगे बढ़ने के लिए समर्थ बनाएगा । अधिनियम की धारा 13ख(2) में छह माह की अवधि किसी जल्द-बाजी में विनिश्चय करने के विरुद्ध रक्षोपाय के लिए उपबंधित की गई है । तथापि, यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि पुनर्मिलन की कोई संभावना नहीं है, तो उसे छह माह की कानूनी अवधि का अधित्यजन करने के लिए नि:शक्त नहीं होना चाहिए जिससे कि पक्षकारों को और अधिक व्यथा न झेलनी पड़े । अत: यह अभिनिर्धारित किया गया है कि छह माह की विहित कानूनी अवधि निदेशात्मक प्रकृति की है । तथापि, इस शक्ति को कतिपय शर्तों के अध्यधीन किया गया है, जिन्हें नीचे उद्धृत किया जाता है :–

(i) धारा 13ख(1) के अधीन पक्षकारों के अलग-अलग होने के एक वर्ष की कानूनी अवधि के अतिरिक्त धारा 13ख(2) में विनिर्दिष्ट छह माह की कानूनी अवधि प्रथम प्रस्ताव देने के पूर्व पहले ही समाप्त हो गई है ;

(ii) पक्षकारों के पुनर्मिलन के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 32क, नियम 3/अधिनियम की धारा 23/2/कुटुंब न्यायालय अधिनियम की धारा 9 के निबंधनों के अनुसार प्रयासों सहित मध्यस्थता/सुलह के सभी प्रयास असफल हो गए हैं और इस दिशा में किन्हीं और प्रयास द्वारा सफलता की कोई संभावना नहीं है ;

(iii) पक्षकारों ने निर्वाह-भत्ता, बालक की अभिरक्षा या पक्षकारों के बीच किन्हीं अन्य लंबित विवाद्यकों सहित वास्तव में अपने मतभेदों को तय कर लिया है ;

(iv) प्रतीक्षा अवधि से केवल उनकी व्यथा बढ़ेगी ।

6. पूर्वोल्लिखित शर्तों के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि सभी शर्तें पूरी होती हैं सिवाय इस शर्त के कि प्रथम प्रस्ताव देने से पूर्व डेढ़ वर्ष की अवधि बीत चुकी थी । अत: कुटुंब न्यायालय के पास छह माह की अवधि का अधित्यजन करने के लिए फाइल की गई अर्जी को खारिज करने के सिवाय कोई विकल्प नहीं था । मामले को इस प्रकार दृष्टिगत करते हुए, कुटुंब न्यायालय द्वारा कोई गलती नहीं की गई है, जिससे इस न्यायालय को किसी प्रकार का हस्तक्षेप करना आवश्यक हो । जोबनप्रीत कौर (उपर्युक्त); नवराज भाटिया (उपर्युक्त) और प्रियंका चौहान (उपर्युक्त) वाले मामलों के निर्णयों का अवलंब नहीं लिया जा सकता है, यद्यपि उक्त मामलों में डेढ़ वर्ष की अवधि प्रथम प्रस्ताव देने के पूर्व व्यतीत नहीं हुई थी और इसका कारण यह है कि इन मामलों में से किसी में भी अधित्यजन के विवाद्यक पर प्रथम प्रस्ताव देने से पूर्व ही डेढ़ वर्ष की अवधि बीत जाने की बात के अध्यधीन रहते हुए विचार नहीं किया गया था ।

7. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, पुनरीक्षण आवेदन में कोई गुणागुण नहीं है और खारिज किया जाता है ।"

13. हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) के साथ पठित धारा 13ख(1) में विवाह-विच्छेद की डिक्री के लिए प्रस्ताव देने हेतु पृथक्करण की तारीख से डेढ़ वर्ष की कुल प्रतीक्षा अवधि परिकल्पित है । उच्च न्यायालय ने ठीक ही यह निष्कर्ष निकाला था कि धारा 13ख(2) निदेशात्मक है, किंतु दांडिक पुनरीक्षण आवेदन को इस मताभिव्यक्ति के साथ नामंजूर कर दिया कि कुटुंब न्यायालय के पास छह माह की प्रतीक्षा अवधि का अधित्यजन करने के लिए आवेदन को खारिज करने के सिवाय कोई विकल्प नहीं था, चूंकि विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित करने के लिए प्रस्ताव देने हेतु पृथक्करण की तारीख से डेढ़ वर्ष की प्रतीक्षा की शर्त को पूरा नहीं किया गया था ।

14. हिंदू विवाह अधिनियम विवाह की संस्था के प्रति एक

अंतर्निहित सम्मान दिखाता है, जिसका अभिप्राय है पुरुष और स्त्री का जीवन भर के लिए पवित्र बंधन । तथापि, ऐसी परिस्थितियां हो सकती हैं जिनमें विवाह के पक्षकारों के लिए पति-पत्नी के रूप में एक-साथ रहना युक्तियुक्त रूप से संभव न हो ।

15. अत: हिंदू विवाह अधिनियम में विवाह को विनिर्दिष्ट परिस्थितियों में बातिल करने के लिए उपबंध हैं, जो उन विवाहों पर लागू होते हैं जो विधि की दृष्टि में विधिमान्य नहीं हैं और न्यायिक पृथक्करण तथा उक्त अधिनियम की धारा 13(1) में उपबंधित आधारों पर विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा विवाह के विघटन के उपबंध हैं, जो उन मामलों में लागू होते हैं जहां विवाह के पक्षकारों के लिए पति-पत्नी के रूप में एक-साथ रहना युक्तियुक्त रूप से संभव न हो ।

16. हिंदू विवाह अधिनियम में तारीख 27 मई, 1976 से सम्मिलित की गई धारा 13ख, जिसमें पारस्परिक सम्मति द्वारा विवाह-विच्छेद के लिए उपबंध किया गया है, का आशय विवाह की संस्था को कमजोर करना नहीं है । धारा 13ख पति-पत्नी के बीच ऐसी दुस्संधिपूर्ण विवाह-विच्छेद की कार्यवाहियों पर रोक लगाती है, जो प्राय: प्रतिरक्षा-विहिन होती हैं किंतु कठोर प्रक्रियाओं के कारण समय को बर्बाद करने वाली होती हैं । धारा 13ख विवाह के ऐसे पक्षकारों को अनावश्यक कटु मुकदमेबाजी से बचाने और/या कम करने के लिए समर्थ करती है, जहां विवाह असुधार्य रूप से टूट गया हो और पति-पत्नी दोनों ने आपस में अलग-अलग होने का विनिश्चय कर लिया हो । किंतु धारा 13ख के लिए, प्रतिवादी पति या पत्नी मुकदमेबाजी में प्राय: यह प्रतिरक्षा करने के लिए मजबूर होंगे कि विवाह को न बचाया जाए, अपितु केवल प्रतिकूल प्रभाव डालने वाले ऐसे अभिकथनों का खंडन करेंगे, जो यदि न्यायालय द्वारा स्वीकार किए गए, तो प्रतिवादी पति या पत्नी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है ।

17. विधानमंडल ने हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) अपनी प्रज्ञा से धारा 13ख(1) के अधीन विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल करने की तारीख से छह माह की प्रतीक्षा अवधि का उपबंध करने के लिए इसलिए अधिनियमित की थी, यदि पक्षकार अपना विचार बदल लें और

अपने मतभेदों का निराकरण कर लें । छह माह के पश्चात् यदि पक्षकार फिर भी विवाह-विच्छेद के साथ आगे बढ़ना चाहते हैं और एक प्रस्ताव देते हैं तो न्यायालय ऐसी जांच करने के पश्चात्, जो वह ठीक समझे, डिक्री की तारीख से विवाह के विघटन की घोषणा करते हुए विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान करेगा ।

18. धारा 14 के साथ पठित धारा 13ख(2) का उद्देश्य जल्दबाजी में विवाह के विघटन को रोककर विवाह की संस्था को बचाना है । प्राय: यह कहा जाता है कि "समय सर्वोत्तम चिकित्सक है" । समय बीतने के साथ, गुस्सा शांत हो जाता है और नाराजगी दूर हो जाती है । प्रतीक्षा अवधि पति या पत्नी को माफ करने और मतभेदों को भूल जाने का समय देती है । यदि ऐसे पति-पत्नी के बालक हैं, तो वे कुछ समय के पश्चात् अपने बालकों पर विवाह-विच्छेद के पड़ने वाले परिणामों के बारे में सोच सकते हैं और अलग-अलग होने के अपने विनिश्चय पर पुनर्विचार कर सकते हैं । अन्यथा भी, प्रतीक्षा अवधि ऐसे दंपत्ति को चिंतन-मनन करने और इस बारे में एक सुविचारित विनिश्चय करने का समय देती है कि क्या उन्हें वास्तव में सदैव के लिए विवाह को समाप्त कर देना चाहिए या नहीं ।

19. जहां कहीं सुलह की संभावना है, चाहे थोड़ी ही, विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल करने की तारीख से छह माह की प्रतीक्षा अवधि को प्रवृत्त किया जाना चाहिए । तथापि, यदि सुलह की कोई संभावना नहीं है, तो विवाह के पक्षकारों की व्यथा को लंबा खींचना निरर्थक होगा । अत: यदि विवाह असुधार्य रूप से टूट गया है, पति-पत्नी लंबे समय से अलग-अलग रह रहे हैं किंतु अपने मतभेदों को सुलझाने में समर्थ नहीं रहे हैं और आपसी सहमति से अलग होने का विनिश्चय किया है, तो पति-पत्नी दोनों को जीवन में आगे बढ़ने के लिए समर्थ बनाने हेतु यह बेहतर होगा कि विवाह का अंत कर दिया जाए ।

20. कुटुंब न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा अवलंबित **अमरदीप सिंह** बनाम **हरवीन कौर**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह

---

[1] (2017) 8 एस. सी. सी. 746.

अभिनिर्धारित किया था :–

"19. उपरोक्त बातों को वर्तमान स्थिति में लागू करते हुए, हमारा यह मत है कि जहां मामले पर विचार करने वाले न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि धारा 13ख(2) के अधीन कानूनी अवधि का अधित्यजन करने के लिए मामला बनता है, तो वह निम्नलिखित बातों पर विचार करने के पश्चात् ऐसा कर सकता है :–

'(i) धारा 13ख(1) के अधीन पक्षकारों के अलग-अलग होने से एक वर्ष की कानूनी अवधि के अतिरिक्त धारा 13ख(2) में विनिर्दिष्ट छह माह की कानूनी अवधि प्रथम प्रस्ताव देने के पूर्व पहले ही समाप्त हो गई है ;

(ii) पक्षकारों के पुनर्मिलन के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 32क, नियम 3/अधिनियम की धारा 23/2/कुटुंब न्यायालय अधिनियम की धारा 9 के निबंधनों के अनुसार प्रयासों सहित मध्यस्थता/सुलह के सभी प्रयास असफल हो गए हैं और इस दिशा में किसी और प्रयास द्वारा सफलता की संभावना नहीं है ;

(iii) पक्षकारों ने निर्वाह-भत्ता, बालक की अभिरक्षा या पक्षकारों के बीच कोई अन्य लंबित मुद्दे सहित वास्तव में अपने मतभेदों को सुलझा लिया है ;

(iv) प्रतीक्षा अवधि से केवल उनकी व्यथा और बढ़ेगी ।

अधित्यजन के लिए आवेदन प्रथम प्रस्ताव देने के एक सप्ताह पश्चात् अधित्यजन हेतु अनुरोध के लिए कारण देते हुए फाइल किया जा सकता है । यदि उपरोक्त शर्तों का समाधान हो जाता है, तो द्वितीय प्रस्ताव के लिए प्रतीक्षा अवधि का अधित्यजन करना संबंधित न्यायालय के विवेकाधिकार में होगा ।'

20. चूंकि हमारा यह मत है कि धारा 13ख(2) आज्ञापक नहीं है अपितु निदेशात्मक है, इसलिए न्यायालय प्रत्येक मामले के

तथ्यों और परिस्थितियों में वहां अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करने के लिए स्वतंत्र होगा, जहां पक्षकारों में पुन: सहवास की संभाव्यता न हो और आनुकल्पिक पुनर्वास की संभावनाएं हों ।"

21. **अमरदीप सिंह** बनाम **हरवीन कौर** (उपर्युक्त) वाले मामले के पैरा 19 में वर्णित बातें दृष्टांतस्वरूप हैं न कि नि:शेष । ये बातें वे हैं, जिन पर न्यायालय के लिए ध्यान देना आबद्धकर है । यदि ऊपर वर्णित सभी चार शर्तें पूरी हो जाती हैं, तो न्यायालय को आवश्यक रूप से विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन कानूनी प्रतीक्षा अवधि का अधित्यजन करने के लिए अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करना होगा ।

22. कुटुंब न्यायालय तथा उच्च न्यायालय ने **अमरदीप सिंह** बनाम **हरवीन कौर** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय का गलत अर्थान्वयन किया और इस आधार पर अग्रसर हुआ कि इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि उक्त निर्णय के पैरा 19 में विनिर्दिष्ट शर्तें, जो इसमें ऊपर उद्धृत की गई हैं, आज्ञापक हैं और धारा 13ख(2) के अधीन छह माह की कानूनी प्रतीक्षा अवधि का केवल तभी अधित्यजन किया जा सकता है यदि पूर्वोक्त सभी शर्तें पूरी की जाती हैं जिसमें विशिष्ट रूप से विवाह-विच्छेद के लिए प्रस्ताव देने से पूर्व कम से कम डेढ़ वर्ष तक अलग रहने की शर्त सम्मिलित है ।

23. यह भली-भांति स्थिर है कि कोई निर्णय विधि के उस विवाद्यक के लिए, जो उठाया गया है, एक पूर्व-निर्णय है और जिसे विनिश्चित किया गया है । निर्णय को एक कानून की रीति अनुसार नहीं पढ़ा जाना चाहिए और पांडित्यपूर्ण कठोरता से अर्थान्वयन नहीं किया जाना चाहिए । **अमरदीप सिंह** बनाम **हरवीन कौर** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) में वर्णित कम से कम छह माह की कानूनी प्रतीक्षा अवधि आज्ञापक नहीं है अपितु निदेशात्मक है और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यदि पति-पत्नी के बीच पुनर्मिलाप की कोई संभावना नहीं है और प्रतीक्षा अवधि से उनकी व्यथा लंबी खींचने के सिवाय किसी प्रयोजन की पूर्ति नहीं होगी, न्यायालय धारा 13ख(2) की अपेक्षा का अधित्यजन करने के लिए अपने

विवेकाधिकार का प्रयोग करने के लिए स्वतंत्र होगा ।

24. **देवेन्द्र सिंह नरुला** बनाम **मीनाक्षी नांगिया**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था :–

> "8. हमने पक्षकारों की ओर से दी गई दलीलों पर सावधानीपूर्वक विचार किया है और अनिल कुमार जैन **बनाम** माया जैन [(2009) 10 एस. सी. सी. 415 = (2009) 4 एस. सी. सी. (सिविल) 226] वाले मामले में हमारे विनिश्चय पर भी विचार किया है । निस्संदेह यह सही है कि विधानमंडल ने अपनी प्रज्ञा से पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद के लिए अर्जी फाइल करने की तारीख से वास्तव में ऐसा विवाह-विच्छेद प्रदान किए जाने तक छह माह की प्रतीक्षा अवधि इस आशय से अनुबंधित की है कि इससे विवाह की संस्था का बचाव होगा । यह भी सही है कि विधानमंडल के आशय को दूषित नहीं किया जा सकता है किंतु ऐसे अवसर हो सकते हैं जब पक्षकारों के लिए पूर्ण न्याय करने हेतु इस न्यायालय के लिए किसी असुलहनीय स्थिति में अनुच्छेद 142 के अधीन अपनी शक्तियों का अवलंब लेना आवश्यक हो जाता है । वास्तव में, किरन **बनाम** शरद दत्त [(2000) 10 एस. सी. सी. 243] वाले मामले में, जिस पर अनिल कुमार जैन **बनाम** माया जैन [(2009) 10 एस. सी. सी. 415 = (2009) 4 एस. सी. सी. (सिविल) 226] वाले मामले में विचार किया गया था, कई वर्षों तक अलग-अलग रहने के पश्चात् और हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13 के अधीन कार्यवाहियां आरंभ करने के पश्चात् पक्षकारों ने इस न्यायालय के समक्ष विवाह-विच्छेद की अर्जी का संशोधन करने और इसे अधिनियम की धारा 13ख के अधीन कार्यवाही में संपरिवर्तित करने के लिए एक संयुक्त आवेदन फाइल किया था । इस अर्जी को पूर्वोक्त अधिनियम की धारा 13ख के अधीन मानते हुए इस न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन अपनी शक्तियों का अवलंब लेकर विशेष इजाजत याचिका के प्रक्रम पर ही

---

[1] (2012) 8 एस. सी. सी. 580.

पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान कर दी थी । विभिन्न मामलों में भिन्न-भिन्न स्थितियों में इस न्यायालय ने पक्षकारों के बीच पूर्ण न्याय करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन अपनी शक्तियों का अवलंब लिया है ।"

25. **सोनी कुमारी** बनाम **दीपक कुमार**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने छह माह की कानूनी प्रतीक्षा अवधि का अधित्यजन करने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग किया था, जहां पक्षकारों के बीच हुए समझौते के अनुसार पत्नी ने अपने दावों के पूर्णत: समझौते में 15 लाख रुपए का संपूर्ण प्रतिकर प्राप्त किया था और इसके पश्चात् पक्षकारों को पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान की गई थी ।

26. **अनिल कुमार जैन** बनाम **माया जैन**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है :–

"29. पूर्वोक्त चर्चा के विश्लेषण से आखिरकार दो प्रतिपादनाएं निकलती हैं । पहली प्रतिपादना यह है कि यद्यपि विवाह का असुधार्य रूप से टूट जाना, चाहे हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 है या 13ख, इनके अधीन विवाह-विच्छेद प्रदान करने के लिए आधारों में से एक आधार नहीं है, तो भी उक्त सिद्धांत को किसी कार्यवाही के लिए उक्त दो उपबंधों में से किसी के अधीन केवल वहां लागू किया जा सकता है, जहां कार्यवाहियां उच्चतम न्यायालय के समक्ष हों । उच्चतम न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन अपनी असाधारण शक्तियों का प्रयोग करते हुए पक्षकारों को पूर्वोक्त अधिनियम की धारा 13ख में अनुबंधित छह माह की कानूनी अवधि के लिए प्रतीक्षा किए बिना भी राहत प्रदान कर सकता है ।"

27. हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन विवाह-

---

[1] (2016) 16 एस. सी. सी. 346.

[2] (2019) 10 एस. सी. सी. 415.

विच्छेद के लिए प्रस्ताव देने हेतु छह माह की कानूनी प्रतीक्षा अवधि का अभित्यजन करने के लिए विवेकाधिकार का प्रयोग करने हेतु न्यायालय अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित पर भी विचार करेगा :–

(i) वह समयावधि जिसमें पक्षकार विवाहित रहे हैं ;

(ii) पक्षकार कितने समय तक पति-पत्नी के रूप में एक-साथ रहे हैं ;

(iii) वह समयावधि जब से पक्षकार अलग-अलग रह रहे हैं ;

(iv) वह समयावधि जब से मुकदमेबाजी लंबित है ;

(v) क्या पक्षकारों के बीच कोई अन्य कार्यवाहियां चल रही हैं ;

(vi) क्या सुलह की कोई संभावना है ;

(vii) क्या विवाह बंधन से कोई बालक पैदा हुआ है ;

(viii) क्या पक्षकार स्वतंत्र रूप से स्वयं अपनी इच्छा से किसी प्रपीड़न या दबाव के बिना एक वास्तविक समझौते पर पहुंचे हैं जिसमें निर्वाह-व्यय, यदि कोई है, भरण-पोषण और बालकों की अभिरक्षा आदि का ध्यान रखा गया है या नहीं ।

28. इस मामले में, जैसा कि ऊपर मत व्यक्त किया गया है, दोनों पक्षकार सुशिक्षित और बड़े पद पर आसीन सरकारी अधिकारी हैं । वे लगभग 15 माह तक विवाहित रहे थे । यह विवाह चल नहीं सका था । स्वीकृत रूप से, पक्षकार केवल तीन दिन एक-साथ रहे थे, जिसके पश्चात् वे सुलह न होने योग्य मतभेदों के कारण अलग-अलग हो गए थे । पक्षकार तीन दिन को छोड़कर अपने विवाह की संपूर्ण अवधि में अलग-अलग रहे हैं । पक्षकारों द्वारा संयुक्त रूप से यह कथन किया गया है कि सुलह के प्रयास असफल हो गए हैं । पक्षकार पति-पत्नी के रूप में एक-साथ रहने के लिए इच्छुक नहीं हैं । पक्षकार अलग होने के 14 माह से भी ज्यादा समय के पश्चात् अभी भी विवाह-विच्छेद के लिए अग्रसर होना चाहते हैं । पक्षकारों को प्रतीक्षा कराने से, उनकी व्यथा को बढ़ाने के सिवाय, किसी उपयोगी प्रयोजन की पूर्ति नहीं होगी ।

29. अत: यह अपील मंजूर की जाती है । उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 17 नवंबर, 2021 को पारित किया गया आक्षेपित आदेश और कुटुंब न्यायालय, हिसार द्वारा तारीख 12 अक्तूबर, 2021 को पारित किया गया आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाते हैं ।

30. इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, यह न्यायालय अपीलार्थी और प्रत्यर्थी को हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13ख के अधीन पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान करने के लिए उक्त अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन छह माह की कानूनी प्रतीक्षा अवधि का अधित्यजन करते हुए भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करने के लिए समुचित समझता है ।

31. तद्नुसार हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13ख के अधीन पारस्परिक सम्मति से अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के विवाह को विघटित करते हुए विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित की जाएगी ।

32. लंबित आवेदनों, यदि कोई हैं, का निपटारा हो जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2022] 1 उम. नि. प. 61

पार्वती देवी

बनाम

बिहार राज्य अब झारखंड राज्य और अन्य

[2012 की दांडिक अपील सं. 574]

और

राम सहाय महतो

बनाम

बिहार राज्य अब झारखंड राज्य और अन्य

[2012 की दांडिक अपील सं. 575]

17 दिसम्बर, 2021

मुख्य न्यायमूर्ति एन. वी. रमना, न्यायमूर्ति सूर्य कांत और न्यायमूर्ति हिमा कोहली

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 304ख और 201 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113ख और दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 2] – दहेज मृत्यु और साक्ष्य का विलोपन – अभियुक्त-अपीलार्थी (सं. 1) के साथ मृतका का विवाह होने के कुछ ही माह के पश्चात् दहेज की मांग के संबंध में उसके साथ क्रूरता और उसे तंग किया जाना – मृतका के माता-पिता द्वारा दहेज की मांग को पूरा करने में असमर्थता व्यक्त करना – मृतका का दांपत्य गृह से गुम हो जाना – गुम होने के कई दिनों के पश्चात् उसका शव एक नदी के किनारे पाया जाना – पारिस्थितिक साक्ष्य – उपधारणा – दोषसिद्धि – जहां विवाहित स्त्री अपने विवाह के कुछ ही माह के भीतर और उसके ससुराल वालों द्वारा उससे दहेज की मांग करने के ठीक पश्चात् अपने दांपत्य गृह से गुम हो गई और उसका शव एक नदी के किनारे पाया गया तथा अभियुक्त-पति द्वारा उसके गुम होने के बारे में कोई

स्पष्टीकरण नहीं दिया गया, वहां उसकी मृत्यु असामान्य परिस्थितियों में होने के कारण 'दहेज मृत्यु' की उपधारणा की जाएगी और अभियुक्त-पति की दोषसिद्धि उचित है किंतु उसकी माता (अभियुक्त 2) के विरुद्ध कोई विनिर्दिष्ट अभिकथन न होने के कारण उसे दोषमुक्त करना उचित होगा ।

इस मामले के तथ्य यह हैं कि मृतका (फुल्वा देवी) का विवाह अभियुक्त-अपीलार्थी-1 (राम सहाय महतो) के साथ हुआ था । विवाह के कुछ ही माह के भीतर अभियुक्त-1, उसके पिता (जिसकी मृत्यु हो गई है) और माता (अभियुक्त-3) ने दहेज की मांग करके मृतका को तंग करना आरंभ कर दिया । उसके माता-पिता द्वारा अभियुक्तों की मांग को पूरा करने में असमर्थता व्यक्त करने पर मृतका को तंग किया गया । मृतका का पिता यह सूचना प्राप्त होने पर कि उसकी पुत्री अपने दांपत्य गृह से गुम हो गई है, उसकी ससुराल गया और उसका पता नहीं चलने पर पुलिस के पास एक गुमशुदगी की रिपोर्ट दर्ज की । मृतका के पिता (शिकायतकर्ता-अभि. सा. 3) द्वारा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने के पांच दिनों के पश्चात् एक नदी के किनारे से एक अस्थिपंजर बरामद किया गया जिसे फुल्वा देवी का होने के रूप में शनाख्त की गई । अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात् सभी तीनों अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख/201/34 के साथ-साथ दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3 और 4 के अधीन अपराधों के लिए आरोप पत्र फाइल किया गया । विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 304ख और धारा 201 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया । अभियुक्तों द्वारा विचारण न्यायालय के दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश से व्यथित होकर उच्च न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्तों की अपीलों को खारिज कर दिया गया और विचारण न्यायालय के निर्णय से सहमति व्यक्त की । उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर अभियुक्तों द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपीलें फाइल की गईं । अपील के लंबित रहने के दौरान अभियुक्त सं. 2 (अभियुक्त-1 का पिता) की मृत्यु हो जाने के कारण

उसकी अपील का उपशमन हो गया था । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलों को भागत: मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख को साक्ष्य अधिनियम की धारा 13-ख के साथ पढ़ने पर तनिक भी संदेह नहीं रह जाता है कि जब एक बार अभियोजन पक्ष यह प्रदर्शित करने में समर्थ रहा हो कि किसी स्त्री के साथ दहेज की किसी मांग के लिए या उसके संबंध में उसकी मृत्यु से कुछ पूर्व क्रूरता की गई थी या उसे तंग किया गया था, तो न्यायालय इस उपधारणा के आधार पर अग्रसर होगा कि उन व्यक्तियों ने, जिन्होंने उसके साथ दहेज की मांग के संबंध में क्रूरता की थी या तंग किया था, भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अर्थांतर्गत दहेज मृत्यु कारित की है । तथापि, उक्त उपधारणा खंडनीय है और अभियुक्तों द्वारा सटीक साक्ष्य के माध्यम से यह प्रदर्शित करने में समर्थ रहने पर कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के सभी संघटकों का समाधान नहीं किया गया है, इसे निरस्त किया जा सकता है । प्रस्तुत मामले में, अभियोजन पक्ष द्वारा लापरवाही से किए गए अन्वेषण के बावजूद, इस न्यायालय का यह मत है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख में उपवर्णित परिस्थितियों को इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए सिद्ध किया गया है कि मृतका फुल्वा देवी अपने विवाह के कुछ माह के भीतर ही और उससे दहेज की मांग करने के ठीक पश्चात् अपने दांपत्य गृह से गुम हो गई थी और उसकी मृत्यु असामान्य परिस्थितियों में हुई थी, ऐसी मृत्यु को एक "दहेज मृत्यु" के रूप में माना जाएगा । नदी के किनारे से शव की बरामदगी से स्पष्ट रूप से यह उपदर्शित होता है कि फुल्वा देवी की मृत्यु असामान्य परिस्थितियों में हुई थी, जो केवल उसके पति और ससुराल वालों द्वारा स्पष्ट की जा सकती थीं क्योंकि वह जब अचानक गुम हो गई थी तब वह अपने दांपत्य गृह में रह रही थी और उसके गुम हो जाने के लिए कोई युक्तियुक्त स्पष्टीकरण नहीं दिया गया था । अभियुक्तों की ओर से किया गया यह अभिवाक् कि बाराकर नदी के किनारे से बरामद किया गया शव शनाख्त योग्य नहीं था, सारहीन है, जब अभि. सा. 3 मृतका के पिता ने यह साक्ष्य दिया है कि उसने शव की शनाख्त फुल्वा देवी का

होने के रूप में चेहरे के उस भाग से की थी, जो अविकल था और उन वस्त्रों से की थी, जो शव पर पाए गए थे । अभियुक्त-1 के संबंध में उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय ने भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख के अधीन उसके विरुद्ध ठीक ही एक उपधारणा की थी, जिसमें यह विहित किया गया है कि न्यायालय यह उपधारणा करेगा कि किसी व्यक्ति ने किसी स्त्री की दहेज मृत्यु कारित की है, यदि यह दर्शित किया जाता है कि उसकी मृत्यु से कुछ पूर्व ऐसे व्यक्ति द्वारा दहेज की किसी मांग के लिए या उसके संबंध में उसके साथ क्रूरता की गई थी या उसे तंग किया गया था । अभियुक्त-1 द्वारा किए गए इस अभिवाक् को कि घटना के समय वह गांव में मौजूद नहीं था और कोलकाता में था, सारहीन होने के रूप में ठीक ही नामंजूर किया गया है । इसी प्रकार, बाबूलाल यादव, प्रति. सा. 3 और बासुदेव महतो, प्रति. सा. 4 अविश्वसनीय पाए गए थे, विशिष्ट रूप से चूंकि प्रति. सा. 3 ने अभियुक्त-1 का चाचा होने का दावा किया था किंतु अपने भतीजे की पत्नी का नाम तक नहीं बता सका था और प्रति. सा. 4, अभियुक्त-1 के चचेरे भाई ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि उसे उसके विवाह के बारे में या उसकी पत्नी की मृत्यु हो गई है या जीवित है, जानकारी नहीं है । दोनों साक्षियों में से कोई भी साक्षी अपने इस आधार के समर्थन में कोई दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं कर सका था कि सुसंगत समय पर अभियुक्त-1 कोलकाता में कार्यरत था । प्रति. सा. 6, कोटेश्वर यादव, जो उस गांव का निवासी है जहां उक्त अभियुक्त रहते थे किंतु उसने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि वह स्वयं उस गांव का स्थायी निवासी नहीं है, मृतका और उसके जीजा, सहदेव महतो (अभि. सा. 2) के बीच अयुक्त संबंध को या यह कि वह उसके साथ रह रही थी न कि अपने दांपत्य गृह में, सिद्ध करने में पूरी तरह से असफल रहा था । जैसी कि ऊपर चर्चा की गई है, अभियोजन का पक्षकथन एकमात्र रूप से पारिस्थितिक साक्ष्य पर निर्भर है । ऐसा कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी पेश नहीं किया गया था, जो यह साक्ष्य दे सके कि मृतका का शव कैसे बाराकर नदी के किनारे पाया गया था । ऊपर वर्णित परिस्थितियों से, दो परिकल्पना की जा सकती हैं । उनमें से एक यह है कि मृतका की मृत्यु उसके दांपत्य

गृह की चाहरदिवारी के भीतर हुई थी और उसके शव को ले जाकर नदी में फेंक दिया गया था । दूसरी परिकल्पना यह होगी कि मृतका उस समय जीवित थी जब उसे किसी बहाने से नदी की तरफ ले जाया गया हो और उसमें धक्का दे दिया गया तथा डूबने के कारण उसकी मृत्यु हो गई हो । यदि पहली उपधारणा को सही मान लिया जाए, तब निश्चित रूप से कुछ ग्रामीणों ने शव को नदी में ले जाते हुए देखा होता जहां इसे अंतत: फेंक दिया गया था । तथापि, अभियोजन पक्ष ने ऐसे किसी ग्रामीण को पेश नहीं किया था, जिसने मृतका के शव को उसके दांपत्य गृह से बाहर निकालते हुए और नदी की ओर ले जाते हुए देखा था । अत: इस वृत्तांत को उस दूसरे वृत्तांत के समर्थन में त्यक्त करना होगा, जो कि यह है कि मृतका उस समय जीवित थी, जब उसे नदी की ओर ले जाया गया था और फिर उसे बलपूर्वक नदी में धक्का दे दिया गया था और जलीय सतह से जीवित बाहर नहीं निकल सकी थी । पश्चात्वर्ती धारणा को मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट से भी बल मिलता है जिसमें यह अभिलिखित किया गया है कि शव पर मृत्यु-पूर्व की क्षति का कोई चिह्न नहीं था । यदि मृतका की हत्या मकान में की गई होती तब शव पर निश्चित रूप से संघर्ष के कुछ चिह्न पाए जाते । राम सहाय महतो, अभियुक्त-1 (मृतका का पति) को अपराध में आलिप्त करने के लिए अभिलेख पर लाया गया पर्याप्त साक्ष्य है । परिस्थितियों को एक-साथ रखने पर, अपनी पत्नी के जीवन को उसके विवाह के कुछ माह के भीतर दहेज की मांग को पूरा करने में असफल रहने पर समाप्त करने के लिए उसकी दोषिता की ओर अचूक रूप से इंगित करती हैं । इस न्यायालय के मत में, आक्षेपित निर्णय और अभियुक्त-1 पर अधिरोपित दंडादेश का आदेश हस्तक्षेप करने योग्य नहीं है और इसे कायम रखा जाता है । जहां तक पार्वती देवी, अभियुक्त-3 (सास) का संबंध है, अभिलेख पर के साक्ष्य से उसके विरुद्ध दहेज की मांगों के संबंध में केवल कतिपय सर्वग्राही अभिकथन किए गए हैं । प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल किसी विनिर्दिष्ट अभिकथन को उपदर्शित करने में समर्थ नहीं रहे हैं और न ही उसके विरुद्ध किसी विनिर्दिष्ट साक्ष्य या परिसाक्ष्य को इंगित किया गया है । वास्तव में, न्यायालय के समक्ष

केवल प्रत्यक्ष साक्ष्य में अभि. सा. 3 (इत्तिलाकर्ता और विपदग्रस्त का पिता) ने यह उल्लेख किया था कि अभियुक्त-2 ने मृतका को अपहानि पहुंचाने की धमकी दी थी । उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए, इस न्यायालय की यह राय है कि अभियुक्त-3 (2012 की दांडिक अपील सं. 574 में अपीलार्थी) को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 304ख और 201 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध करते हुए निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए निष्कर्षों में हस्तक्षेप करना आवश्यक है । तद्नुसार, अभियुक्त-3 द्वारा फाइल की गई उक्त अपील मंजूर की जाती है । (पैरा 17, 18, 19, 20, 21, 22 और 23)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2015] (2015) 17 एस. सी. सी. 405 :
माया देवी और एक अन्य बनाम
हरियाणा राज्य ; 16

[2011] (2011) 11 एस. सी. सी. 359 :
बंसी लाल बनाम **हरियाणा राज्य** ; 15

[2010] (2010) 3 एस. सी. सी. 152 :
जी. वी. सिद्धारमेश बनाम **कर्नाटक राज्य** ; 16

[2010] (2010) 12 एस. सी. सी. 350 :
अशोक कुमार बनाम **हरियाणा राज्य** । 16

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2012 की दांडिक अपील सं. 574 (इसके साथ 2012 की दांडिक अपील सं. 575).

संविधान 1950 के अनुच्छेद 134 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री अंघा एस. देसाई

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री तपस कुमार सिन्हा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति हिमा कोहली ने दिया ।

न्या. कोहली – राम सहाय महतो, 2012 की दांडिक अपील सं. 575 में अपीलार्थी (जिसे इसमें इसके पश्चात् अभियुक्त-1 कहा गया है) और उसकी माता पार्वती देवी, 2012 की दांडिक अपील सं. 574 में अपीलार्थी (जिसे इसमें इसके पश्चात् अभियुक्त-3 कहा गया है) झारखंड उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 1 मई, 2007 को पारित किए गए उस सामान्य निर्णय से व्यथित हैं, जिसके द्वारा पंचम अपर सेशन न्यायाधीश, गिरिडीह द्वारा अपीलार्थियों और नेमा महतो (अभियुक्त-1 का पिता और अभियुक्त-3 का पति) को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 304ख और धारा 201 के अधीन दोषसिद्ध करते हुए और दोनों अपराधों के लिए क्रमश: 10 वर्ष और 3 वर्ष की अवधि का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश देते हुए तथा दोनों दंडादेश साथ-साथ चलने का निदेश देते हुए तारीख 20 सितंबर, 1999 को पारित किए गए निर्णय को कायम रखा गया था । अभिलेख के लिए, नेमा महतो ने भी 2009 की विशेष इजाजत याचिका (क्रिमिनल) सं. 6955 के रूप में रजिस्ट्रीकृत एक अपील फाइल की थी, जिसका इसके लंबित रहने के दौरान उसकी मृत्यु हो जाने पर उपशमन हो गया था ।

2. अभियोजन का पक्षकथन, जैसा कि आक्षेपित निर्णय से प्रकट होता है, यह है कि इत्तिलाकर्ता, बोधि महतो (अभि. सा. 3) ने अपनी पुत्री, फुल्वा देवी का विवाह वर्ष 1997 में राम सहाय महतो (अभियुक्त-1) के साथ किया था और विवाह के कुछ ही माह के भीतर अभियुक्त-1, उसके पिता नेमा महतो (जिसकी मृत्यु हो गई है) और माता पार्वती देवी (अभियुक्त-3) ने 20,000/- रुपए की राशि की नकदी और एक राजदूत मोटरसाइकिल के लिए मांग करके फुल्वा देवी को तंग करने लगे । उसके माता-पिता द्वारा उनकी मांगों को पूरा करने में असमर्थता व्यक्त करने पर उस पर निर्दयतापूर्वक हमला किया गया और यह धमकी दी गई कि अभियुक्त-1 का विवाह एक अन्य लड़की के साथ कर दिया जाएगा । उसके पश्चात्, यह सूचना प्राप्त होने पर कि उसकी पुत्री अपने दांपत्य गृह से गुम हो गई है, अभि. सा. 3 उसके घर गया किंतु उसका पता नहीं चलने पर वह बिरनी पुलिस थाने गया और एक गुमशुदगी की शिकायत दर्ज कराई । स्थानीय पुलिस द्वारा तारीख 8 अगस्त, 1997

को अभियुक्त-1, अभियुक्त-2 और अभियुक्त-3 के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 304/201/34 के अधीन अपराधों के लिए एक मामला, 1997 का मामला सं. 71, रजिस्ट्रीकृत किया गया । अन्वेषण पूर्ण होने के उपरांत, सभी तीनों अभियुक्तों के विरुद्ध पूर्वोक्त अपराधों के साथ-साथ दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3 और 4 के अधीन अपराधों के लिए एक आरोप पत्र फाइल किया गया ।

3. अभि. सा. 3 द्वारा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने के पांच दिनों के पश्चात् तारीख 13 अगस्त, 1997 को गांव सिरमाडीह से लगभग एक किलोमीटर से कम दूरी पर बाराकर नदी के किनारे से एक अस्थिपंजर बरामद किया गया, जिसे फुल्वा देवी का होना माना गया । तीनों अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख/34, 201/34 के अधीन आरोप विरचित किए गए । अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों की दोषिता को सिद्ध करने के लिए सात साक्षियों की परीक्षा की, जबकि अभियुक्तों ने छह साक्षियों की परीक्षा की । अभियोजन पक्ष द्वारा परीक्षा किए गए तात्विक साक्षियों में डा. बी. पी. सिंह (अभि. सा. 1), वह डाक्टर जिसने शव की मरणोत्तर परीक्षा की थी, सहदेव महतो (अभि. सा. 2) मृतका का जीजा, बोधि महतो (अभि. सा. 3), मृतका का पिता तथा इत्तिलाकर्ता, जोगेश्वर महतो (अभि. सा. 4), मृतका का भाई, टिकी देवी (अभि. सा. 5), अभि. सा. 4 की पत्नी (मृतका की भाभी) और सुरेश प्रसाद सिंह (अभि. सा. 6), अन्वेषक अधिकारी सम्मिलित थे ।

4. उच्च न्यायालय ने पूर्वोक्त साक्षियों के अभिसाक्ष्य का समालोचनात्मक विश्लेषण करने के पश्चात् उनके परिसाक्ष्य का सारांश अभिलिखित किया । डा. भूपेन्द्र प्रसाद सिंह (अभि. सा. 1) ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि उसने फुल्वा देवी का शव होने के रूप में उसके समक्ष प्रस्तुत किए गए शव की शव-परीक्षा की थी और शव को पूरी तरह से सड़ा हुआ पाया था । दाईं टांग, दांया प्रबाहु और दांया हाथ गायब थे । इसी प्रकार, घुटने के जोड़ के नीचे का दांया उपरि अंग और दांया निचला अंग गायब थे । मृत्यु-पूर्व की कोई क्षति होने का कोई साक्ष्य नहीं पाया गया था । मरणोत्तर परीक्षा करने तक जो समय बीत

गया था, उसका निर्धारण एक सप्ताह के रूप में किया गया था ।

5. बोधि महतो (अभि. सा. 3), इत्तिलाकर्ता और मृतका का पिता, ने यह साक्ष्य दिया था कि उसकी मृतका पुत्री का विवाह अभियुक्त-1 के साथ हुआ था और उसके विवाह के कुछ ही माह के भीतर अभियुक्तों ने उसके साथ दुर्व्यवहार करना आरंभ कर दिया था और उसके माता-पिता द्वारा दिए गए अपर्याप्त दहेज के बारे में शिकायत करने लगे थे । उन्होंने उसकी पुत्री से 20,000/- रुपए नकद और एक राजदूत मोटरसाइकिल की मांग की थी और उसे यह धमकी दी थी कि यदि उनकी मांग पूरी नहीं की गई, तो उसे जान से मार दिया जाएगा । फुल्वा देवी ने अतिरिक्त दहेज की इस मांग के बारे में अपने माता-पिता, भाई और भाभी को अवगत कराया था । इसी प्रकार का एक संदेश उसके दामाद, सहदेव महतो (अभि. सा. 2) को भेजा गया था जिसके समक्ष अभियुक्तों ने अपर्याप्त दहेज के मुद्दे को उठाया था । अभि. सा. 3 ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि जब वह "आषाढ़" के माह में अपनी पुत्री के दांपत्य गृह में गया था, तो अभियुक्त-1 और उसके पिता (अभियुक्त-2, जिसकी मृत्यु हो गई है) ने उसे यह चेतावनी दी थी कि यदि उसने उनकी मांग पूरी नहीं की, तो वे फुल्वा देवी को दांपत्य गृह से बाहर निकाल देंगे और अभियुक्त-1 का विवाह किसी अन्य के साथ कर देंगे । पूर्वोक्त घटना के पंद्रह दिनों की अवधि के भीतर ही अभि. सा. 3 को अभि. सा. 2 से अपनी पुत्री के दांपत्य गृह से गुम हो जाने के बारे में सूचना प्राप्त हुई थी । उसके दांपत्य गृह में जाने और सभी जगह उसको ढूंढ़ने पर जब उसका पता नहीं चल सका, तो स्थानीय पुलिस के पास एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई क्योंकि अभि. सा. 3 ने यह कहा था कि उसके पास यह विश्वास करने का कारण है कि अभियुक्तों ने उसकी हत्या की है और उसके शव को कहीं छिपा दिया है । शिकायत दर्ज होने के केवल पांच दिनों के पश्चात् मृतका का शव बरामद किया गया था । अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 घटनास्थल पर गए थे, जहां से शव बरामद किया गया था । चेहरा देखने पर, जो भागत: अक्षत था और उसके वस्त्रों की शनाख्त करने पर अभि. सा. 3 ने शव की शनाख्त अपनी पुत्री का होने के रूप में की थी । अभियुक्तों

की ओर से की गई प्रतिपरीक्षा में अभि. सा. 3 अपने परिसाक्ष्य पर कायम और अडिग रहा था ।

6. सहदेव महतो (अभि. सा. 2), अभि. सा. 3 का दामाद और जोगेश्वर महतो (अभि. सा. 4), अभि. सा. 3 के पुत्र ने वैसा ही साक्ष्य दिया था जैसा कि अभि. सा. 3 द्वारा दिया गया था । उन्होंने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि फुल्वा देवी के साथ दुर्व्यवहार किया जा रहा था और उससे दहेज की मांग करने के अतिरिक्त, उसे यह धमकी दी गई थी कि यदि दहेज की मांग पूरी नहीं की जाती है, तो उसका पति किसी अन्य से पुनर्विवाह कर लेगा । अभि. सा. 4 ने यह कथन किया था कि फुल्वा देवी ने अपने पैतृक गृह में आने के दौरान अपने परिवार के सदस्यों को सभी अभियुक्तों द्वारा उससे की गई दहेज की मांगों और उसे दी गई इस धमकी के बारे में सूचित किया था कि यदि उनकी मांग पूरी नहीं की जाती है, तो वे अपने पुत्र, अभियुक्त-1 का दूसरा विवाह कर देंगे ।

7. दोनों साक्षियों ने यह वर्णन किया था कि कैसे उन्हें मृतका के उसके दांपत्य गृह से गुम हो जाने के बारे में पता चला था । अभि. सा. 2 ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि उसे तृतीय पक्षकारों से यह पता चला था कि फुल्वा देवी अपने दांपत्य गृह से गुम हो गई है और उसके शव को उसकी हत्या करने के पश्चात् बाराकर नदी में फेंक दिया गया है । उसने तुरंत अपने ससुर, अभि. सा. 3 को सूचित किया था, जो नदी के किनारों पर अपनी पुत्री को ढूंढने निकला था । अभि. सा. 3 ने अपने दामाद, अभि. सा. 2 और अपने पुत्र, अभि. सा. 4 के साथ व्यापक रूप से ढूंढ़ा गया था और पुलिस को भी सूचित किया था । निकटवर्ती नदी के किनारे से एक शव की बरामदगी और उनके द्वारा शव को फुल्वा देवी का होने के रूप में शनाख्त करने के पहलू पर दोनों साक्षियों का शेष वृत्तांत एक-दूसरे की संपुष्टि करते हुए अविचल रहा था ।

8. उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि सहदेव महतो, अभि. सा. 2 का साक्ष्य इस सीमा तक सुसंगत है कि फुल्वा देवी की मृत्यु से पूर्व उसने उसे अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा उससे की गई दहेज

की मांग के बारे में बताया था । वह घटना का प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं था अपितु उसने सुनी-सुनाई बात के आधार पर यह कहा था कि उसे एक ग्रामीण से यह पता चला था कि अभियुक्तों द्वारा फुल्वा देवी की हत्या करने के पश्चात् उसके शव को बाराकर नदी में फेंक दिया गया है । उक्त साक्षी ने शव फुल्वा देवी का होने के रूप में शनाख्त उन वस्त्रों के आधार पर की थी, जो वह पहने हुए थी । जोगेश्वर महतो, अभि. सा. 4 ने अपने पिता, अभि. सा. 3 के दहेज की मांग के पहलू पर परिसाक्ष्य की और इस तथ्य की संपुष्टि की थी कि फुल्वा देवी ने यह बात पैतृक गृह में अपनी एक मुलाकात के दौरान संसूचित की थी । सभी तीनों साक्षियों ने एक यह एक जैसा आधार लिया था कि मृतका से दहेज की मांग उस समय के आसपास की गई थी, जब वह अपने दांपत्य गृह से गुम हो गई थी और वह अंतिम बार अपने दांपत्य गृह में रह रही थी जब उसे उचित अवसर पाकर एक दिन अचानक मौत के घाट उतार दिया गया ।

9. उच्च न्यायालय ने उस लापरवाह रीति के बारे में प्रतिकूल टीका-टिप्पणी की थी, जिस रीति में अन्वेषक अधिकारी, सुरेश प्रसाद सिंह (अभि. सा. 6) द्वारा अन्वेषण किया गया था और जिसने साक्षियों के कथन अभिलिखित किए थे, फुल्वा देवी की मृत्यु-समीक्षा रिपोर्ट तैयार की थी, घटना के दो स्थलों के बारे में साक्ष्य दिया था अर्थात् गांव करणी में मृतका का दांपत्य गृह और बाराकर नदी के किनारे का स्थल जहां शव पाया गया था, किंतु अभियुक्तों के पड़ौसियों के कथन सहित उस गांव के किसी भी निवासी का कथन अभिलिखित करने में असफल रहा था जिसमें केवल 25 मकान थे और न ही मृतका के शव को ढूंढ़ने के लिए कोई संगठित प्रयास किया था । केवल मृतका के पिता, भाई और जीजा अर्थात् क्रमश: अभि. सा. 3, अभि. सा. 4 और अभि. सा. 2 द्वारा किए गए सतत प्रयास पर ही अंततोगत्वा फुल्वा देवी के शव का अपने दांपत्य गृह से गुम हो जाने की तारीख से लगभग एक सप्ताह के पश्चात् पता चला था, जिस समय तक शव लगभग सड़ चुका था ।

10. पारिस्थितिक साक्ष्य की कड़ियों को उस बिंदु से लेकर, जब

फुल्वा देवी ने अपने माता-पिता और नातेदारों को अपने विवाह के कुछ ही माह के भीतर अभियुक्तों द्वारा की गई उससे दहेज की मांग के बारे में सूचित किया था, उस प्रक्रम तक जोड़ते हुए जब वह अचानक अपने दांपत्य गृह से गुम हो गई थी और अंततः जब उसके शव को बाराकर नदी के किनारे से बरामद किया गया था, उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा सभी तीनों अभियुक्तों को निम्नलिखित आधारों पर अपराध में आलिप्त करने के लिए निकाले गए निष्कर्षों से सहमति व्यक्त की थी :–

"(i) मृतका फुल्वा देवी का विवाह नमो महतो और पार्वती देवी के पुत्र राम सहाय महतो के साथ उसकी मृत्यु के सात वर्ष के भीतर हुआ था ;

(ii) मृतका का शव तारीख 23 अगस्त, 1997 को बाराकर नदी में पाया गया था और यह अविचल साक्ष्य हैं कि मृतका की मृत्यु सामान्य परिस्थितियों से अन्यथा हुई थी ;

(iii) मृतका अपनी मृत्यु से पूर्व अपनी ससुराल में थी ;

(iv) मृतका का अता-पता नहीं था किंतु न तो उसके माता-पिता को सूचना दी गई थी और न ही पुलिस को ;

(v) मृतका पर अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा, जो उसका पति और उसके अन्य नातेदार हैं, हमला किया गया था और उसे तंग किया गया था ;

(vi) ऐसी क्रूरता और तंग किया जाना दहेज की मांग के संबंध में था ;

(vii) ऐसी क्रूरता और तंग किया जाना उसकी मृत्यु से कुछ पूर्व किया गया था ।"

11. उच्च न्यायालय, विचारण न्यायालय द्वारा अभिव्यक्त किए गए इस मत से सहमत था कि अभियुक्त उन परिस्थितियों को स्पष्ट करने में पूरी तरह से असफल रहे हैं जिनमें मृतका अपने दांपत्य गृह से गायब हो गई थी और अभियुक्तों द्वारा ली गई इस प्रतिरक्षा को

पूर्णतया नामंजूर कर दिया गया था कि वह अपने पति और ससुराल वालों के साथ नहीं रह रही थी बल्कि वह अपने जीजा, अभि. सा. 2 के साथ रह रही थी । अभियुक्तों द्वारा किए गए इस एक अन्य अभिवाक् को भी कि बाराकर नदी के किनारे से बरामद किए गए शव की शनाख्त नहीं हुई थी, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए अस्वीकार कर दिया गया था कि अभियुक्त उस परिस्थिति को स्पष्ट करने में असफल रहे हैं जिसमें मृतका अपने दांपत्य गृह से गुम हो गई थी और उसका अता-पता नहीं चल सका था । मृतका का अपने दांपत्य गृह से गुम हो जाने के बारे में परिवार के सदस्यों या पुलिस को सूचना देने में असफल रहने और उनकी ओर से उसे ढूंढ़ने का कोई प्रयास न करने के अभियुक्तों के आचरण को भी उनके विरुद्ध अभिनिर्धारित किया गया था । वास्तव में, अभि. सा. 4, मृतका के भाई ने स्पष्ट रूप से यह अभिसाक्ष्य दिया था कि जब वह उसके दांपत्य गृह में गया था, तो उसने वहां ताला लगा हुआ पाया था और सभी अभियुक्त घटना के तुरंत पश्चात् फरार थे, जो कि एक महत्वपूर्ण परिस्थिति थी जिसे उनके विरुद्ध अभिनिर्धारित किया गया था ।

12. अभियोजन के पक्षकथन और अभियुक्तों द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य की परीक्षा करने के लिए हम भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के सुसंगत उपबंध, जो "दहेज मृत्यु" से संबंधित है, को नीचे उद्धृत कर सकते हैं :–

> "**304ख. दहेज मृत्यु** – (1) जहां किसी स्त्री की मृत्यु किसी दाह या शारीरिक क्षति द्वारा कारित की जाती है या उसके विवाह के सात वर्ष के भीतर सामान्य परिस्थितियों से अन्यथा हो जाती है और यह दर्शित किया जाता है कि उसकी मृत्यु के कुछ पूर्व उसके पति ने या उसके पति के किसी नातेदार ने, दहेज की किसी मांग के लिए, या उसके संबंध में, उसके साथ क्रूरता की थी या उसे तंग किया था, वहां ऐसी मृत्यु को "दहेज मृत्यु" कहा जाएगा, और ऐसा पति या नातेदार उसकी मृत्यु कारित करने वाला समझा जाएगा ।
>
> **स्पष्टीकरण** – इस उपधारा के प्रयोजनों के लिए "दहेज" का

वही अर्थ है जो दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 (1961 का 28) की धारा 2 में है ।

(2) जो कोई दहेज मृत्यु कारित करेगा वह कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष से कम की नहीं होगी किंतु जो आजीवन कारावास तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा ।"

13. जैसा कि पूर्वोक्त उपबंध से देखा जा सकता है, अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध करने के लिए निम्नलिखित पूर्व-अपेक्षाओं को पूरा किया जाना आवश्यक है :–

(i) यह कि किसी स्त्री की मृत्यु दाह-क्षतियां या शारीरिक क्षति कारित करके की गई होनी चाहिएं अथवा सामान्य परिस्थिति से अन्यथा कारित हुई हो ;

(ii) यह कि ऐसी मृत्यु अवश्य उसके विवाह के सात वर्ष की अवधि के भीतर होनी चाहिए ;

(iii) यह कि स्त्री के साथ उसकी मृत्यु से कुछ पूर्व उसके पति के हाथों क्रूरता की गई हो या उसे तंग किया गया हो ; और

(iv) ऐसी कोई क्रूरता या तंग किया जाना दहेज की किसी मांग के लिए या उसके संबंध में होना चाहिए ।

14. अब भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113ख पर आते हैं । इस धारा में दहेज मृत्यु के संबंध में उपधारणा को निर्दिष्ट किया गया है और यह निम्नलिखित प्रकार से है :–

"**113ख. दहेज मृत्यु के बारे में उपधारणा** – जब प्रश्न यह है कि किसी व्यक्ति ने किसी स्त्री की दहेज मृत्यु की है और यह दर्शित किया जाता है कि मृत्यु के कुछ पूर्व ऐसे व्यक्ति ने दहेज की किसी मांग के लिए, या उसके संबंध में उस स्त्री के साथ क्रूरता की थी या उसको तंग किया था तो न्यायालय यह उपधारणा करेगा कि ऐसे व्यक्ति ने दहेज मृत्यु कारित की थी ।"

भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के साथ संलग्न स्पष्टीकरण में यह

कहा गया है कि "दहेज" शब्द का वही अर्थ है जो दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 2 में है, जो निम्नलिखित है :–

> "**2, 'दहेज' की परिभाषा** – इस अधिनियम में, 'दहेज' से कोई ऐसी संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति अभिप्रेत है जो विवाह के समय या उसके पूर्व या पश्चात् –
>
> (क) विवाह के एक पक्षकार द्वारा विवाह के दूसरे पक्षकार को; या
>
> (ख) विवाह के किसी भी पक्षकार के माता-पिता द्वारा या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा विवाह के किसी भी पक्षकार को या किसी अन्य व्यक्ति को,
>
> उक्त पक्षकारों के विवाह के प्रतिफलस्वरूप या तो प्रत्यक्षत: या अप्रत्यक्षत: दी गई है या दी जाने के लिए करार की गई है, किंतु उन व्यक्तियों के संबंध में जिन्हें मुस्लिम स्वीय विधि (शरीयत) लागू होती है, मेहर इसके अंतर्गत नहीं है ।"

15. पूर्वोक्त उपबंधों के महत्व को इस न्यायालय के कई विनिश्चयों में स्पष्ट किया गया है । **बंसी लाल** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि :–

> "17. धारा 498-क (एवमेव धारा 304ख) के अधीन मामले पर विचार करते समय क्रूरता करने की बात को मृत्यु के समय की अति सन्निकटता के दौरान किया जाना साबित किया जाना चाहिए और यह क्रूरता लगातार होनी चाहिए तथा अभियुक्त द्वारा शारीरिक या मानसिक रूप से इस प्रकार लगातार तंग किए जाने से मृतका का जीवन दयनीय बन गया हो जिससे उसे आत्महत्या करने के लिए मजबूर होना पड़ा हो ।"

16. **माया देवी और एक अन्य** बनाम **हरियाणा राज्य**[2] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि :–

---

[1] (2011) 11 एस. सी. सी. 359.

[2] (2015) 17 एस. सी. सी. 405.

"23. धारा 304ख के उपबंधों को लागू करने के लिए, अपराध के मुख्य संघटकों में से एक संघटक जिसे सिद्ध किया जाना आवश्यक है, यह है कि 'स्त्री की मृत्यु से कुछ पूर्व' उसके साथ 'दहेज की मांग के लिए या उसके संबंध में' क्रूरता की गई थी या तंग किया गया था । भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख में प्रयुक्त 'उसकी मृत्यु से कुछ पूर्व' अभिव्यक्ति सन्निकटता की कसौटी के विचार के साथ मौजूद है । वास्तव में, अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी है कि अभिकथित दहेज की मांग और तंग किए जाने के बीच कोई सन्निकटता नहीं है । उक्त दावे के संबंध में, हम अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य पर विचार करते समय विचार करेंगे । यद्यपि प्रयुक्त की गई भाषा 'उसकी मृत्यु से कुछ पूर्व' है, तो भी कोई निश्चित अवधि अधिनियमित नहीं की गई है और 'उसकी मृत्यु से कुछ पूर्व' अभिव्यक्ति को दोनों ही अधिनियमितियों में परिभाषित नहीं किया गया है । तद्नुसार, उस अवधि का अवधारण जो 'उसकी मृत्यु से कुछ पूर्व' पद के भीतर आ सकती है, न्यायालयों द्वारा उसे प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करते हुए अवधारित किया जाना चाहिए, तथापि, उक्त अभिव्यक्ति का सामान्य तौर पर यह अर्थ होगा कि संबंधित क्रूरता या तंग किए जाने तथा प्रश्नगत मृत्यु के बीच अंतराल अधिक नहीं होना चाहिए । दूसरे शब्दों में, दहेज की मांग पर आधारित क्रूरता के प्रभाव और संबंधित मृत्यु के बीच एक सन्निकट और सजीव संबंध की विद्यमानता होना आवश्यक है । यदि क्रूरता की अभिकथित घटना समय से मेल नहीं खाती और संबंधित स्त्री की मानसिक शांति को भंग किए जाने के प्रयोजनार्थ अत्यंत पुरानी हो गई है, तो इसका कोई महत्व नहीं होगा ।"

(**जी. वी. सिद्धारमेश** बनाम **कर्नाटक राज्य**[1] और **अशोक कुमार** बनाम

[1] (2010) 3 एस. सी. सी. 152.

हरियाणा राज्य[1] वाले मामले भी देखें) ।

17. भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख को साक्ष्य अधिनियम की धारा 13-ख के साथ पढ़ने पर तनिक भी संदेह नहीं रह जाता है कि जब एक बार अभियोजन पक्ष यह प्रदर्शित करने में समर्थ रहा हो कि किसी स्त्री के साथ दहेज की किसी मांग के लिए या उसके संबंध में उसकी मृत्यु से कुछ पूर्व क्रूरता की गई थी या उसे तंग किया गया था, तो न्यायालय इस उपधारणा के आधार पर अग्रसर होगा कि उन व्यक्तियों ने, जिन्होंने उसके साथ दहेज की मांग के संबंध में क्रूरता की थी या तंग किया था, भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अर्थांतर्गत दहेज मृत्यु कारित की है । तथापि, उक्त उपधारणा खंडनीय है और अभियुक्तों द्वारा सटीक साक्ष्य के माध्यम से यह प्रदर्शित करने में समर्थ रहने पर कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के सभी संघटकों का समाधान नहीं किया गया है, इसे निरस्त किया जा सकता है ।

18. प्रस्तुत मामले में, अभियोजन पक्ष द्वारा लापरवाही से किए गए अन्वेषण के बावजूद, हमारा यह मत है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख में उपवर्णित परिस्थितियों को इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए सिद्ध किया गया है कि मृतका फुल्वा देवी अपने विवाह के कुछ माह के भीतर ही और उससे दहेज की मांग करने के ठीक पश्चात् अपने दांपत्य गृह से गुम हो गई थी और उसकी मृत्यु असामान्य परिस्थितियों में हुई थी, ऐसी मृत्यु को एक "दहेज मृत्यु" के रूप में माना जाएगा ।

19. नदी के किनारे से शव की बरामदगी से स्पष्ट रूप से यह उपदर्शित होता है कि फुल्वा देवी की मृत्यु असामान्य परिस्थितियों में हुई थी, जो केवल उसके पति और ससुराल वालों द्वारा स्पष्ट की जा सकती थीं क्योंकि वह जब अचानक गुम हो गई थी तब वह अपने दांपत्य गृह में रह रही थी और उसके गुम हो जाने के लिए कोई युक्तियुक्त स्पष्टीकरण नहीं दिया गया था । अभियुक्तों की ओर से किया गया यह अभिवाक् कि बाराकर नदी के किनारे से बरामद किया

---

[1] (2010) 12 एस. सी. सी. 350.

गया शव शिनाख्त योग्य नहीं था, सारहीन है, जब अभि. सा. 3 मृतका के पिता ने यह साक्ष्य दिया है कि उसने शव की शनाख्त फुल्वा देवी का होने के रूप में चेहरे के उस भाग से की थी, जो अविकल था और उन वस्त्रों से की थी, जो शव पर पाए गए थे । अभियुक्त-1 के संबंध में उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय ने भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख के अधीन उसके विरुद्ध ठीक ही एक उपधारणा की थी, जिसमें यह विहित किया गया है कि न्यायालय यह उपधारणा करेगा कि किसी व्यक्ति ने किसी स्त्री की दहेज मृत्यु कारित की है, यदि यह दर्शित किया जाता है कि उसकी मृत्यु से कुछ पूर्व ऐसे व्यक्ति द्वारा दहेज की किसी मांग के लिए या उसके संबंध में उसके साथ क्रूरता की गई थी या उसे तंग किया गया था । इस बात को अभियुक्त-3 के विरुद्ध कहां तक अभिनिर्धारित किया जा सकता है, इसकी चर्चा बाद में की जाएगी ।

20. अभियुक्त-1 द्वारा किए गए इस अभिवाक् को कि घटना के समय वह गांव में मौजूद नहीं था और कोलकाता में था, सारहीन होने के रूप में ठीक ही नामंजूर किया गया है । इसी प्रकार, बाबूलाल यादव, प्रति. सा. 3 और बासुदेव महतो, प्रति. सा. 4 अविश्वसनीय पाए गए थे, विशिष्ट रूप से चूंकि प्रति. सा. 3 ने अभियुक्त-1 का चाचा होने के दावा किया था किंतु अपने भतीजे की पत्नी का नाम तक नहीं बता सका था और प्रति. सा. 4, अभियुक्त-1 के चचेरे भाई ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि उसे उसके विवाह के बारे में या उसकी पत्नी की मृत्यु हो गई है या जीवित है, जानकारी नहीं है । दोनों साक्षियों में से कोई भी साक्षी अपने इस आधार के समर्थन में कोई दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं कर सका था कि सुसंगत समय पर अभियुक्त-1 कोलकाता में कार्यरत था । प्रति. सा. 6, कोटेश्वर यादव, जो उस गांव का निवासी है जहां उक्त अभियुक्त रहते थे किंतु उसने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि वह स्वयं उस गांव का स्थायी निवासी नहीं है, मृतका और उसके जीजा, सहदेव महतो (अभि. सा. 2) के बीच अयुक्त संबंध को या यह कि वह उसके साथ रह रही थी न कि अपने दांपत्य गृह में, सिद्ध करने में पूरी तरह से असफल रहा था ।

21. जैसी कि ऊपर चर्चा की गई है, अभियोजन का पक्षकथन एकमात्र रूप से पारिस्थितिक साक्ष्य पर निर्भर है । ऐसा कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी पेश नहीं किया गया था, जो यह साक्ष्य दे सके कि मृतका का शव कैसे बाराकर नदी के किनारे पाया गया था । ऊपर वर्णित परिस्थितियों से, दो परिकल्पना की जा सकती हैं । उनमें से एक यह है कि मृतका की मृत्यु उसके दांपत्य गृह की चाहरदिवारी के भीतर हुई थी और उसके शव को ले जाकर नदी में फेंक दिया गया था । दूसरी परिकल्पना यह होगी कि मृतका उस समय जीवित थी जब उसे किसी बहाने से नदी की तरफ ले जाया गया हो और उसमें धक्का दे दिया गया हो तथा डूबने के कारण उसकी मृत्यु हो गई हो । यदि पहली उपधारणा को सही मान लिया जाए, तब निश्चित रूप से कुछ ग्रामीणों ने शव को नदी में ले जाते हुए देखा होता जहां इसे अंतत: फेंक दिया गया था । तथापि, अभियोजन पक्ष ने ऐसे किसी ग्रामीण को पेश नहीं किया था, जिसने मृतका के शव को उसके दांपत्य गृह से बाहर निकालते हुए और नदी की ओर ले जाते हुए देखा था । अत: इस वृत्तांत को उस दूसरे वृत्तांत के समर्थन में त्यक्त करना होगा, जो कि यह है कि मृतका उस समय जीवित थी, जब उसे नदी की ओर ले जाया गया था और फिर उसे बलपूर्वक नदी में धक्का दे दिया गया था और जलीय सतह से जीवित बाहर नहीं निकल सकी थी । पश्चात्वर्ती धारणा को मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट से भी बल मिलता है जिसमें यह अभिलिखित किया गया है कि शव पर मृत्यु-पूर्व की क्षति का कोई चिह्न नहीं था । यदि मृतका की हत्या मकान में की गई होती तब शव पर निश्चित रूप से संघर्ष के कुछ चिह्न पाए जाते ।

22. राम सहाय महतो, अभियुक्त-1 (मृतका का पति) को अपराध में आलिप्त करने के लिए अभिलेख पर लाया गया पर्याप्त साक्ष्य है । परिस्थितियों को एक-साथ रखने पर, अपनी पत्नी के जीवन को उसके विवाह के कुछ माह के भीतर दहेज की मांग को पूरा करने में असफल रहने पर समाप्त करने के लिए उसकी दोषिता की ओर अचूक रूप से इंगित करती हैं । हमारे मत में, आक्षेपित निर्णय और अभियुक्त-1 पर अधिरोपित दंडादेश का आदेश हस्तक्षेप करने योग्य नहीं है और इसे

कायम रखा जाता है । तद्नुसार, अभियुक्त-1 द्वारा फाइल की गई 2012 की दांडिक अपील सं. 575 खारिज की जाती है । उक्त अपीलार्थी, जो फिलहाल जमानत पर है, को अपने दंडादेश की शेष अवधि को भुगतने के लिए चार सप्ताह के भीतर विचारण न्यायालय/कारागार अधीक्षक के समक्ष अभ्यर्पण करने का निदेश दिया जाता है ।

23. जहां तक पार्वती देवी, अभियुक्त-3 (सास) का संबंध है, अभिलेख पर के साक्ष्य से उसके विरुद्ध दहेज की मांगों के संबंध में केवल कतिपय सर्वग्राही अभिकथन किए गए हैं । प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल किसी विनिर्दिष्ट अभिकथन को उपदर्शित करने में समर्थ नहीं रहे हैं और न ही उसके विरुद्ध किसी विनिर्दिष्ट साक्ष्य या परिसाक्ष्य को इंगित किया गया है । वास्तव में, न्यायालय के समक्ष केवल प्रत्यक्ष साक्ष्य में अभि. सा. 3 (इत्तिलाकर्ता और विपदग्रस्त का पिता) ने यह उल्लेख किया था कि अभियुक्त-2 ने मृतका को अपहानि पहुंचाने की धमकी दी थी । उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए, हमारी यह राय है कि अभियुक्त-3 (2012 की दांडिक अपील सं. 574 में अपीलार्थी) को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 304ख और 201 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध करते हुए निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए निष्कर्षों में हस्तक्षेप करना आवश्यक है । तद्नुसार, अभियुक्त-3 द्वारा फाइल की गई उक्त अपील मंजूर की जाती है । यदि उसे किसी अन्य मामले में निरुद्ध किए जाने की आवश्यकता नहीं है, तो उसे तुरंत छोड़े जाने का निदेश दिया जाता है ।

अपीलें भागत: मंजूर की गईं ।

जस.

[2022] 1 उम. नि. प. 81

मध्य प्रदेश राज्य

बनाम

जोगेन्द्र और एक अन्य

[2012 की दांडिक अपील सं. 190]

11 जनवरी, 2022

मुख्य न्यायमूर्ति एन. वी. रमना, न्यायमूर्ति ए. एस. बोपन्ना और न्यायमूर्ति हिमा कोहली

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 304ख और 498क [सपठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 2] – दहेज मृत्यु और क्रूरता – अभियुक्तों-पति और ससुर द्वारा मृतका-विवाहित स्त्री से विवाह के छह माह के पश्चात् से मकान का निर्माण करने के लिए अपने परिवार वालों से धन लाने की मांग किया जाना – मांग पूरी न होने पर अभियुक्तों द्वारा उसे तंग और उसके साथ क्रूरता किया जाना – मृतका द्वारा परेशान होकर विवाह के चार वर्ष के भीतर अपने दांपत्य-गृह में आत्महत्या कर लेना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को दोषसिद्ध और आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा मकान के निर्माण के लिए की गई धन की मांग को दहेज की मांग न मानते हुए अभियुक्तों को धारा 304ख के अधीन अपराध के लिए दोषमुक्त किया जाना – ससुर को धारा 498क के अधीन भी दोषमुक्त किया जाना – संधार्यता – 'दहेज' शब्द की परिभाषा एक व्यापक परिभाषा होने के कारण इसके अंतर्गत सभी प्रकार की संपत्ति और मूल्यवान प्रतिभूति आती है, इसलिए जहां साक्षियों के अविचल साक्ष्य से युक्तियुक्त संदेह के परे यह सिद्ध हो जाता है कि अभियुक्तों द्वारा मृतका से सतत रूप से की जा रही धन की मांग पूरी न होने के कारण उसे तंग और उसके साथ क्रूरता की गई थी तथा उसे परेशान और मजबूर होकर आत्महत्या करनी पड़ी थी, वहां अभियुक्तों की धारा 304ख और 498क के अधीन दोषसिद्धि उचित है, तथापि, उनके

कठोर आजीवन कारावास के दंडादेश को सात वर्ष के कठोर कारावास में परिवर्तित करने से न्याय की पूर्ति हो जाएगी ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि मृतका की आयु उस समय 18 वर्ष थी, जब तारीख 7 मई, 1998 को हुए एक सामाजिक विवाह संगठन समारोह (सामूहिक विवाह सम्मेलन) में प्रत्यर्थी सं. 1 (अभियुक्त सं. 1) के साथ उसका विवाह हुआ था । अपने विवाह से पूर्व गीताबाई अपनी माता और अपने भाई के साथ अपने मामा (अभि. सा. 1) के साथ रहती थी । गीताबाई ने अपने विवाह के चार वर्ष से भी कम समय में अपने दांपत्य-गृह में अपने ऊपर मिट्टी का तेल छिड़ककर और आग लगाकर आत्महत्या कर ली । उसे तारीख 20 अप्रैल, 2002 को सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र, बरोदा में जली हालत में भर्ती कराया गया था और उसकी उसी दिन मृत्यु हो गई थी । उस समय वह पांच माह की गर्भवती थी । परिचर्या करने वाले डाक्टर से सूचना प्राप्त होने पर तारीख 23 अप्रैल, 2002 को एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी । अन्वेषण पूर्ण होने पर, आरोप पत्र फाइल किया गया और मामले को विचारण के लिए सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया । विचारण न्यायालय द्वारा अभियोजन पक्ष और प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य की परीक्षा करने के पश्चात् मृतका की सास और जेठ को दोषमुक्त कर दिया किंतु मृतका के पति और ससुर (अभियुक्त-1 और अभियुक्त-2) को भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख, 306 और 498क के अधीन दोषसिद्ध करते हुए कठोर आजीवन कारावास सहित अन्य दंडादेश अधिरोपित किए गए । अभियुक्तों-प्रत्यर्थियों पर अधिरोपित दोषसिद्धि और दंडादेश मुख्य रूप से साक्षियों के इस साक्ष्य पर आधारित थी कि प्रत्यर्थी मृतका से एक मकान का निर्माण करने के लिए धन की मांग कर रहे थे, जिसे देने के लिए उसके परिवार के सदस्य असमर्थ थे । परिणामस्वरूप, उसे लगातार तंग किया गया और उसके साथ क्रूरता की गई तथा अंतत: उसने आत्महत्या कर ली । सेशन न्यायालय द्वारा पारित किए गए दोषसिद्धि के निर्णय के विरुद्ध प्रत्यर्थियों द्वारा अपील फाइल करने पर उच्च न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी सं. 1 (अभियुक्त-1) की बाबत भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और धारा 306 के अधीन

दोषसिद्धि के आदेश को अपास्त करते हुए प्रत्यर्थी सं. 2 (अभियुक्त-2) को पूरी तरह से दोषमुक्त कर दिया गया । उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि मकान का निर्माण करने के लिए धन की मांग को दहेज की मांग के रूप में नहीं समझा जा सकता है । तथापि, प्रत्यर्थी सं. 1 की भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन दोषसिद्धि को कायम रखा गया, किंतु उस पर अधिरोपित तीन वर्ष के कठोर कारावास के दंडादेश को कम करके उसके द्वारा पहले ही भुगत ली गई अवधि तक कर दिया गया । उक्त निर्णय से व्यथित होकर मध्य प्रदेश राज्य द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील भागत: मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह स्पष्ट है कि अभि. सा. 1 अपनी विस्तृत प्रतिपरीक्षा के दौरान अपने इन कथनों पर दृढ़तापूर्वक अडिग रहा था कि उसकी भांजी गीताबाई का उत्पीड़न प्रत्यर्थी सं. 1 के साथ उसके विवाह के छह माह के भीतर आरंभ हो गया था, जिसने उसे अपनी माता और अभि. सा. 1 से मकान का निर्माण करने के लिए बीस हजार रुपए (20,000/- रुपए) लाने के लिए कहा था । प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा उक्त मांग प्रत्यक्ष रूप से अभि. सा. 1 से भी की गई थी । अभि. सा. 1 ने यह कथन किया था कि मृतका ने उसे यह भी सूचित किया था कि उसके ससुर, प्रत्यर्थी सं. 2 ने एक मकान का निर्माण करने के लिए उससे 50,000/- रुपए (पचास हजार रुपए) की मांग की थी और उसे इस बारे में इस साक्षी को बताने के लिए कहा था । उक्त साक्षी अपने अभिसाक्ष्य में इस बात पर अडिग रहा था कि वह अपनी मृतका भांजी और उसके पति-प्रत्यर्थी सं. 1 को खर्चे के लिए धन देता रहता था और उन दोनों ने एक मकान का निर्माण करने के लिए 50,000/- रुपए (पचास हजार रुपए) की मांग की थी, जो उसने देने से इनकार कर दिया था । महत्वपूर्ण रूप से, मृतका के दोनों मामा, श्याम बिहारी (अभि. सा. 2) और अमृत लाल (अभि. सा. 4) ने भी वैसा ही बयान दिया था जैसा कि अभि. सा. 1 का था । इस प्रकार, अभियोजन का वृत्तांत यह था कि प्रत्यर्थी मृतका को तंग करते थे और प्रत्यर्थी सं. 1 ने 20,000/- रुपए (बीस हजार रुपए) की मांग की थी जबकि प्रत्यर्थी सं. 2 ने एक मकान का निर्माण करने के लिए और एक भूखंड खरीदने के लिए मृतका से 50,000/- रुपए की

मांग की थी । प्रत्यर्थियों द्वारा लगातार उससे की गई दहेज की मांगों से परेशान होकर, जो उसका परिवार पूरा नहीं कर सका था, गीताबाई ने अपने विवाह के सात वर्षों के भीतर अपने दांपत्य गृह में आत्महत्या करके अपनी जान दे दी । भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के उपबंधों को लागू करने के लिए सबसे मूलभूत अवयव यह है कि स्त्री की मृत्यु अवश्य एक दहेज मृत्यु होनी चाहिए । धारा 304ख के अधीन अपराध को सिद्ध करने के लिए संघटकों को इस न्यायालय के कई विनिर्णयों में दोहराया गया है । धारा 304ख के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अभियुक्त को दोषसिद्ध करने के लिए चार पूर्व-अपेक्षाएं इस प्रकार हैं :– (i) किसी स्त्री की मृत्यु अवश्य दाह या शारीरिक क्षति द्वारा या सामान्य परिस्थितियों से अन्यथा होनी चाहिए ; (ii) ऐसी मृत्यु अवश्य उसके विवाह के 7 वर्षों की अवधि के भीतर होनी चाहिए ; (iii) स्त्री के साथ उसकी मृत्यु से कुछ पूर्व उसके पति के हाथों क्रूरता की गई होनी चाहिए ; और (iv) ऐसी क्रूरता या उसे तंग करना अवश्य दहेज की किसी मांग के लिए या उसके संबंध में किया गया होना चाहिए । "दहेज" शब्द को दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 2 में परिभाषित किया गया है । उपरोक्त उपबंध, जिसमें "दहेज" शब्द को परिभाषित किया गया है और इसकी परिधि में हर प्रकार की संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति आती है, को ध्यान में रखते हुए इस न्यायालय की यह राय है कि उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करके गलती की थी कि मकान के निर्माण के लिए धन की मांग को दहेज की मांग के रूप में नहीं समझा जा सकता है । (पैरा 8, 9, 10 और 12)

प्रस्तुत मामले के तथ्यों में, इस न्यायालय की यह राय है कि विचारण न्यायालय ने प्रत्यर्थियों द्वारा एक मकान का निर्माण करने के लिए मृतका से की गई धन की मांग का निर्वचन ठीक ही "दहेज" शब्द की परिभाषा के अंतर्गत आने वाली मांग के रूप में किया था । प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलील कि मृतका भी ऐसी मांग में एक पक्षकार थी क्योंकि उसने स्वयंमेव अपनी माता और मामा से मकान के निर्माण में योगदान करने के लिए कहा था, इस बात को अवश्य एक सही परिप्रेक्ष्य में समझा जाना चाहिए । इस बात की अनदेखी नहीं की जा सकती है कि प्रत्यर्थी सतत रूप से मृतका को

प्रताड़ित कर रहे थे और उससे कह रहे थे कि वह मकान का निर्माण करने के लिए धन लाने हेतु अपने परिवार के सदस्यों के पास जाए और उनके बार-बार कहने और जोर देने पर ही वह उन्हें मकान का निर्माण करने के लिए कुछ रकम का योगदान करने हेतु कहने के लिए बाध्य हुई थी । न्यायालय को पक्षकारों के उस सामाजिक परिवेश, जिससे वे आते हैं, के प्रति संवेदनशील होना चाहिए । यह तथ्य कि मृतका और प्रत्यर्थी सं. 1 का विवाह एक सामुदायिक विवाह संगठन में हुआ था, जहां कुछ वैवाहिक जोड़े यह दर्शित करने के लिए विवाह के बंधन में बंधे होंगे कि विवाह के पक्षकार आर्थिक रूप से संपन्न नहीं हैं । यही स्थिति अभि. सा. 1 के अभिसाक्ष्य से भी प्रकट होती है जिसने यह कथन किया था कि वह इस दंपत्ति का खर्च उठाता रहता था । अभि. सा. 1 ने यह कथन किया था कि मृतका के विवाह से पूर्व भी वह उसका और उसकी माता तथा भाई (अपनी बहन और भतीजे) का खर्च उठाता रहता था क्योंकि उसके पिता ने उनका परित्याग कर दिया था । इस पृष्ठभूमि में, उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकालने में गलती की थी कि चूंकि मृतका स्वयंमेव इस अपील में प्रत्यर्थियों, अपने पति और ससुर, के साथ ऐसी मांग करने में सम्मिलित थी और अपनी माता या मामा को मकान का निर्माण करने के लिए धन का योगदान करने के लिए कहा था और इसलिए ऐसी मांग को एक "दहेज की मांग" नहीं कहा जा सकता है । इसके विपरीत, अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि मृतका पर अपनी माता और मामा से धन के लिए ऐसा अनुरोध करने के लिए दबाव डाला गया था । यह एक सहापराधिता का मामला नहीं था अपितु यह एक ऐसी असहाय स्थिति का मामला था जिसका मृतका को ऐसी प्रतिकूल परिस्थितियों में सामना करना पड़ा था । अभियोजन पक्ष द्वारा अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य, विशिष्ट रूप से अभि. सा. 1 के परिसाक्ष्य, को ध्यान में रखते हुए इस न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि विचारण न्यायालय का विश्लेषण सही था और प्रत्यर्थी भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और 498क के अधीन दोषसिद्ध किए जाने के लिए दायी हैं । तथापि, यह न्यायालय उच्च न्यायालय द्वारा निकाले गए उन निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं करना

चाहता है, जिनके द्वारा प्रत्यर्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरित करने के अपराध के लिए दोषमुक्त किया गया है, क्योंकि अभियोजन पक्ष अभिलेख पर समाधानप्रद रूप से यह प्रदर्शित करने के लिए कोई निश्चायक साक्ष्य नहीं ला सका था कि प्रत्यर्थियों द्वारा किए गए दुष्प्रेरण के कारण ही मृतका ने आत्महत्या करके अपनी जीवनलीला समाप्त की थी । तद्नुसार, दोनों प्रत्यर्थियों की बाबत विचारण न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और धारा 498क के अधीन पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय को प्रत्यावर्तित किया जाता है, तथापि, विचारण न्यायालय द्वारा उन पर अधिरोपित कठोर आजीवन कारावास के दंडादेश को कम करके सात वर्ष का कठोर कारावास किया जाता है, जो भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन अपराध के लिए विहित न्यूनतम दंडादेश है । (पैरा 14 और 20)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2021]	(2021) 6 एस. सी. सी. 1 : **सतबीर सिंह और एक अन्य** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	17
[2021]	(2021) 6 एस. सी. सी. 108 : **गुरमीत सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ;	17
[2020]	(2000) 5 एस. सी. सी. 207 : **कंस राज** बनाम **पंजाब राज्य और अन्य** ;	16
[2015]	(2015) 3 एस. सी. सी. 724 : **शेर सिंह** उर्फ **प्रतापा** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	16
[2015]	(2015) 6 एस. सी. सी. 477 : **राजिन्द्र सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ;	11
[2014]	(2014) 12 एस. सी. सी. 532 : **दिनेश** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	16

[2014] (2014) 4 एस. सी. सी. 129 :
सुरिन्द्र सिंह बनाम **हरियाणा राज्य** ; 12

[2014] (2014) 12 एस. सी. सी. 582 :
रमिन्द्र सिंह बनाम **पंजाब राज्य** ; 12

[2013] (2013) 4 एस. सी. सी. 117 :
कुलवंत सिंह और अन्य बनाम **पंजाब राज्य** ; 12

[2013] (2013) 3 एस. सी. सी. 684 :
विपिन जायसवाल बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**
मार्फत **लोक अभियोजक** ; 12

[2011] (2011) 4 एस. सी. सी. 427 :
बचनी देवी और एक अन्य बनाम **हरियाणा राज्य** ; 12

[2007] (2007) 9 एस. सी. सी. 721 :
अप्पासाहेब और एक अन्य बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ; 4

[2005] 2005 क्रिमिनल ला जर्नल 65 :
सारो राणा और अन्य बनाम **झारखंड राज्य** ; 4

[2003] (2003) 1 एस. सी. सी. 217 :
के. प्रेमा एस. राव और एक अन्य बनाम
यादला श्रीनिवास और अन्य । 4

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2012 की दांडिक अपील सं. 190.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 134 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री प्रशांत सिंह, महाधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से –

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति हिमा कोहली ने दिया ।

न्या. कोहली – मध्य प्रदेश राज्य द्वारा यह अपील मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 10 सितंबर, 2008 को पारित किए गए

उस निर्णय से व्यथित होकर फाइल की गई है, जिसके द्वारा मूल अभियुक्त सं. 1, जोगेन्द्र-मृतका के पति, गीताबाई (इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1) और मूल अभियुक्त सं. 2, बदरी प्रसाद-मृतका के ससुर (इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 2) की विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा तारीख 17 दिसंबर, 2003 को भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और धारा 306 के अधीन की गई दोषसिद्धि और अधिरोपित दंडादेश के निर्णय को अपास्त कर दिया था, जबकि मूल अभियुक्त सं. 1-जोगेन्द्र पर अधिरोपित भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन दोषसिद्धि के आदेश को कायम रखा था और तीन वर्ष के दंडादेश को उसके द्वारा पहले ही भुगत ली गई अवधि तक कम कर दिया था, किंतु अभियुक्त सं. 2, बदरी प्रसाद की भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन की गई दोषसिद्धि और अधिरोपित दंडादेश को अपास्त ही कर दिया गया था ।

2. सुसंगत तथ्यों पर सरसरी तौर पर दृष्टिपात करना आवश्यक है । मृतका की आयु उस समय 18 वर्ष थी, जब तारीख 7 मई, 1998 को हुए एक सामाजिक विवाह संगठन समारोह (सामूहिक विवाह सम्मेलन) में प्रत्यर्थी सं. 1 (अभियुक्त सं. 1) के साथ उसका विवाह हुआ था । अपने विवाह से पूर्व गीताबाई अपनी माता कमलाबाई और अपने भाई के साथ अपने मामा बंसीलाल (अभि. सा. 1) के साथ रहती थी । गीताबाई ने अपने विवाह के चार वर्ष से भी कम समय में अपने दांपत्य-गृह में अपने ऊपर मिट्टी का तेल छिड़ककर और आग लगाकर आत्महत्या कर ली थी । उसे तारीख 20 अप्रैल, 2002 को सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र, बरोदा में जली हालत में भर्ती कराया गया था और उसकी उसी दिन मृत्यु हो गई थी । उस समय वह पांच माह की गर्भवती थी । परिचर्या करने वाले डाक्टर से सूचना प्राप्त होने पर तारीख 23 अप्रैल, 2002 को एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-13) दर्ज की गई थी । अन्वेषण पूर्ण होने पर, आरोप पत्र फाइल किया गया और मामले को विचारण के लिए सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया ।

3. विचारण न्यायालय ने अभियोजन पक्ष और प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य की परीक्षा करने के पश्चात् सुशीला (अभियुक्त-3) - सास और जितेन्द्र (अभियुक्त-4) - मृतका के जेठ को दोषमुक्त कर दिया किंतु दोनों प्रत्यर्थियों (अभियुक्त-1 और अभियुक्त-2), मृतका के पति और ससुर) को भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख, 306 और 498क के अधीन दोषसिद्ध किया और पहले अपराध के लिए कठोर आजीवन कारावास का दंडादेश, दूसरे अपराध के लिए जुर्माने सहित सात वर्ष की अवधि के लिए कठोर कारावास और तीसरे अपराध के लिए जुर्माने सहित तीन वर्ष का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश अधिरोपित किया । प्रत्यर्थियों पर अधिरोपित दोषसिद्धि और दंडादेश मुख्य रूप से मृतका के मामा बंसी लाल (अभि. सा. 1), श्याम बिहारी (अभि. सा. 2) और अमृत लाल (अभि. सा. 4) के साक्ष्य पर आधारित था, जिन्होंने यह कथन किया था कि प्रत्यर्थी मृतका से एक मकान का निर्माण करने के लिए धन की मांग कर रहे थे, जिसे देने के लिए उसके परिवार के सदस्य असमर्थ थे । परिणामस्वरूप, उसे लगातार तंग किया गया और उसके साथ क्रूरता की गई तथा अंततः उसने आत्महत्या कर ली । डा. बी. के. गर्ग (अभि. सा. 8), जिसने मृतका के शव की मरणोत्तर परीक्षा (प्रदर्श पी-7) की थी, ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि गर्भाशय का परीक्षण करने पर उसमें पांच माह का मृत हालत में एक भ्रूण था और उसकी राय में गीताबाई की मृत्यु जलने के कारण हुई थी ।

4. सेशन न्यायालय द्वारा तारीख 17 दिसंबर, 2003 को पारित किए गए दोषसिद्धि के निर्णय के विरुद्ध प्रत्यर्थियों द्वारा अपील फाइल करने पर उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं. 1 (अभियुक्त-1) की बाबत भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और धारा 306 के अधीन दोषसिद्धि के आदेश को अपास्त करते हुए प्रत्यर्थी सं. 2 (अभियुक्त-2) को दोषमुक्त कर दिया । तथापि, प्रत्यर्थी सं. 1 की भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन दोषसिद्धि को कायम रखा गया, किंतु उस पर अधिरोपित तीन वर्ष के कठोर कारावास के दंडादेश को कम करके उसके द्वारा पहले ही भुगत ली गई अवधि तक कर दिया गया । उच्च

न्यायालय ऐसे निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए **के. प्रेमा एस. राव और एक अन्य** बनाम **यादला श्रीनिवास और अन्य**[1], **सारो राणा और अन्य** बनाम **झारखंड राज्य**[2] (झारखंड उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा दिया गया निर्णय) और **अप्पासाहेब और एक अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[3] वाले मामलों में दिए गए विनिर्णयों से प्रेरित हुआ और यह अभिनिर्धारित किया कि मकान के निर्माण के लिए धन की मांग को दहेज की मांग के रूप में नहीं समझा जा सकता है । उच्च न्यायालय इस अपील में प्रत्यर्थियों-अभियुक्त-1 और अभियुक्त-2 की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई इस दलील से सहमत हुआ कि उनके विरुद्ध धारा 304ख के अधीन अपराध सिद्ध नहीं होता है क्योंकि मृतका से की गई अभिकथित धन की मांग एक मकान का निर्माण करने के लिए थी और उक्त हेतुक के लिए धन की मांग को उसकी मृत्यु से जोड़ते हुए एक दहेज की मांग के रूप में नहीं समझा जा सकता है । प्रत्यर्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध के लिए भी दोषमुक्त कर दिया गया क्योंकि उच्च न्यायालय की यह राय थी कि अभि. सा. 1, अभि. सा. 2, अभि. सा. 4 और अभि. सा. 6 के अभिसाक्ष्यों की संवीक्षा करने पर इस निष्कर्ष को कायम रखने के लिए कुछ नहीं है कि प्रत्यर्थियों ने मृतका को आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया था । मृतका के साथ की गई क्रूरता से संबंधित धारा 498क के अधीन अपराध के लिए उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं. 1 की बाबत दोषसिद्धि के आदेश को कायम रखते हुए प्रत्यर्थी सं. 2 को दोषमुक्त कर दिया । उक्त निर्णय से व्यथित होकर मध्य प्रदेश राज्य द्वारा यह अपील फाइल की गई है ।

5. अपीलार्थी-राज्य की ओर से विद्वान् महाधिवक्ता, श्री प्रशांत सिंह ने आक्षेपित निर्णय को प्रश्नगत किया और यह दलील दी कि उच्च न्यायालय प्रत्यर्थियों के हाथों मृतका के उत्पीड़न का मूल्यांकन करने में असफल रहा था, जो एक मकान का निर्माण करने और एक भूखंड का

---

[1] (2003) 1 एस. सी. सी. 217.

[2] 2005 क्रिमिनल ला जर्नल 65.

[3] (2007) 9 एस. सी. सी. 721.

क्रय करने के लिए उससे सतत् रूप से धन की मांग कर रहे थे ; उच्च न्यायालय ने बंसी लाल (अभि. सा. 1), श्याम बिहारी (अभि. सा. 2), अमृत लाल (अभि. सा. 4) और राजेश भाई (अभि. सा. 6) के परिसाक्ष्यों पर विचार नहीं किया था, जिन्होंने निर्विरोध रूप से यह कथन किया था कि जब कभी मृतका अपने माता-पिता के घर आती थी, तो वह यह शिकायत करती थी कि प्रत्यर्थियों द्वारा उस पर एक मकान का निर्माण करने के लिए 50,000/- रुपए की राशि लाने को लेकर हमला किया जाता था और प्रत्यर्थियों द्वारा इस प्रकार तंग करने के कारण मृतका परेशान हो गई और मजबूर होकर आत्महत्या कर ली । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि मकान का निर्माण करने के लिए धन के योगदान को, जैसी कि प्रत्यर्थियों द्वारा मृतका से मांग की गई थी, दहेज की मांग के रूप में समझा जाना चाहिए और यह स्पष्ट रूप से ऐसा मामला है जहां धारा 304ख के अधीन अपराध बनता है । यह भी दलील दी गई कि यह मामला स्पष्ट रूप से आत्महत्या के दुष्प्रेरण का है और दोनों प्रत्यर्थियों को विचारण न्यायालय द्वारा उक्त अपराध के लिए ठीक ही दोषसिद्ध किया गया था और उस आदेश को अपील में गलत रूप से उलटा गया था ।

6. इस अपील का विनिश्चय करने के प्रयोजनार्थ, मृतका के मामा, बंसी लाल (अभि. सा. 1) के कथन को नीचे उद्धृत करना समुचित होगा, जिसे दोनों निचले न्यायालयों द्वारा एक विश्वसनीय साक्षी होना पाया गया था :–

> "2. जब कभी गीताबाई आती थी, तब वह यह कहती थी कि उसे पीटा जाता है । उसने ससुर और पति द्वारा पिटाई करने के बारे में बताया था । वे मकान का निर्माण करने के लिए पचास हजार रुपए की मांग करते थे । इसलिए वे उसके साथ मारपीट करते थे । चूंकि मेरे पास धन नहीं था इसलिए मैंने नहीं दिया । मैंने और समाज के लोगों ने भी दामाद और ससुर को समझाने की कोशिश की थी किंतु वे सहमत नहीं हुए । गीताबाई मेरी बहिन और पत्नी से भी पचास हजार रुपए की मांग के बारे में चर्चा करती थी ।

3. हमें गीताबाई की मृत्यु की सूचना रात्रि के 11.00 बजे फोन द्वारा प्राप्त हुई थी । हमने पचास हजार रुपए नहीं दिए थे और उसके पश्चात् गीताबाई के साथ मारपीट की गई जिसके परिणामस्वरूप उसकी अंगुली में भी अस्थिभंग हो गया था । उसका पति पिटाई करता रहता था । बदरी प्रसाद ने गीताबाई और जोगेन्द्र को मकान से भी बाहर निकाल दिया था । मकान से बाहर निकालने के पश्चात् गीताबाई और जोगेन्द्र खानपुर में बदरी प्रसाद के पिता के आसपास रहते थे । फिर वे दोनों वहां से कोटा आए थे । वे कोटा में 7-8 माह रहे थे । कोटा में धन खर्च करने के पश्चात् वे दोनों टकरबाड़ा में मेरी बहिन कमलाबाई के पास गए थे । वे दोनों टकरबाड़ा में 1-2 दिन ठहरे थे । टकरबाड़ा में जोगेन्द्र ने मेरी बहिन से बीस हजार रुपए मांगे थे । मेरी बहिन ने इस बारे में मुझे बताया था । बीस हजार रुपए कोटा में एक भूखंड खरीदने के लिए मांगे गए थे । गीताबाई और जोगेन्द्र दोनों टकरबाड़ा से मेरे पास सुलतानपुर में आए थे । जोगेन्द्र ने भी मेरे से बीस हजार रुपए की मांग की थी । ये रुपए मकान का निर्माण करने के लिए भूखंड खरीदने हेतु मांगे गए थे । धन की मांग दहेज के रूप में की गई थी । मैंने रुपए नहीं दिए थे । यह धनराशि न देने के कारण, फिर वह मेरी भांजी गीताबाई को धमकी देते हुए उसे कोटा ले गया था ।

4. मैंने उस समय गीताबाई की तरफ देखा था । उस समय वह गर्भवती थी । बाद में बदरी प्रसाद, जितेन्द्र और सुशीला कोटा में जोगेन्द्र और गीताबाई के पास गए थे और जबरदस्ती उनका सामान उठाया और उनके सामान को तथा गीताबाई और जोगेन्द्र को भी अपने घर ले आए । कोटा से लाने के तीन माह पश्चात्, मुझे गीताबाई की मृत्यु का समाचार प्राप्त हुआ ।"

7. अभि. सा. 1 द्वारा अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान किए गए कुछ सुसंगत कथनों को भी नीचे उद्धृत किया जाता है :–

"13. इसके लगभग छह माह पश्चात् गीताबाई पुन: ससुराल आई थी और वह 6-7 माह रही थी और जब हम उसे लेने जाते थे

तब गीताबाई के ससुराल वाले उसे नहीं भेजते थे । इस साक्षी ने स्वयं यह कहा कि उनके द्वारा तंग करने का यह सिलसिला इस समय के दौरान शुरू हो गया था । इस अवधि में मेरा छोटा भाई 6-7 बार उसे लेने के लिए गया था । मैं कोटा में रहने लगा था । इसके पश्चात् जब मेरी माता की मृत्यु हुई थी तब गीताबाई आई थी और वह एक और कार्यक्रम में भी आई थी । जब गीताबाई छह माह के पश्चात् ससुराल गई थी तब इसके पश्चात् उससे मेरी मुलाकात मेरी माता की मृत्यु के समय हुई थी । जब मेरी माता की मृत्यु हुई थी तब गीताबाई आई थी और तब वह मेरे भाई के पास छह माह ठहरी थी । जब मेरी माता की मृत्यु हुई थी, तब तीसरे दिन जोगेन्द्र गीताबाई के साथ आया था और उसने हमारे सामने भी उसकी पिटाई की थी । उसे चाय नहीं मिली थी इसलिए जोगेन्द्र ने उसकी पिटाई की थी । जब गीताबाई छह माह भाई के साथ रही थी तब उस अवधि के दौरान मैं कई बार वहां गया था । अभियुक्त और सुशीलाबाई तथा बदरी भी मेरी माता की मृत्यु के समय पर वहां आए थे । मैं गांव में 12 दिन ठहरा था । यह कहना गलत है कि जब गीताबाई मेरी माता की मृत्यु के समय टकरबाड़ा में ठहरी थी तब उसने वहां ससुराल वालों की कोई शिकायत नहीं की थी । यह बात सही है कि गीताबाई ने सबसे पहले इस बात की शिकायत उसकी माता की मृत्यु के समय पर की थी । जोगेन्द्र हमारे गांव में दो दिन ठहरा था ।

* * * *

18. जब बदरी प्रसाद माता की मृत्यु के समय पर आया था, उसके पश्चात् मैं आज तक बदरी प्रसाद से नहीं मिला हूं । बदरी प्रसाद ने मकान का निर्माण करने के लिए पचास हजार रुपए की मांग की थी । बहिन कमलाबाई ने मुझे यह बात बताई थी । इसके अतिरिक्त, किसी अन्य व्यक्ति ने पचास हजार रुपए की मांग के तथ्य के बारे में नहीं बताया था । माता की मृत्यु के 7-8 माह पश्चात् कमलाबाई ने मुझे पचास हजार रुपए की मांग के तथ्य के बारे में बताया था । जो यह बात कमलाबाई ने मुझे बताई थी,

इसके 4-5 माह पश्चात् गीताबाई और जोगेन्द्र बीस हजार रुपए की मांग करने के लिए मेरे पास आए थे ।"

8. यह स्पष्ट है कि अभि. सा. 1 अपनी विस्तृत प्रतिपरीक्षा के दौरान अपने इन कथनों पर दृढ़तापूर्वक अडिग रहा था कि उसकी भांजी गीताबाई का उत्पीड़न प्रत्यर्थी सं. 1 के साथ उसके विवाह के छह माह के भीतर आरंभ हो गया था, जिसने उसे अपनी माता और अभि. सा. 1 से मकान का निर्माण करने के लिए बीस हजार रुपए (20,000/- रुपए) लाने के लिए कहा था । प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा उक्त मांग प्रत्यक्ष रूप से अभि. सा. 1 से भी की गई थी । अभि. सा. 1 ने यह कथन किया था कि मृतका ने उसे यह भी सूचित किया था कि उसके ससुर, प्रत्यर्थी सं. 2 ने एक मकान का निर्माण करने के लिए उससे 50,000/- रुपए (पचास हजार रुपए) की मांग की थी और उसे इस बारे में इस साक्षी को बताने के लिए कहा था । उक्त साक्षी अपने अभिसाक्ष्य में इस बात पर अडिग रहा था कि वह अपनी मृतका भांजी और उसके पति-प्रत्यर्थी सं. 1 को खर्चे के लिए धन देता रहता था और उन दोनों ने एक मकान का निर्माण करने के लिए 50,000/- रुपए (पचास हजार रुपए) की मांग की थी, जो उसने देने से इनकार कर दिया था । महत्वपूर्ण रूप से, मृतका के दोनों मामा, श्याम बिहारी (अभि. सा. 2) और अमृत लाल (अभि. सा. 4) ने भी वैसा ही बयान दिया था जैसा कि अभि. सा. 1 का था । इस प्रकार, अभियोजन का वृत्तांत यह था कि प्रत्यर्थी मृतका को तंग करते थे और प्रत्यर्थी सं. 1 ने 20,000/- रुपए (बीस हजार रुपए) की मांग की थी जबकि प्रत्यर्थी सं. 2 ने एक मकान का निर्माण करने के लिए और एक भूखंड खरीदने के लिए मृतका से 50,000/- रुपए की मांग की थी । प्रत्यर्थियों द्वारा लगातार उससे की गई दहेज की मांगों से परेशान होकर, जो उसका परिवार पूरा नहीं कर सका था, गीताबाई ने अपने विवाह के सात वर्षों के भीतर अपने दांपत्य गृह में आत्महत्या करके अपनी जान दे दी ।

9. भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के उपबंधों को लागू करने के लिए सबसे मूलभूत अवयव यह है कि स्त्री की मृत्यु अवश्य एक दहेज मृत्यु होनी चाहिए । धारा 304ख के अधीन अपराध को सिद्ध करने

के लिए संघटकों को इस न्यायालय के कई विनिर्णयों में दोहराया गया है । धारा 304ख के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अभियुक्त को दोषसिद्ध करने के लिए चार पूर्व-अपेक्षाएं निम्नलिखित हैं :–

(i) किसी स्त्री की मृत्यु अवश्य दाह या शारीरिक क्षति द्वारा या सामान्य परिस्थितियों से अन्यथा होनी चाहिए ;

(ii) ऐसी मृत्यु अवश्य उसके विवाह के 7 वर्षों की अवधि के भीतर होनी चाहिए ;

(iii) स्त्री के साथ उसकी मृत्यु से कुछ पूर्व उसके पति के हाथों क्रूरता की गई होनी चाहिए ; और

(iv) ऐसी क्रूरता या उसे तंग करना अवश्य दहेज की किसी मांग के लिए या उसके संबंध में किया गया होना चाहिए ।

10. चूंकि "दहेज" शब्द को दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 2 में परिभाषित किया गया है इसलिए उक्त उपबंध महत्वपूर्ण है और इसे नीचे उद्धृत किया जाता है :–

"2. **'दहेज' की परिभाषा** – इस अधिनियम में, 'दहेज' से कोई ऐसी संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति अभिप्रेत है, जो विवाह के समय या उसके पूर्व या पश्चात् –

(क) विवाह के एक पक्षकार द्वारा विवाह के दूसरे पक्षकार को ; या

(ख) विवाह के किसी भी पक्षकार के माता-पिता द्वारा या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा विवाह के किसी भी पक्षकार को या किसी अन्य व्यक्ति को,

उक्त पक्षकारों के विवाह के प्रतिफलस्वरूप या तो प्रत्यक्षत: या अप्रत्यक्षत: दी गई है या दी जाने के लिए करार की गई है, किंतु उन व्यक्तियों के संबंध में जिन्हें मुस्लिम स्वीय विधि (शरीयत) लागू होती है, मेहर इसके अंतर्गत नहीं है ।

स्पष्टीकरण 1 – * * *

स्पष्टीकरण 2 – 'मूल्यवान प्रतिभूति' पद का वही अर्थ है जो भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 30 में है ।'

11. **राजिन्द्र सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की एक न्यायपीठ के विनिश्चय में दहेज अधिनियम की धारा 2 के उक्त उपबंध को बेहतर रूप से समझने के लिए छह सुभिन्न भागों में विभाजित किया गया था, जो निम्नलिखित हैं :–

"8. धारा 2 के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि इस परिभाषा को छह सुभिन्न भागों में विभाजित किया जा सकता है –

(1) पहली बात यह कि दहेज में अवश्य कोई संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति समाविष्ट होनी चाहिए – 'कोई' शब्द एक व्यापक शब्द है और इसलिए सभी प्रकार की संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति, जो भी हो, इसके अंतर्गत आएगी ।

(2) ऐसी संपत्ति या प्रतिभूति दी जा सकती है या दिए जाने का करार भी किया जा सकता है । इसलिए ऐसी संपत्ति या प्रतिभूति का वास्तव में दिया जाना आवश्यक नहीं है ।

(3) ऐसी संपत्ति या प्रतिभूति को प्रत्यक्षत: या अप्रत्यक्षत: दिया जा सकता है या दिए जाने के लिए करार किया जा सकता है ।

(4) पुन:, इस प्रकार दिया जाना या करार किया जाना न केवल विवाह के एक पक्षकार द्वारा दूसरे पक्षकार को हो सकता है अपितु विवाह के किसी भी पक्षकार के माता-पिता द्वारा या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा विवाह के किसी भी पक्षकार को या किसी अन्य व्यक्ति को हो सकता है । यह ध्यातव्य है कि यह खंड, जहां तक दहेज देने या लेने का अपराध कारित करने के दोषी व्यक्तियों का संबंध है, अधिनियम की पहुंच को व्यापक बनाता है ।

---

[1] (2015) 6 एस. सी. सी. 477.

(5) इस प्रकार दिया जाना या करार किया जाना किसी भी समय हो सकता है । यह विवाह के पूर्व या विवाह के पश्चात् किसी समय हो सकता है । इस प्रकार, यह विवाह के अनुष्ठापित होने के पश्चात् कई वर्षों के पश्चात् हो सकता है ।

(6) ऐसा दिया जाना या प्राप्त किया जाना अवश्य पक्षकारों के विवाह के संबंध में होना चाहिए । स्पष्ट रूप से, 'के संबंध में' (इन कनेक्शन विद) अभिव्यक्ति का अर्थ दहेज प्रतिषेध अधिनियम द्वारा इस सामाजिक बुराई पर रोक लगाने के लिए ईप्सित सदंर्भ में 'के संबंध में' (इन रिलेशन विद) या 'से संबंधित' (रिलेटिंग टू) होगा ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

12. उपरोक्त उपबंध, जिसमें "दहेज" शब्द को परिभाषित किया गया है और इसकी परिधि में हर प्रकार की संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति आती है, को ध्यान में रखते हुए हमारी यह राय है कि उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करके गलती की थी कि मकान के निर्माण के लिए धन की मांग को दहेज की मांग के रूप में नहीं समझा जा सकता है । आक्षेपित निर्णय में निर्दिष्ट किए गए **अप्पासाहेब** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि खाद खरीदने के लिए मृतका स्त्री के माता-पिता से की गई धन की मांग, दहेज की परिभाषा का कड़ाईपूर्वक निर्वचन करते हुए, "दहेज" के क्षेत्र में नहीं आएगी । तथापि, इस दृष्टिकोण का समर्थन **राजिन्द्र सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में नहीं किया गया था जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि उक्त विनिश्चय और साथ ही **विपिन जायसवाल** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** मार्फत **लोक अभियोजक**[1] वाले मामले का विनिश्चय विधि को सही रूप में अभिव्यक्त नहीं करता है । इस बात को देखते हुए कि पूर्वोक्त विनिश्चय इस न्यायालय के चार अन्य विनिश्चयों अर्थात् **बचनी देवी और एक अन्य** बनाम **हरियाणा राज्य**[2]**,**

---

[1] (2013) 3 एस. सी. सी. 684.

[2] (2011) 4 एस. सी. सी. 427.

कुलवंत सिंह और अन्य बनाम **पंजाब राज्य**[1], **सुरिन्द्र सिंह** बनाम **हरियाणा राज्य**[2] और **रमिन्द्र सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[3] वाले मामलों में के विनिश्चय से सुभिन्न थे, इस न्यायालय ने यह राय व्यक्त की कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि भारतीय दंड संहिता में धारा 304ख को दहेज की मांग की उस सामाजिक बुराई को रोकने के लिए अंत:स्थापित किया गया था जो चिंताजनक स्थिति में पहुंच गई है, इसलिए यह तर्क नहीं दिया जा सकता है कि उपबंध में प्रयुक्त भाषा में अस्पष्टता की दशा में, उसका अर्थान्वयन कड़ाईपूर्वक किया जाना चाहिए, क्योंकि ऐसा करना उपबंध के उद्देश्य को ही निष्फल करने की कोटि में आएगा । दूसरे शब्दों में, इस न्यायालय का झुकाव "दहेज" अभिव्यक्ति का एक विस्तृत अर्थ देने के पक्ष में था और यह अभिनिर्धारित किया :–

> "20. इस बात को ध्यान में रखते हुए कि जिस कानून पर हम विचार कर रहे हैं, उसका एक उचित, व्यावहारिक और सामान्य समझ वाला निर्वचन किया जाना चाहिए जिससे कि संसद द्वारा अभीष्ट उद्देश्य को पूर्ण किया जा सके, हमारा यह विचार है कि अप्पासाहेब **बनाम** महाराष्ट्र राज्य [(2007) 9 एस. सी. सी. 721] वाले मामले में का निर्णय, जिसका विपिन जायसवाल **बनाम** आंध्र प्रदेश राज्य [(2013) 3 एस. सी. सी. 684] वाले मामले के निर्णय में अनुसरण किया गया था, विधि का सही रूप में उल्लेख नहीं करता है । अत: हम यह घोषणा करते हैं कि दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 2 में वर्णित किसी व्यक्ति द्वारा विवाह के समय या विवाह के पूर्व या विवाह के पश्चात् किसी समय पर की गई किसी धन या संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति की ऐसी मांग जो विवाहित स्त्री की मृत्यु से युक्तियुक्त रूप से संबद्ध हो, आवश्यक रूप से विवाह के संबंध में या विवाह के लिए होगी जब तक कि प्रस्तुत मामले के तथ्यों में स्पष्ट और असंदिग्ध रूप से अन्यथा इंगित न होता हो ।"
>
> (बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

---

[1] (2013) 4 एस. सी. सी. 117.

[2] (2014) 4 एस. सी. सी. 129.

[3] (2014) 12 एस. सी. सी. 582.

13. लैटिन सूत्र "अट रेस मैजिस वेलियट क्यूअम पेरियट" (अमान्य से मान्य करना अच्छा है) अर्थात् लिखित दस्तावेजों का एक उदार अर्थान्वयन किया जाना चाहिए जिससे उन्हें, यदि संभव हो, बनाए रखा जा सके और पक्षकारों के आशय को प्रवर्तनशील किया जा सके, यही इसका सारांश है । विधि के किसी उपबंध का ऐसा निर्वचन करने से बचना चाहिए जो विधानमंडल के आशय को ही विफल कर देगा और उसका ऐसा निर्वचन किया जाना चाहिए जो दहेज की मांग जैसी सामाजिक बुराई को जड़ से उखाड़ने के तात्पर्य से अधिनियमित विधान के माध्यम से प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य को प्रवर्तित करे । इस संदर्भ में "दहेज" शब्द का एक व्यापक अर्थ लगाया जाना चाहिए जिससे किसी स्त्री से की गई कोई भी मांग इसके अंतर्गत आ सके, चाहे वह मांग संपत्ति की बाबत हो या किसी प्रकार की मूल्यवान प्रतिभूति की बाबत हो । भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख, जो समाज में भयोपरतिकारिता के रूप में कार्य करने और दहेज की मांगों के घृणित अपराध को रोकने के लिए किया गया उपबंध है, के अधीन मामलों पर विचार करते समय न्यायालयों के दृष्टिकोण में कठोर से उदार और संकुचित से विस्तृत परिवर्तन होना चाहिए । कोई कठोर अर्थ लगाने से इस उपबंध के वास्तविक उद्देश्य को नकारना होगा । अत: हमारे समाज में गहरी जड़े बना चुकी इस बुराई को पूर्णरूपेण नष्ट करने के कार्य को पूरा करने के लिए सही दिशा में कदम उठाना आवश्यक है ।

14. प्रस्तुत मामले के तथ्यों में, हमारी यह राय है कि विचारण न्यायालय ने प्रत्यर्थियों द्वारा एक मकान का निर्माण करने के लिए मृतका से की गई धन की मांग का निर्वचन ठीक ही "दहेज" शब्द की परिभाषा के अंतर्गत आने वाली मांग के रूप में किया था । प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलील कि मृतका भी ऐसी मांग में एक पक्षकार थी क्योंकि उसने स्वयंमेव अपनी माता और मामा से मकान के निर्माण में योगदान करने के लिए कहा था, इस बात को अवश्य एक सही परिप्रेक्ष्य में समझा जाना चाहिए । इस बात की अनदेखी नहीं की जा सकती है कि प्रत्यर्थी सतत रूप से मृतका को

प्रताड़ित कर रहे थे और उससे कह रहे थे कि वह मकान का निर्माण करने के लिए धन लाने हेतु अपने परिवार के सदस्यों के पास जाए और उनको बार-बार कहने और जोर देने पर ही वह उन्हें मकान का निर्माण करने के लिए कुछ रकम का योगदान करने हेतु कहने के लिए बाध्य हुई थी । न्यायालय को पक्षकारों के उस सामाजिक परिवेश, जिससे वे आते हैं, के प्रति संवेदनशील होना चाहिए । यह तथ्य कि मृतका और प्रत्यर्थी सं. 1 का विवाह एक सामुदायिक विवाह सम्मेलन में हुआ था, जहां कुछ वैवाहिक जोड़े यह दर्शित करने के लिए विवाह के बंधन में बंधे होंगे कि विवाह के पक्षकार आर्थिक रूप से संपन्न नहीं हैं । यही स्थिति अभि. सा. 1 के अभिसाक्ष्य से भी प्रकट होती है जिसने यह कथन किया था कि वह इस दंपत्ति का खर्च उठाता रहता था । अभि. सा. 1 ने यह कथन किया था कि मृतका के विवाह से पूर्व भी वह उसका और उसकी माता तथा भाई (अपनी बहिन और भतीजे) का खर्च उठाता रहता था क्योंकि उसके पिता ने उनका परित्याग कर दिया था । इस पृष्ठभूमि में, उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकालने में गलती की थी कि चूंकि मृतका स्वयंमेव इस अपील में प्रत्यर्थियों, अपने पति और ससुर, के साथ ऐसी मांग करने में सम्मिलित थी और अपनी माता या मामा को मकान का निर्माण करने के लिए धन का योगदान करने के लिए कहा था और इसलिए ऐसी मांग को एक "दहेज की मांग" नहीं कहा जा सकता है । इसके विपरीत, अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि मृतका पर अपनी माता और मामा से धन के लिए ऐसा अनुरोध करने के लिए दबाव डाला गया था । यह एक सहापराधिता का मामला नहीं था अपितु यह एक ऐसी असहाय स्थिति का मामला था जिसका मृतका को ऐसी प्रतिकूल परिस्थितियों में सामना करना पड़ा था ।

15. अब, राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा आग्रह किए गए इस दूसरे मुद्दे पर आते हैं कि उच्च न्यायालय ने इस तथ्य की अनदेखी की थी कि गीताबाई के साथ प्रत्यर्थियों द्वारा उसकी मृत्यु से कुछ पूर्व क्रूरता की गई थी/तंग किया गया था, जिस दलील का प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा जोरदार विरोध किया गया, हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि "उसकी मृत्यु से कुछ पूर्व" अभिव्यक्ति

के अर्थ की कई निर्णयों में गहनता से चर्चा की गई है । **सुरिन्द्र सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113ख और भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख, जिनमें "उसकी मृत्यु से कुछ पूर्व" शब्दों का उल्लेख किया गया है, अवलंब लेते हुए निम्नलिखित महत्वपूर्ण मताभिव्यक्तियां की गई हैं :–

> "17. इस प्रकार, 'कुछ पूर्व' शब्द साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113ख के साथ-साथ भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख में भी प्रकट होते हैं । इन धाराओं के अधीन परिकल्पित उपधारणाओं को क्रियान्वित करने के लिए यह दर्शित करना आवश्यक है कि उसके साथ क्रूरता या उसे तंग उसकी मृत्यु से कुछ पूर्व किया गया था । अत: 'कुछ पूर्व' शब्दों का निर्वचन महत्वपूर्ण है । प्रश्न यह है कि कुछ पूर्व कैसे ? यह बात स्पष्ट रूप से प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर होगी । क्रूरता और तंग करना प्रत्येक मामले में भिन्न-भिन्न हो सकता है । इसका संबंध लोगों की मानसिक स्थिति से है जो अलग-अलग व्यक्ति का अलग-अलग हो सकता है । क्रूरता मानसिक हो सकती है यह शारीरिक हो सकती है । मानसिक क्रूरता के भी विभिन्न रूप हैं । यह मौखिक या भावनात्मक हो सकती है जैसे किसी स्त्री का बेइज्जत करना या खिल्ली उड़ाना या अपमानित करना । इसमें उसे या उसके किसी संबंधी को क्षति पहुंचाने की धमकी देना हो सकता है । यह उसे आर्थिक स्रोतों या जीवन की आवश्यक सुविधाओं से वंचित करना हो सकता है । यह उसके आने-जाने पर अवरोध डालना हो सकता है, यह बाह्य व्यक्ति से बातचीत न करने देना हो सकता है । यह सूची दृष्टांतस्वरूप है न कि नि:शेष । शारीरिक क्रूरता वास्तव में मारपीट करना या स्त्री के शरीर को पीड़ा या अपहानि कारित करना हो सकती है । क्रूरता के प्रत्येक ऐसे दृष्टांत और संबंधित उत्पीड़न का स्त्री के मस्तिष्क पर भिन्न-भिन्न प्रभाव पड़ता है । कुछ दृष्टांत इतने गंभीर हो सकते हैं जिनका स्त्री पर जानलेवा असर पड़ सकता है । कुछ दृष्टांत ऐसे हो सकते हैं जिनसे उसकी गरिमा को ठेस पहुंचती है, लंबे समय तक उसके मस्तिष्क में रह सकते हैं ।

अत: 'कुछ पूर्व' एक सापेक्ष पद है । भावनात्मक मामलों में हमारा नियत फार्मूला नहीं हो सकता है । समय-सीमा अलग-अलग मामलों में अलग-अलग हो सकती है । इस बात को दहेज मृत्यु के प्रत्येक मामले की परीक्षा करते समय ध्यान में रखा जाना आवश्यक है ।

18. इस संबंध में हम कंशराज **बनाम** पंजाब राज्य [(2000) 5 एस. सी. सी. 207 = 2000 एस. सी. सी. (क्रि.) 935] वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय को निर्दिष्ट कर सकते हैं, जिसमें इस न्यायालय ने 'कुछ पूर्व' पद पर विचार किया था । सुसंगत मताभिव्यक्तियां निम्नलिखित हैं –

> '15. ..... 'कुछ पूर्व' एक सापेक्ष पद है जिस पर प्रत्येक मामले की विनिर्दिष्ट परिस्थितियों के अधीन विचार किया जाना आवश्यक है और कोई समय-सीमा नियत करके एक नियमनिष्ठ सिद्धांत अधिकथित नहीं किया जा सकता है । यह अभिव्यक्ति सन्निकटता के परीक्षण के विचार से परिपूर्ण है । 'कुछ पूर्व' पद 'ठीक पूर्व' पद का समानार्थी नहीं है और 'शीघ्र उपरांत' अभिव्यक्ति, जो साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 के दृष्टांत (क) में प्रयुक्त की गई है और अर्थ लगाया गया है, के विपरीत है । इन शब्दों का यह अर्थ होगा कि कथन करने के समय और मृत्यु के समय के बीच अंतराल ज्यादा नहीं होना चाहिए । इस धारा में ऐसा युक्तियुक्त समय अनुध्यात है जिसके बारे में, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, प्रत्येक मामले की विशिष्ट परिस्थितियों के अधीन विचार और अवधारित किया जाना चाहिए । दहेज मौतों के संबंध में, मृतका के साथ क्रूरता करने और उसे तंग किए जाने की बात को दर्शित करने वाली परिस्थितियां किसी विशिष्ट घटना तक निर्बंधित नहीं हैं अपितु प्रसामान्यत: आचरण की एक प्रक्रिया को निर्दिष्ट करती हैं । ऐसा आचरण एक समयावधि तक फैला हो सकता है । यदि क्रूरता या तंग करना या दहेज के लिए मांग को निरंतर चलना दर्शित किया जाता है, तो इसे 'मृत्यु से कुछ पूर्व' समझा जाएगा यदि ऐसे अभिकथित

व्यवहार और मृत्यु की तारीख से कुछ पूर्व अभिलेख पर ऐसे व्यवहार के विद्यमान न होने को दर्शित करते हुए कोई अन्य मध्यवर्ती परिस्थिति को नहीं लाया जाता है । तथापि, इसका अर्थ यह नहीं है कि ऐसे समय को किसी अवधि तक खींचा जा सकता है । दहेज की मांग पर आधारित क्रूरता के प्रभाव और पारिणामिक मृत्यु के बीच सन्निकट और सजीव संबंध होना चाहिए जिसे अभियोजन पक्ष द्वारा साबित किया जाना आवश्यक है । दहेज की मांग और ऐसी मांग पर आधारित क्रूरता या तंग करना तथा मृत्यु की तारीख समय के हिसाब से अति दूरस्थ नहीं होनी चाहिए जिसे परिस्थितियों के अधीन काफी पुराना होना समझा जाए ।'

इस प्रकार, दहेज की मांग, ऐसी मांग पर आधारित क्रूरता या तंग करना और मृत्यु की तारीख के बीच संबंध का होना आवश्यक है । सन्निकटता का परीक्षण लागू किया जाना होगा । किंतु यह एक कठोर परीक्षण नहीं है । यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है और विधि की सीमाओं के भीतर न्यायालय के व्यावहारिक और संवेदनशील दृष्टिकोण का होना आवश्यक है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

16. **राजिन्द्र सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में **कंस राज** बनाम **पंजाब राज्य और अन्य**[1], **दिनेश** बनाम **हरियाणा राज्य**[2] और **शेर सिंह** उर्फ **प्रतापा** बनाम **हरियाणा राज्य**[3] वाले मामलों में के निर्णयों से हटकर इस बात पर बल दिया गया था कि "कुछ पूर्व" पद "ठीक पूर्व" का समानार्थी नहीं है और निम्नलिखित मताभिव्यक्तियां की गई हैं :–

"24. इन दो विनिश्चयों द्वारा जो कहा गया है, हम उसका

---

[1] (2000) 5 एस. सी. सी. 207.

[2] (2014) 12 एस. सी. सी. 532.

[3] (2015) 3 एस. सी. सी. 724.

समर्थन करते हैं । दिन और महीने देखे जाने वाली बात नहीं है । ध्यान में रखे जाने वाली बात यह है कि 'कुछ' पूर्व का अर्थ 'ठीक' पूर्व नहीं है । एक उचित और व्यावहारिक अर्थान्वयन से, उस बड़ी सामाजिक बुराई को ध्यान में रखते हुए जिसके कारण धारा 304ख का अधिनियमन किया गया था, यह स्पष्ट हो जाएगा कि यह अभिव्यक्ति एक सापेक्ष अभिव्यक्ति है । हर मामले में समय का अंतराल भिन्न हो सकता है । आवश्यक बात यह है कि दहेज की मांग पुरानी नहीं होनी चाहिए अपितु धारा 304ख के अधीन विवाहित स्त्री की मृत्यु के कारण के लिए यह सतत रूप से चलने वाली होनी चाहिए ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

17. उपरोक्त संदर्भ में, हम **गुरमीत सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ के एक हाल ही के विनिश्चय को उपयोगी रूप से निर्दिष्ट कर सकते हैं जिसमें उन विस्तृत मार्गदर्शक सिद्धांतों को दोहराया गया था, जो **सतबीर सिंह और एक अन्य** बनाम **हरियाणा राज्य**[2] वाले मामले में अधिकथित किए गए हैं, दोनों ही निर्णय मुख्य न्यायमूर्ति एन. वी. रमना द्वारा लिखे गए हैं जो भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन विचारण संबंधित हैं, जिनमें भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख को निम्नलिखित शब्दों में सारगर्भित रूप से वर्णित किया गया है :–

"38.1 भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख का निर्वचन दुल्हन को जलाने और दहेज की मांग की सामाजिक बुराई को रोकने के लिए विधायी आशय को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए ।

38.2 अभियोजन पक्ष को सर्वप्रथम भारतीय दंड संहिता की

---

[1] (2021) 6 एस. सी. सी. 108.

[2] (2021) 6 एस. सी. सी. 1.

धारा 304ख के अधीन अपराध का गठन करने के लिए आवश्यक संघटकों की विद्यमानता को सिद्ध करना चाहिए । जब एक बार इन संघटकों का समाधान कर दिया जाता है, तो साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख के अधीन उपबंधित कारण-कार्य-संबंध की अभियुक्त के विरुद्ध खंडनीय उपधारणा लागू हो जाती है ।

38.3 भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख में प्रकट होने वाले 'कुछ पूर्व' वाक्यांश का अर्थान्वयन 'ठीक पूर्व' के अर्थ में नहीं किया जा सकता है । अभियोजन पक्ष को दहेज मृत्यु और पति या उसके नातेदारों द्वारा दहेज की मांग के लिए की गई क्रूरता या उत्पीड़न के बीच 'सन्निकट और सजीव संबंध' की विद्यमानता को अवश्य सिद्ध करना चाहिए ।

38.4 भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख मृत्यु का मानववध मृत्यु के रूप में या आत्महत्या के रूप में या दुर्घटनावश मृत्यु के रूप में वर्गीकरण करने में एक कपोत खाने वाला दृष्टिकोण नहीं अपनाया जाता है । ऐसा वर्गीकरण न करने का कारण इस तथ्य की वजह से है कि 'सामान्य परिस्थितियों से अन्यथा' होने वाली मृत्यु इन मामलों में मानववध मृत्यु या आत्महत्या या दुर्घटनावश मृत्यु हो सकती है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

18. प्रस्तुत मामले में, यह विवादग्रस्त नहीं है कि मृतका और प्रत्यर्थी सं. 1-अभियुक्त के बीच विवाह तारीख 7 मई, 1998 को हुआ था और मृतका को तारीख 20 अप्रैल, 2002 को उसके दांपत्य गृह से स्वास्थ्य चिकित्सा केंद्र, बरोदा में एक पूरी तरह से जली हुई हालत में लाया गया था और उसकी उसी दिन मृत्यु हो गई थी । यह भी विवादग्रस्त नहीं है कि मृतका की मृत्यु उसके द्वारा अपने ऊपर मिट्टी का तेल छिड़ककर और आग लगाने के कारण हुई थी । अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य से पर्याप्त रूप से यह प्रदर्शित होता है कि मृतका को धन लाने के लिए तंग करना उसके विवाह के कुछ माह के भीतर ही शुरू हो गया था और उसके पश्चात् कई अवसरों तक जारी रहा था । यह

तथ्य अभि. सा. 1 के अभिसाक्ष्य से प्रकट होता है, जिससे यह दर्शित होता है कि प्रत्यर्थी सं. 2 (ससुर) द्वारा की गई 50,000/- रुपए (पचास हजार रुपए) की मांग को पूरा करने में समर्थ न होने के कारण उसने मृतका और प्रत्यर्थी सं. 1 को दांपत्य गृह से बाहर निकाल दिया था । इसके पश्चात् वे कोटा में चले गए थे और वहां रहने लगे थे । उसके पश्चात्, प्रत्यर्थी सं. 2 इस दंपत्ति को वापस बरोदा लेकर आया था और पुन: मृतका से धन की मांग करने लगा था । इसके पश्चात् मृतका और प्रत्यर्थी सं. 1 टंकरबाड़ा चले गए थे । इस बार, मृतका और उसके मामा से एक मकान का निर्माण करने के लिए 20,000/- रुपए (बीस हजार रुपए) की राशि की मांग प्रत्यर्थी सं. 1 ने की थी । मृतका से लगातार बार-बार की गई धन की मांग से, जिसे उसका परिवार पूरा नहीं कर सका था, परेशान होकर असहाय मृतका ने, जो अपने गर्भावस्था के दूसरी त्रिपदी में थी, अपने दांपत्य गृह में अपनी जीवनलीला समाप्त कर ली ।

19. उपरोक्त स्पष्ट परिस्थितियों में, इन पर एक-साथ विचार करने पर, प्रत्यर्थियों के अपराध को कम करना या भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख की परिधि से बाहर ले जाना मुश्किल है, जब उक्त उपबंध का अवलंब लेने के लिए सभी चार पूर्व-अपेक्षाओं का समाधान हो गया है, अर्थात् गीताबाई की मृत्यु उसके विवाह के सात वर्ष के भीतर उसके दांपत्य गृह में हुई थी ; उक्त मृत्यु असामान्य परिस्थितियों में जलने के कारण हुई थी और वह भी तब जब वह पांच माह की गर्भवती थी ; प्रत्यर्थियों द्वारा उसकी मृत्यु से कुछ पूर्व उसके साथ क्रूरता की गई थी और तंग किया गया था और ऐसी क्रूरता/उसे तंग करना दहेज की मांग के संबंध में था । यद्यपि उच्च न्यायालय ने अभि. सा. 1 (मृतका के मामा) के परिसाक्ष्य को विश्वसनीय और संगत पाया था और प्रत्यर्थियों द्वारा अभियोजन के वृत्तांत को ध्वस्त करने के लिए कोई विश्वसनीय साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया जा सका था, तो भी आश्चर्यजनक रूप से, भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन उनकी दोषसिद्धि को अपास्त कर दिया गया और इसके अतिरिक्त प्रत्यर्थी सं. 2 को भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषमुक्त

कर दिया गया ।

20. अभियोजन पक्ष द्वारा अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य, विशिष्ट रूप से अभि. सा. 1 के परिसाक्ष्य, को ध्यान में रखते हुए इस न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि विचारण न्यायालय का विश्लेषण सही था और प्रत्यर्थी भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और 498क के अधीन दोषसिद्ध किए जाने के लिए दायी हैं । तथापि, हम उच्च न्यायालय द्वारा निकाले गए उन निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहते हैं, जिनके द्वारा प्रत्यर्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरित करने के अपराध के लिए दोषमुक्त किया गया है, क्योंकि अभियोजन पक्ष अभिलेख पर समाधानप्रद रूप से यह प्रदर्शित करने के लिए कोई निश्चायक साक्ष्य नहीं ला सका था कि प्रत्यर्थियों द्वारा किए गए दुष्प्रेरण के कारण ही मृतका ने आत्महत्या करके अपनी जीवनलीला समाप्त की थी । तद्नुसार, दोनों प्रत्यर्थियों की बाबत विचारण न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और धारा 498क के अधीन पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय को प्रत्यावर्तित किया जाता है, तथापि, विचारण न्यायालय द्वारा उन पर अधिरोपित कठोर आजीवन कारावास के दंडादेश को कम करके सात वर्ष का कठोर कारावास किया जाता है, जो भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन अपराध के लिए विहित न्यूनतम दंडादेश है ।

21. पूर्वगामी चर्चा को ध्यान में रखते हुए, यह अपील भागत: मंजूर की जाती है । प्रत्यर्थी अपने दंडादेश की शेष अवधि को भुगतने के लिए चार सप्ताह के भीतर विचारण न्यायालय के समक्ष अभ्यर्पण करेंगे । यह अपील उपरोक्त निबंधनों के अनुसार मंजूर की जाती है ।

अपील भागत: मंजूर की गई ।

जस.

[2022] 1 उम. नि. प. 108

भगवानी

बनाम

मध्य प्रदेश राज्य

[2022 की दांडिक अपील सं. 101-102]

18 जनवरी, 2022

न्यायमूर्ति एल. नागेश्वर राव, न्यायमूर्ति डी. आर. गवई और न्यायमूर्ति बी. वी. नागरत्ना

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 363, 364, 366क, 376क, 376घ, 302 और 201 [सपठित लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम, 2012 की धारा 5(च)(ड) और धारा 6] – अभियुक्तों द्वारा 11 वर्षीया अप्राप्तवय बालिका का व्यपहरण किया जाना और उसके साथ बलात्संग तथा हत्या किया जाना – पारिस्थितिक साक्ष्य – दोषसिद्धि – संधार्यता – जहां मृतका को अंतिम बार अभियुक्तों के साथ देखा जाना, जो अपनी शाल रखने के लिए अभियुक्तों में से एक अभियुक्त के मकान पर आई थी और उसके बाद उसका गुम हो जाना, विपदग्रस्त लड़की की रक्तरंजित शाल और कंबल अभियुक्त के मकान से उसके द्वारा किए गए प्रकटन कथन के आधार पर बरामद होना, घटनास्थल से बरामद कमीज का बटन सह-अभियुक्त की कमीज का होना साबित किया जाना, अभियुक्त के शरीर पर पाए गए खरोंच के चिह्नों के बारे में उसके द्वारा कोई स्पष्टीकरण न दिया जाना और न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला की रिपोर्ट से भी यह साबित होना कि अभियुक्तों से अभिगृहीत उनके द्वारा पहने हुए वस्त्रों पर मृतका के रक्त के मिलान का रक्त पाया गया था, वहां परिस्थितियों की श्रृंखला पूर्ण होने पर अभियुक्तों की दोषसिद्ध उचित है ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 363, 364, 366क, 376क, 376घ, 302 और 201 [सपठित लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम, 2012 की धारा 5(च)(ढ) और धारा 6] – अभियुक्तों

द्वारा 11 वर्षीया अप्राप्तवय बालिका का व्यपहरण किया जाना और उसके साथ बलात्संग तथा हत्या किया जाना – दोषसिद्धि – मृत्यु दंडादेश – जहां मृत्यु दंडादेश अधिरोपित करते समय केवल अपराध की गंभीरता पर विचार किया गया हो और न्यूनकारी परिस्थितियों तथा अभियुक्त में सुधार होने या उसके पुनर्वासित होने की बात पर विचार न किया गया हो, वहां मृत्यु दंडादेश को 30 वर्ष के आजीवन कारावास में, किसी परिहार के बिना, लघुकृत करने से न्याय की पूर्ति हो जाएगी ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि बृजलाल यादव (अभि. सा. 2) अपनी पत्नी (अभि. सा. 1), दो पुत्रों और अपनी पुत्री के साथ सायंकाल में गांव में एक उत्सव में सम्मिलित होने के लिए गया था । जब वे रात्रि के लगभग 11.00 बजे वापस आ रहे थे तो उन्होंने पाया कि उनकी पुत्री गायब है । उन्होंने उसे ढूंढना शुरू किया और अगले दिन उसे एक हैंड-पम्प के निकट पड़े हुए पाया । उसकी पुत्री बेहोशी की हालत में थी । पुलिस को बुलाया गया । संदेह के आधार पर, अपीलार्थी और सतीश नामक अभियुक्त को गिरफ्तार किया गया । सतीश का कथन अभिलिखित किया गया, जिसके अनुसरण में मृतका का कंबल और शाल तथा अभियुक्त द्वारा पहने हुए वस्त्रों को अभिगृहीत किया गया । इसी प्रकार, अपीलार्थी द्वारा पहने हुए वस्त्रों को भी उसके द्वारा किए गए कथन के अनुसरण में अभिगृहीत किया गया । अन्वेषण पूर्ण होने पर अंतिम रिपोर्ट फाइल की गई और सतीश तथा अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 363, 366क, 364, 346, 376घ, 376क या अनुकल्पत: भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 201 और लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम की धारा 5 (च) (ढ) और धारा 6 के अधीन आरोप विरचित किए गए । सेशन न्यायाधीश द्वारा इस अपील में अपीलार्थी तथा सतीश को आरोपित अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया और मृत्यु दंडादेश दिया गया । उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित दोषसिद्धि और दंडादेश की पुष्टि की गई । अपीलार्थी और सतीश द्वारा व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपीलें फाइल की गईं । अपीलों के लंबित रहने के दौरान सतीश की मृत्यु हो गई और उससे संबंधित अपील का उपशमन हो गया । उच्चतम

न्यायालय द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी की अपील को भागत: मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – निर्विवाद तथ्य यह हैं कि अभि. सा. 2 अपने परिवार के सदस्यों के साथ तारीख 14 अप्रैल, 2017 की सायंकाल में अनिल माड़वी के मकान पर चॉक बरहान उत्सव में सम्मिलित हुआ था । उसकी 11 वर्षीया पुत्री गुम हो गई थी और अगले दिन सवेरे मृत पाई गई थी । अगले दिन अपीलार्थी और सतीश को गिरफ्तार किया गया था और उनके द्वारा किए गए कथनों के आधार पर उनके वस्त्रों की बरामदगियां की गई थीं । चिकित्सा साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि उसके साथ बलात्संग किया गया था और हत्या कर दी गई थी । अपीलार्थी के गाय के छप्पर की छत पर रखे फूलदान से एक हरे रंग की चारखानेदार कमीज बरामद की गई थी जिसके सामने के दो काले बटन टूटे हुए थे और जो कंधे के निकट से फटी हुई थी और रक्त का धब्बा था । एक लाल रंग के काली धारियों वाले सेंडो बनियान, जो कंधे के निकट से फटा हुआ था और गहरा रक्त का धब्बा था, के साथ-साथ एक आसमानी नीले रंग की जींस की पैंट भी अभिगृहीत की गई थी, जिसके अस्तर पर 28 नंबर लिखा था और दायीं तरफ पीछे एचएआरडब्ल्यू अंकित था । आसमानी नीले रंग की जींस की पैंट के सामने के भाग पर एक गहरा रक्त का धब्बा था । राज्य न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला, सिविल लाइंस, सागर की रिपोर्ट से यह दर्शित हुआ था कि सतीश के पुरुष डीएनए प्रोफाइल में पाए गए सभी युग्म-विकल्पी वैसे ही थे, जो अभियोक्त्री के योनिक और मलाशय की सलाइडों में पाए गए थे । वैसा ही महिला अलिंगक-गुणसूत्र एसटीआर डीएनए प्रोफाइल मृतका अभियोक्त्री, सतीश की धोती और जांघिए पर पाया गया था । जहां तक आर्टिकल डी, जो अपीलार्थी की एक पैंट है, का संबंध है, डीएनए रिपोर्ट के अनुसार उस पर बहुत सारे ऊर्ध्व-बिंदु पाए गए थे । अपीलार्थी और सतीश अनिल माड़वी के मकान पर उत्सव में मौजूद थे, जैसा कि अभि. सा. 1, 3 और 5 द्वारा अभिसाक्ष्य दिया गया था । अभि. सा. 4 ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि वह गांव में एक छोटा-सा होटल चलाता है और मृतका 9.00 बजे अपराह्न में कुरकुरे खरीदने के लिए उसकी दुकान पर आई थी । उसके 15 मिनट के पश्चात् अपीलार्थी नमकीन खरीदने के

लिए दुकान पर आया था । जयपाल (अभि. सा. 9) ने यह कथन किया था कि अपीलार्थी और सतीश तारीख 15 अप्रैल, 2017 को उसके मकान पर आए थे । उनकी आंखें लाल थीं, बाल बिखरे हुए थे और वे सहमे हुए थे । उन्होंने उसे बताया था कि उन्होंने एक बड़ा हादसा कर दिया है । उस समय अपीलार्थी की माता-मुन्नीबाई आई और सतीश तथा अपीलार्थी चले गए । आधे घंटे बाद गांव में शोर मचा हुआ था, जब मृतका का शव पाया गया था । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन सतीश की परीक्षा के दौरान उसने यह स्वीकार किया था कि वह तारीख 14 अप्रैल, 2017 को अनिल माड़वी के मकान पर मौजूद था और वह तारीख 15 अप्रैल, 2017 को सवेरे अभि. सा. 9 के पास गया था । अपीलार्थी ने भी तारीख 14 अप्रैल, 2017 को अनिल माड़वी के मकान पर और तारीख 15 अप्रैल, 2017 को सवेरे अभि. सा. 9 के मकान पर अपनी मौजूदगी की बात को स्वीकार किया था । उसने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपनी परीक्षा में यह भी कथन किया था कि उसकी आंखें लाल थीं, बाल बिखरे हुए थे और उसने और सतीश ने अभि. सा. 9 से शराब की मांग की थी । यह उल्लेख करना सुसंगत है कि अपीलार्थी ने भी यह कथन किया था कि वह तारीख 14 अप्रैल, 2017 को 9.00 बजे पूर्वाह्न में सतीश के साथ काम के लिए सुदगांव गया था । वापस आते समय उसने सतीश के साथ शराब पी थी । वह 7.00 बजे अपराह्न में सतीश के साथ अनिल माड़वी के मकान पर गया था । उन्हें वहां से चले जाने के लिए कहा गया था क्योंकि वे नशे में थे । अपीलार्थी उसके पश्चात् चैन सिंह की दुकान पर गया, जहां से उसकी माता उसे घर ले गई । वह अपने पड़ौसी, दीपा के मकान में सोया था । अपीलार्थी द्वारा पहने हुए वस्त्र उसके द्वारा किए गए प्रकटन कथन के अनुसरण में उसके गाय के छप्पर की छत पर रखे फूलदान से अभिगृहीत किए गए थे । आर्टिकल बी, जो अपीलार्थी की पैंट है, जिस पर जिप के निकट रक्त का धब्बा पाया गया था, से संबंधित न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला की रिपोर्ट में बहुत सारे ऊर्ध्व-बिंदु दिखाई दिए थे । अपीलार्थी और सतीश ने शराब पी थी और एक-साथ अनिल माड़वी के मकान पर गए थे । चूंकि वे न्यूसेंस पैदा कर रहे थे,

इसलिए उन्हें खदेड़ दिया गया था । अगले दिन सवेरे वे अभि. सा. 9 के पास गए और उसे बताया कि एक बड़ी भारी गलती हो गई है । आर्टिकल क्यू, आर और एस जो मृतका की योनिक स्लाइड, मलाशय स्लाइड और मृतका के बालों पर शुष्क रक्त से संबंधित हैं, के डीएनए प्रोफाइल में वाई (पुरुष) एसटीआर दर्शित हुआ था । सतीश के रक्त के नमूने का आर्टिकल क्यू, आर और एस पर पाए गए आर्टिकल से मिलान हुआ था । अपीलार्थी अन्यत्र उपस्थित होने की बात को साबित करने में पूरी तरह से असफल रहा था । महत्वपूर्ण रूप से, अपीलार्थी के शरीर पर पायी गई खरोंच की क्षतियों के बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है । यह न्यायालय इन समवर्ती निष्कर्षों से सहमत हैं कि अपीलार्थी यथा आरोपित अपराधों के कारित करने का दोषी है और यह न्यायालय अपीलार्थी की दोषसिद्धि में कोई त्रुटि नहीं पाता है । (पैरा 8, 9, 10 और 12)

विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय के निर्णयों के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि मृत्यु दंडादेश अधिरोपित करते समय अपराध की घोरता पर विचार किया गया था । न्यूनकारी परिस्थितियों और अभियुक्त में सुधार या पुनर्वास होने की संभाव्यता पर विचार नहीं किया गया था । अपराध कारित करने की तारीख को अपीलार्थी की आयु 25 वर्ष थी और वह एक अनुसूचित जनजाति समुदाय का है और मजदूरी करके मुश्किल से अपनी आजीविका चलाता है । अभियोजन पक्ष द्वारा अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है कि अपीलार्थी में सुधार या पुनर्वास होने की कोई संभाव्यता नहीं है और मृत्यु दंडादेश का आनुकल्पिक विकल्प पुरोबंधित हो गया है । जिस अपराध के लिए उसे दोषसिद्ध किया गया है, उसके कारित करने से पूर्व उसकी कोई आपराधिक पृष्ठभूमि नहीं है । ऐसी कोई प्रतिकूल बात नहीं है जो कारागार में उसके आचरण के विरुद्ध रिपोर्ट की गई हो । इसलिए मृत्यु दंडादेश को आजीवन कारावास में लघुकृत किया जाना चाहिए । तथापि, उस बर्बरतापूर्ण और क्रूर रीति, जिसमें अपीलार्थी द्वारा एक 11 वर्षीया असहाय लड़की के साथ बलात्संग किया गया था और उसकी हत्या कर दी गई थी, को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी को 30 वर्ष की अवधि के आजीवन कारावास का दंडादेश दिया जाता है, जिसके

दौरान उसे परिहार प्रदान नहीं किया जाएगा । (पैरा 17 और 18)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2019]	(2019) 12 एस. सी. सी. 460 : **राजेन्द्र प्रह्लादराव वासनिक** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	13, 17
[2019]	(2019) 16 एस. सी. सी. 584 : **मोहम्मद मनन** उर्फ **अब्दुल मनन** बनाम **बिहार राज्य** ;	15
[2014]	ए. आई. आर. ऑनलाइन 2014 एस. सी. 123 : **मोफिल खान और एक अन्य** बनाम **झारखंड राज्य** ;	16
[2009]	(2009) 6 एस. सी. सी. 498 : **संतोष कुमार सतीशभूषण बरियार** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	13
[1985]	[1985] 1 उम. नि. प. 995 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116 : **शरद बिरधीचंद शारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	4
[1983]	[1983] 4 उम. नि. प. 215 = (1983) 3 एस. सी. सी. 470 : **माच्छी सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ;	15
[1980]	[1980] 3 उम. नि. प. 856 = (1980) 2 एस. सी. सी. 684 : **बचन सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ;	15
[1977]	[1977] 3 उम. नि. प. 489 = (1976) 4 एस. सी. सी. 158 : **दलबीर कौर** बनाम **पंजाब राज्य** ।	7

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2022 की दांडिक अपील सं. 101-102.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 136 के अधीन दांडिक अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री श्री सिहं, के. जी. साहू, एम. के. कनौजिया और सत्येन्द्र यादव

प्रत्यर्थी की ओर से सुश्री अंकिता चौधरी, उप महाधिवक्ता

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एल. नागेश्वर राव ने दिया ।

न्या. राव – इजाजत दी गई ।

वर्तमान अपीलें मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के उस निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई हैं जिसके द्वारा अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 363, 366क, 364, 346, 376घ, 376क, 302, 201 और लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम, 2012 (जिसे इसमें इसके पश्चात् पोक्सो अधिनियम कहा गया है) की धारा 6 के साथ पठित धारा 5(च)(ड) के अधीन विचारण न्यायालय द्वारा की गई दोषसिद्धि और दिए गए दंडादेश को कायम रखा था ।

2. बृजलाल यादव (अभि. सा. 2) तारीख 14 अप्रैल, 2017 को 9.00 बजे अपराह्न में अपनी पत्नी कलावती (अभि. सा. 1), दो पुत्रों और अपनी पुत्री के साथ चॉक बरहान (नामक समारोह) के उत्सव में सम्मिलित होने के लिए गए थे । जब वे लगभग 11.00 बजे अपराह्न में वापस आ रहे थे, तो उन्होंने महसूस किया कि उनकी पुत्री गायब है । उन्होंने उसे ढूंढ़ना शुरू किया और अगले दिन लगभग 5.00 बजे अभि. सा. 1 ने अपनी पुत्री को एक हैंड-पंप के निकट पड़े हुए पाया । उसकी पुत्री बेहोशी की हालत में थी । अभि. सा. 1 चिल्लाने लगी, जिस पर अभि. सा. 2 और अन्य व्यक्ति उस स्थान पर पहुंचे और पुलिस को बुलाया । जिला वैज्ञानिक अधिकारी, घटनास्थल का निरीक्षण करने वाली अपराध शाखा इकाई, ढिंढोरी, मध्य प्रदेश ने घटनास्थल का निरीक्षण किया । निरीक्षण रिपोर्ट के अनुसार, मृतका का शव चित दशा में पड़ा हुआ था और मृतका के सिर की पिछली तरफ बालों में सूखी घास और गोखरू के बहुत सारे छोटे-छोटे टुकड़े थे । बालों में सहिजन के पेड़ की

सूखी छाल भी थी । दोनों आंखें बंद थी । नाक से झाग निकल रहा था, छोटी-छोटी आंतरिक क्षतियां दिखाई दे रही थीं और ठोडी पर बायीं और दायीं तरफ क्षति के छोटे-छोटे चिह्न थे । गर्दन पर सामने और बायीं तरफ क्षति के छोटे-छोटे चिह्न थे । जननांगों में रक्त मौजूद था । दायीं टांग के तलवे पर रक्त लगा हुआ था । दायीं टांग के टखने के ऊपर भी रक्त मौजूद था । छाती पर बायीं तरफ खरोंच के चिह्न थे और छाती के नीचे खरोंच के प्रकार के अन्य चिह्न थे । दोनों जांघों पर जननांगों तक रक्त के धब्बे पाए गए थे । जांघ के पीछे और गुदा के निकट रक्त पाया गया था । संपूर्ण पीठ और कमर पर क्षति के चिह्न मौजूद थे । अन्वेषक अधिकारी को शव को मरणोत्तर परीक्षा के लिए भेजने और घटनास्थल पर पाई गई दृष्टिगोचर वस्तुओं को एकत्रित, परिरक्षित और पैक करने के निदेश दिए गए थे । अभियोक्त्री द्वारा पहने हुए वस्त्रों का अभिग्रहण करने और उनका परीक्षण कराने का भी निदेश दिया गया था । मरणोत्तर परीक्षा तारीख 15 अप्रैल, 2017 को 4.00 बजे अपराह्न में अभि. सा. 6-डा. सज्जन कुमार ऊके द्वारा की गई थी और उसने निम्नलिखित क्षतियां पाई थीं :–

> "शरीर के निचले अंगों में शव-काठिन्य मौजूद था और यह दोनों ऊपरि अंगों में आंशिक रूप से चला गया था । आंखें बंद थीं, मुंह बंद था, मुट्ठी आधी खुली हुई थी, कार्निया संकुलित था, पुतली फैली हुई थीं, चेहरा नीला पड़ा हुआ था, होंठ नीले पड़े हुए थे, उंगलियां और हाथ नीले पड़े हुए थे । दोनों नासिकाओं पर रक्तयुक्त झाग मौजूद था । मुंह पर जबड़े के निचले किनारे तक दोनों तरफ रक्तयुक्त लार थी । गर्दन की दायीं तरफ, गर्दन के मध्य भाग पर चार नील के चिह्न थे, गर्दन की बायीं तरफ तीसरे मध्य भाग पर 1-1/2 सें. मी. X 1 सें. मी. के बीच तीन नील के चिह्न थे । दोनों गालों पर 1 सें. मी. X 1 सें. मी. का नील था, बायीं तरफ नेत्रगुहा के नीचे 1 सें. मी. X 1 सें. मी. का नील था । पश्च-उरोस्थि की बायीं तरफ 11/2 सें. मी. का नील था । बाएं नितंब पर अंशफलक के नीचे वाई आकार का 1 सें. मी. का, ½ सें. मी. एक्स वी आकार का नील था । गुदा प्रदेश के चारों ओर दोनों जांघों

के निचले मध्य तृतीय मूलाधार क्षेत्र पर गुलाबी रंग के सूखे थक्के मौजूद थे । योनि के मुहासे पर 3 सें. मी. नीचे तक रक्त मौजूद था और मांसपेशी और त्वचा की पूरी मोटाई थी । गुदा के मुहासे पर और गुदा के आंतरिक भाग पर सूखा थक्केदार रक्त मौजूद था । इस खुले हुए भाग में दो उंगलियां आसानी से जा रही थी । सभी क्षतियां मृत्यु-पूर्व प्रकृति की हैं ।"

मृत्यु का कारण गला दबाने की वजह से श्वासोवरूद्ध, न्यूरोजैनिक सदमा, जबरदस्ती बलात्संग करने के कारण योनि और गुदा खुलने से गंभीर क्षतियां और रक्तस्राव होना था ।

3. संदेह के आधार पर, तारीख 16 अप्रैल, 2017 को अपीलार्थी और सतीश पुत्र जेहर सिंह धूमकेतु को गिरफ्तार किया गया । सतीश का कथन अभिलिखित किया गया, जिसके अनुसरण में मृतका का कंबल और शाल तथा उसके द्वारा पहने हुए वस्त्रों को अभिगृहीत किया गया । इसी प्रकार, अपीलार्थी द्वारा पहने हुए वस्त्रों को उसके द्वारा दिए गए कथन के अनुसरण में अभिगृहीत किया गया था, जो उसने गाय के छप्पर में छिपाकर रखे हुए थे । अन्वेषण पूर्ण होने पर तारीख 27 जून, 2017 को अंतिम रिपोर्ट फाइल की गई । सतीश और अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 363, 366क, 364, 346, 376घ, 376क या अनुकल्पत: भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 201 और पोक्सो अधिनियम की धारा 6 के साथ पठित धारा 5(च)(ड) के अधीन आरोप विरचित किए गए । अभियोजन पक्ष द्वारा 12 साक्षियों की परीक्षा की गई । सेशन न्यायाधीश, ढिंढोरी ने अपीलार्थी और सतीश को आरोपित अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया और उन्हें मृत्यु दंडादेश दिया । उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित दोषसिद्धि और दंडादेश को कायम रखते हुए निर्देश का उत्तर अपीलार्थी और सतीश के विरुद्ध दिया । अपीलार्थी और सतीश ने व्यथित होकर इस न्यायालय में समावेदन किया है । अपीलों के लंबित रहने के दौरान सतीश की मृत्यु हो गई और इसलिए उसकी बाबत अपील का उपशमन हो गया ।

4. चूंकि 11 वर्ष की आयु की लड़की के व्यपहरण, बलात्संग और हत्या के संबंध में कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य नहीं है, इसलिए यह मामला पारिस्थितिक साक्ष्य पर निर्भर है । **शरद बिरधीचंद शारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा भली-भांति स्थिर किए गए सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के साक्ष्य की समीक्षा की थी । अभि. सा. 1 के परिसाक्ष्य के प्रति निर्देश किया गया, जिसने यह कथन किया था कि अपीलार्थी और सतीश अनिल माड़वी के मकान पर चॉक बरहान के उत्सव में मौजूद थे और शव की बरामदगी के पश्चात् उन्होंने अपने आपको छिपा लिया था । अभि. सा. 4, चैन सिंह, जो गांव में एक छोटा-सा होटल चलाता है, के मौखिक परिसाक्ष्य के प्रति भी निर्देश किया गया । उसने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि विपदग्रस्त लड़की तारीख 14 अप्रैल, 2017 को 9.00 बजे अपराह्न में कुरकुरे खरीदने के लिए उसकी दुकान पर आई थी और उसके पास एक कंबल और शाल थी । इसके पंद्रह मिनट के पश्चात्, अपीलार्थी भी नमकीन खरीदने के लिए दुकान पर आया था । विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों द्वारा किए गए प्रकटन कथनों और विपदग्रस्त लड़की की शाल और कंबल तथा सतीश और अपीलार्थी के वस्त्रों की बरामदगियों पर विचार किया । कंबल और घटनास्थल से जो एक बटन का अभिग्रहण किया गया था, उसे सतीश की कमीज का होना साबित किया गया था । विचारण न्यायालय द्वारा डा. विजय पैगवार (अभि. सा. 11), जिसने सतीश और अपीलार्थी की क्षतियों की परीक्षा की थी, के साक्ष्य पर विचार किया गया । अपीलार्थी के बाएं कंधे के ऊपरि भाग पर एक इंच आकार की खरोंच थी, कंधे के नीचे बायीं तरफ 0.5 इंच आकार की खरोंच का चिह्न था, शरीर के पीछे निचले भाग पर 0.5 इंच आकार की खरोंच का चिह्न था, दायीं भुजा पर 2 इंच का खरोंच का चिह्न था और गाल पर 1 सें. मी. आकार का खुरचने का चिह्न था और पसलियों पर 4 इंच आकार का खुरचने का चिह्न था । दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अधीन अपीलार्थी और सतीश से उनकी

---

[1] [1985] 1 उम. नि. प. 995 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116.

परीक्षा के दौरान दिए गए उत्तरों पर भी विचार किया गया था । विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी की इस स्वीकारोक्ति पर भी विचार किया गया था कि उसने घटना के दिन सायंकाल में सतीश के साथ शराब पी थी और वे दोनों जयपाल सिंह (अभि. सा. 9) के पास गए थे और अगले दिन सवेरे उससे शराब देने के लिए अनुरोध किया था । अपीलार्थी के इस वृत्तांत को कि उसे तारीख 14 अप्रैल, 2017 की रात्रि में उसकी माता द्वारा घर ले जाया गया था और चूंकि वह उसे गालियां दे रही थी, इसलिए अपीलार्थी अपने पड़ौसी दीपा के मकान पर चला गया था, विचारण न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया गया था क्योंकि न तो उसकी माता और न ही दीपा की परीक्षा की गई थी । विचारण न्यायालय ने इस बात से आश्वस्त होने पर कि परिस्थितियां अपीलार्थियों की दोषिता की परिकल्पना के संगत हैं इसलिए उन्हें आरोपित अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया । अपीलार्थी और सतीश को सुनने के पश्चात् विचारण न्यायालय ने उन्हें मृत्यु दंडादेश दिया क्योंकि वे बलात्संग और हत्या के जघन्य अपराध कारित करने के दोषी पाए गए थे । उच्च न्यायालय ने निर्देश पर विचार करते हुए अभिलेख पर के साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन किया और विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित दोषसिद्धि और दंडादेश को कायम रखा ।

5. अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री श्रीसिंह ने यह दलील दी कि कोई भी प्रकटन और बरामदगी अपीलार्थी को आलिप्त नहीं करती है । उन्होंने यह दलील दी कि सतीश का प्रकटन कथन तारीख 16 अप्रैल, 2017 को 1.40 बजे अपराह्न में अभिलिखित किया गया था और अपीलार्थी का प्रकटन कथन डेढ़ घंटे बाद अभिलिखित किया गया था । दोनों कथन अभि. सा. 10 द्वारा अभिलिखित किए गए थे । उन्होंने यह दलील दी कि निचले न्यायालयों ने अपीलार्थी के प्रकटन कथन का अवलंब लेकर गलती कारित की थी । उन्होंने यह भी कहा कि वस्तुएं जो अभिकथित घटनास्थल से बरामद की गई थी, उनमें से किसी का भी अपीलार्थी से कोई संबंध नहीं है । विद्वान् काउंसेल के अनुसार, कुरकुरे का पैकेट, जो अभि. सा. 4 की दुकान से खरीदा गया था, उसकी अभि. सा. 4 द्वारा न्यायालय में

शनाख्त नहीं की गई थी । घटनास्थल से अभिगृहीत काला बटन सतीश की कमीज का था, जिससे अपीलार्थी का कोई संबंध नहीं है । श्री श्रीसिंह ने कमीज, लाल सैंडो बनियान और जीन्स की पैंट के अभिग्रहण पर टिप्पणी करते हुए यह दलील दी कि यह साबित करने के लिए सीरम विज्ञान संबंधी परीक्षण नहीं किया गया था कि वस्त्रों पर पाया गया रक्त मानव रक्त था । उन्होंने यह दलील दी कि अपीलार्थी के शरीर पर पाई गई क्षतियों को एक परिस्थिति के रूप में नहीं लिया जा सकता है क्योंकि वह शारीरिक कार्य करने वाला एक श्रमिक है । उन्होंने यह उल्लेख किया कि गिरफ्तारी ज्ञापन में "क्षति चिह्न" का स्तंभ खाली पाया गया था । अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि मृतका के साथ अभियुक्तों को अंतिम बार एक-साथ देखे जाने के साक्ष्य का निचले न्यायालयों द्वारा उचित रूप से मूल्यांकन नहीं किया गया था । उन्होंने भगत सिंह (अभि. सा. 5) के साक्ष्य को निर्दिष्ट किया और यह दलील दी कि अपीलार्थी को उसके मकान से गिरफ्तार किया गया था और वह केवल सतीश था जो फरार था । उन्होंने यह दलील दी कि अपीलार्थी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपनी परीक्षा में किए गए कथनों का उचित रूप से मूल्यांकन नहीं किया गया था । अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह उल्लेख किया कि अभियुक्त द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन कथन में की गई स्वीकारोक्तियों को सारभूत साक्ष्य के रूप में नहीं समझा जा सकता है । अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल के अनुसार, परिस्थितियों की श्रृंखला अपूर्ण है और अपीलार्थी की दोषिता को साबित करने के लिए केवल एक परिकल्पना के अनुरूप नहीं है । मृत्यु दंडादेश पर, अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि ऋजु विचारण के अधिकार का अतिक्रमण हुआ है जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन प्रत्याभूत है क्योंकि प्रस्तुत मामले में प्रभावी विधिक सहायता उपलब्ध नहीं कराई गई थी । न्यायालय द्वारा नियुक्त न्याय-मित्र को साक्षियों की प्रतिपरीक्षा करने के लिए पर्याप्त समय नहीं दिया गया था और अपीलार्थी को दंडादिष्ट करने से पूर्व सुसंगत सामग्री प्रस्तुत करने का अवसर नहीं दिया गया था । न्यूनकारी परिस्थितियों

पर विचार नहीं किया गया था । अपीलार्थी में सुधार होने की संभाव्यता और आजीवन कारावास का दंडादेश असंदिग्ध रूप से पुरोबंधित हो जाने की बात पर निचले न्यायालयों द्वारा विचार नहीं किया गया था । अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 376क के अधीन दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता था । वर्ष 2013 में संशोधन के पश्चात् सामूहिक बलात्संग को भारतीय दंड संहिता की धारा 376(1) और (2) की परिधि से बाहर निकाला गया है । अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थी और सतीश के बीच भारतीय दंड संहिता की धारा 376घ के अधीन अपराध कारित करने के लिए किसी सामान्य आशय को सिद्ध करने के लिए कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया था । सामूहिक बलात्संग करने के लिए दंडादेश आजीवन कारावास है । अत: मृत्यु दंडादेश का अधिरोपण असंधार्य है ।

6. मध्य प्रदेश राज्य की ओर से सुश्री अंकिता चौधरी, विद्वान् उप महाधिवक्ता ने विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय के निर्णयों की यह दलील देते हुए प्रतिरक्षा की कि घटनाओं/परिस्थितियों की श्रृंखला अटूट है । उनके अनुसार, अभियोजन पक्ष ने यह साबित किया है कि अनिल माड़वी के मकान पर चॉक बरहान का उत्सव था, विपदग्रस्त को चैन सिंह (अभि. सा. 4) की दुकान पर देखा गया था और कुछ ही समय के पश्चात् अपीलार्थी दुकान पर आया था और अभि. सा. 5 ने मृतका को सतीश के मकान पर जाते हुए देखा था और इस बात की संपुष्टि सतीश द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपने कथन में की गई थी, जिसमें उसने स्वीकार किया था कि मृतका अपनी काली शाल रखने के लिए उसके मकान पर आई थी । मृतका उसके पश्चात् गायब हो गई थी और उसका शव अगले दिन सवेरे पाया गया था । चिकित्सीय साक्ष्य से मृतका के साथ बर्बरतापूर्वक बलात्संग करने और हत्या करने की बात प्रकट होती है । वैज्ञानिक साक्ष्य से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि सतीश ने बलात्संग का अपराध किया था । सतीश और अपीलार्थी को तारीख 14 अप्रैल, 2017 के सायंकाल में एक-साथ देखा गया था और वे अगले दिन सवेरे अभि. सा. 9 के पास भी गए थे । वे हड़बड़ाए हुए थे और अभि. सा. 9 से शराब देने के लिए

अनुरोध किया था । इसके पश्चात् सतीश गायब हो गया था और उसे दोपहर बाद गिरफ्तार किया गया था । प्रकटन कथन के अनुसरण में अपीलार्थी के वस्त्रों को उसके मकान में गाय के छप्पर से अभिगृहीत किया गया था । राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने अपीलार्थी के शरीर पर पाई गई क्षतियों को निर्दिष्ट किया जिनके बारे में अपीलार्थी द्वारा कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया था । उन्होंने न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला, सागर द्वारा तैयार की गई डीएनए रिपोर्ट का भी अवलंब लिया । आर्टिकल डी के प्रति विनिर्दिष्ट निर्देश किया गया, जो कि अपीलार्थी की पैंट थी, जिस पर जिप के भाग के निकट रक्त का धब्बा था । सुश्री चौधरी ने यह दलील दी कि आर्टिकल डी का परीक्षण करते समय बहुत सारे ऊर्ध्व-बिंदु दिखाई दिए थे जिनका यह अर्थ है कि आर्टिकल डी पर एक से अधिक डीएनए विशेषक थे । राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि अपीलार्थी अन्यत्र उपस्थित होने के अपने अभिवाक् को साबित नहीं कर सका था । अपीलार्थी अपनी माता और दीपा, जिसके मकान में वह तारीख 14 अप्रैल, 2017 की रात्रि में सोया था, की परीक्षा कराने में असफल रहा था । राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने अपीलार्थी से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन उसकी परीक्षा में पूछे गए प्रश्नों के दिए गए उत्तरों को निर्दिष्ट करते हुए, इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि का अवलंब लिया और यह दलील दी कि यदि परिस्थितियां साबित हो जाती हैं तो मात्र इनकार करने से श्रृंखला में एक अतिरिक्त कड़ी जुड़ जाएगी । राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई कि यद्यपि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन कथन को दोषसिद्धि के लिए आधार नहीं बनाया जा सकता है, तो भी इसे अभियुक्त के विरुद्ध साक्ष्य के रूप में उस सीमा तक प्रयुक्त किया जा सकता है जिस सीमा तक इससे अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन होता है । एक सुकुमार आयु की असहाय लड़की के साथ बलात्संग करने के पश्चात् मार-पीट कर उसकी हत्या कर दी गई थी । अपीलार्थी किसी नरमी के योग्य नहीं है । राज्य की दलील यह है कि विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी पर उसके द्वारा कारित जघन्य अपराध के लिए मृत्यु दंडादेश अधिरोपित

करके कोई गलती नहीं की गई है ।

7. **दलबीर कौर** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने विशेष इजाजत द्वारा दांडिक अपील में हस्तक्षेप को शासित करने वाले सिद्धांतों का सारांश दिया है जो निम्नलिखित है :–

> "(1) यह न्यायालय तथ्य विषयक समवर्ती निष्कर्ष में विशुद्ध साक्ष्य की विवेचना के आधार पर हस्तक्षेप नहीं करेगा, भले ही उसे साक्ष्य के बारे में भिन्न मत अपनाना हो ।
>
> (2) न्यायालय मामूली तौर पर साक्ष्य का पुन: अवधारण या पुनर्विलोकन तभी करेगा जब कि उच्च न्यायालय का मूल्यांकन विधि या प्रक्रिया संबंधी किसी गलती के कारण दूषित हो या अभिलेख की किसी गलती या साक्ष्य के बारे में भ्रम पर आधारित हो या साक्ष्य से विसंगत हो, उदाहरणार्थ, जहां आंखों देखा साक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य से पूर्णतया विसंगत हो और इसी प्रकार की अन्य बातों के कारण दूषित हो ।
>
> (3) यह न्यायालय उच्च न्यायालय के मत के स्थान पर अपना मत प्रतिस्थापित करने की दृष्टि से साक्ष्य की विश्वसनीयता पर विचार नहीं करेगा ।
>
> (4) यह न्यायालय उस दशा में हस्तक्षेप करेगा जब कि उच्च न्यायालय ने न्यायिक पद्धति, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों या निष्पक्ष सुनवाई की अवहेलना करते हुए तथ्य विषयक निष्कर्ष निकाला हो या विधि या प्रक्रिया के आज्ञापक उपबंधों के उल्लंघन में कार्य किया हो जिसके परिणामस्वरूप अभियुक्त पर गंभीर प्रभाव पड़ा हो या उसके प्रति गंभीर अन्याय किया गया हो ;
>
> (5) यह न्यायालय उस दशा में भी हस्तक्षेप कर सकता है जब कि साबित तथ्यों के आधार पर विधि संबंधी गलत अनुमान लगाया गया हो या जहां उच्च न्यायालय के निष्कर्ष प्रकट रूप से

---

[1] [1977] 3 उम. नि. प. 489 = (1976) 4 एस. सी. सी. 158.

अनुचित हों और किसी साक्ष्य पर आधारित न हों ।

इस न्यायालय ने पक्षकारों की ओर से काउंसेलों को समय, ऊर्जा बचाने के लिए और सुविज्ञ-अभिमत के उपरोक्त सिद्धांतों तक अपनी दलीलें सीमित करने के लिए प्रेरित किया ।

8. निर्विवाद तथ्य यह हैं कि अभि. सा. 2 अपने परिवार के सदस्यों के साथ तारीख 14 अप्रैल, 2017 की सायंकाल में अनिल माड़वी के मकान पर चॉक बरहान उत्सव में सम्मिलित हुआ था । उसकी 11 वर्षीय पुत्री गुम हो गई थी और अगले दिन सवेरे मृत पाई गई थी । अगले दिन अपीलार्थी और सतीश को गिरफ्तार किया गया था और उनके द्वारा किए गए कथनों के आधार पर उनके वस्त्रों की बरामदगियां की गई थीं । चिकित्सा साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि उसके साथ बलात्संग किया गया था और हत्या कर दी गई थी । अपीलार्थी के गाय के छप्पर की छत पर रखे फूलदान से एक हरे रंग की चारखानेदार कमीज बरामद की गई थी जिसके सामने के दो काले बटन टूटे हुए थे और जो कंधे के निकट फटी हुई थी और रक्त का धब्बा था । एक लाल रंग के काली धारियों वाले सेंडो बनियान, जो कंधे के निकट से फटा हुआ था और गहरा रक्त का धब्बा था, के साथ-साथ एक आसमानी नीले रंग की जींस की पैंट भी अभिगृहीत की गई थी, जिसके अस्तर पर 28 नंबर लिखा था और दायीं तरफ पीछे एचएआरडब्ल्यू अंकित था । आसमानी नीले रंग की जींस की पैंट के सामने के भाग पर एक गहरा रक्त का धब्बा था । राज्य न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला, सिविल लाइंस, सागर की रिपोर्ट से यह दर्शित हुआ था कि सतीश के पुरुष डीएनए प्रोफाइल में पाए गए सभी युग्म-विकल्पी वैसे ही थे, जो अभियोक्त्री के योनिक और मलाशय की सलाइडों में पाए गए थे । वैसा ही महिला अलिंगक-गुणसूत्र एसटीआर डीएनए प्रोफाइल मृतका अभियोक्त्री, सतीश की धोती और जांघिए पर पाया गया था । जहां तक आर्टिकल डी, जो अपीलार्थी की एक पैंट है, का संबंध है, डीएनए रिपोर्ट के अनुसार उस पर बहुत सारे ऊर्ध्व-बिंदु पाए गए थे ।

9. अपीलार्थी और सतीश अनिल माड़वी के मकान पर उत्सव में

मौजूद थे, जैसा कि अभि. सा. 1, 3 और 5 द्वारा अभिसाक्ष्य दिया गया था । अभि. सा. 4 ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि वह गांव में एक छोटा-सा होटल चलाता है और मृतका 9.00 बजे अपराह्न में कुरकुरे खरीदने के लिए उसकी दुकान पर आई थी । उसके 15 मिनट के पश्चात् अपीलार्थी नमकीन खरीदने के लिए दुकान पर आया था । जयपाल (अभि. सा. 9) ने यह कथन किया था कि अपीलाथी और सतीश तारीख 15 अप्रैल, 2017 को उसके मकान पर आए थे । उनकी आंखें लाल थीं, बाल बिखरे हुए थे और वे सहमे हुए थे । उन्होंने उसे बताया था कि उन्होंने एक बड़ा हादसा कर दिया है । उस समय अपीलार्थी की माता-मुन्नीबाई आई और सतीश तथा अपीलार्थी चले गए । आधे घंटे बाद गांव में शोर मचा हुआ था, जब मृतका का शव पाया गया था ।

10. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन सतीश की परीक्षा के दौरान उसने यह स्वीकार किया था कि वह तारीख 14 अप्रैल, 2017 को अनिल माड़वी के मकान पर मौजूद था और वह तारीख 15 अप्रैल, 2017 को सवेरे अभि. सा. 9 के पास गया था । अपीलार्थी ने भी तारीख 14 अप्रैल, 2017 को अनिल माड़वी के मकान पर और तारीख 15 अप्रैल, 2017 को सवेरे अभि. सा. 9 के मकान पर अपनी मौजूदगी की बात को स्वीकार किया था । उसने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपनी परीक्षा में यह भी कथन किया था कि उसकी आंखें लाल थीं, बाल बिखरे हुए थे और उसने और सतीश ने अभि. सा. 9 से शराब की मांग की थी । यह उल्लेख करना सुसंगत है कि अपीलार्थी ने भी यह कथन किया था कि वह तारीख 14 अप्रैल, 2017 को 9.00 बज पूर्वाह्न में सतीश के साथ काम के लिए सुदगांव गया था । वापस आते समय उसने सतीश के साथ शराब पी थी । वह 7.00 बजे अपराह्न में सतीश के साथ अनिल माड़वी के मकान पर गया था । उन्हें वहां से चले जाने के लिए कहा गया था क्योंकि वे नशे में थे । अपीलार्थी उसके पश्चात् चैन सिंह की दुकान पर गया, जहां से उसकी माता उसे घर ले गई । वह अपने पड़ोसी, दीपा के मकान में सोया था ।

11. तारीख 17 अप्रैल, 2017 को डा. विजय पेगवार (अभि. सा.

11) द्वारा अपीलार्थी का परीक्षण किया गया था और उसके शरीर पर निम्नलिखित क्षतियां पाई गई थीं :–

(i) कंधे पर ऊपरि तरफ 1 इंच का खरोंच का चिह्न,

(ii) बाएं कंधे के निचले भाग पर 0.5 इंच का खरोंच का चिह्न,

(iii) शरीर के पीछे निचले भाग पर 0.5 इंच का खरोंच का चिह्न,

(iv) दायीं भुजा पर 2 इंच के खरोंच के चिह्न,

(v) गाल पर 1 सें. मी. का खुरचने का चिह्न, और

(vi) दायीं निचली पार्श्विक पसली पर 4 इंच आकार की खुरचने की क्षति । सतीश के शरीर पर जो खरोंच के चिह्न पाए गए थे, उनका डा. विजय पेगवार द्वारा भी परीक्षण किया गया था ।

12. अपीलार्थी द्वारा पहने हुए वस्त्र उसके द्वारा किए गए प्रकटन कथन के अनुसरण में उसके गाय के छप्पर की छत पर रखे फूलदान से अभिगृहीत किए गए थे । आर्टिकल बी, जो अपीलार्थी की पैंट है, जिस पर जिप के निकट रक्त का धब्बा पाया गया था, से संबंधित न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला की रिपोर्ट में बहुत सारे ऊर्ध्व-बिंदु दिखाई दिए थे । अपीलार्थी और सतीश ने शराब पी थी और एक-साथ अनिल माड़वी के मकान पर गए थे । चूंकि वे न्यूसेंस पैदा कर रहे थे, इसलिए उन्हें खदेड़ दिया गया था । अगले दिन सवेरे वे अभि. सा. 9 के पास गए और उसे बताया कि एक बड़ी भारी गलती हो गई है । आर्टिकल क्यू, आर और एस जो मृतका की योनिक स्लाइड, मलाशय स्लाइड और मृतका के बालों पर शुष्क रक्त से संबंधित हैं, के डीएनए प्रोफाइल में वाई (पुरुष) एसटीआर दर्शित हुआ था । सतीश के रक्त के नमूने का आर्टिकल क्यू, आर और एस पर पाए गए आर्टिकल से मिलान हुआ था । अपीलार्थी अन्यत्र उपस्थित होने की बात को साबित करने में पूरी तरह से असफल रहा था । महत्वपूर्ण रूप से, अपीलार्थी के शरीर पर पायी गई खरोंच की क्षतियों के बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है । हम इन समवर्ती निष्कर्षों से सहमत हैं कि अपीलार्थी यथा आरोपित अपराधों के कारित करने का दोषी है और हम अपीलार्थी की दोषसिद्धि में

कोई त्रुटि नहीं पाते हैं ।

13. यह न्याय का उपहास है कि अपीलार्थी को स्वयं की प्रतिरक्षा करने के लिए उचित अवसर नहीं दिया गया था । बलात्संग और हत्या के दांडिक मामलों का जल्दबाजी में न्याय-निर्णयन करने की विचारण न्यायालयों की अचंभित करने वाली प्रवृत्ति को उपदर्शित करने वाला यह एक उत्कृष्ट मामला है । यह एक अति सामान्य विधि है कि अभियुक्त एक ऋजु विचारण का हकदार है, जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन प्रत्याभूत है । एक ही दिन दोषसिद्धि और दंडादेश का आदेश पारित किए जाने के संबंध में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 235(2) का उद्देश्य और प्रयोजन यह है कि अभियुक्त को उस पर अधिरोपित किए जाने वाले दंडादेश के विरुद्ध एक अभ्यावेदन देने के लिए अवश्य अवसर दिया जाना चाहिए । अभियुक्त को एक प्रभावी अवसर प्रदान करने के लिए दोषसिद्धि और दंडादिष्ट करने के लिए एक विभक्त सुनवाई की जानी आवश्यक है । (**संतोष कुमार सतीशभूषण बरियार** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] और **राजेन्द्र प्रह्लादराव वासनिक** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[2] वाले मामले देखें) ।

14. विधिक सहायता के माध्यम से नियुक्त अधिवक्ता, श्री के. जी. साहू तारीख 4 जुलाई, 2017 को अपीलार्थी की ओर से सेशन न्यायालय के समक्ष हाजिर हुए थे और मामले को आरोप विरचित करने के लिए तारीख 25 अप्रैल, 2017 के लिए स्थगित किया गया था । तारीख 25 जुलाई, 2017 को श्री एम. के. कनौजिया, अधिवक्ता ने अपना उपसंजाति ज्ञापन फाइल किया । उसी दिन विचारण न्यायालय ने यह अभिलिखित किया कि आरोपों पर तर्क सुने गए हैं । आरोप विरचित किए गए और विचारण के लिए अनुसूची दी गई । तारीख 2 अगस्त, 2017 को 9 साक्षियों की परीक्षा किया जाना नियत किया गया और तारीख 3 अगस्त, 2017 को 6 साक्षियों की परीक्षा की जानी थी । तारीख 2 अगस्त, 2017 को श्री कनौजिया, अधिवक्ता ने न्यायालय में

---

[1] (2009) 6 एस. सी. सी. 498.

[2] (2019) 12 एस. सी. सी. 460.

यह अभ्यावेदन दिया कि वह अभियुक्त की प्रतिरक्षा करने के लिए इच्छुक नहीं है । श्री सत्येन्द्र यादव, अधिवक्ता को अभियुक्त का प्रतिनिधित्व करने के लिए नियुक्त किया गया । उसी दिन अभि. सा. 1, 2 और 3 की परीक्षा की गई और अगले दिन अभि. सा. 4 और 5 की भी परीक्षा की गई थी । अंतिम बहस तारीख 26 अक्तूबर, 2017 को सुनी गई थी और निर्णय तारीख 3 नवंबर, 2017 को लिखवाया गया था । विचारण न्यायालय ने उसी दिन अपीलार्थी और सतीश को मृत्यु की शास्ति का दंडादेश देते हुए आदेश पारित किया ।

15. **बचन सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[1]**, माच्छी सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[2] वाले मामलों में इस न्यायालय के निर्णयों पर विचार करने के पश्चात् इस न्यायालय ने **मोहम्मद मनन** उर्फ **अब्दुल मनन** बनाम **बिहार राज्य**[3] वाले मामले में निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया था :–

> "विधि की प्रतिपादना जो ऊपर निर्दिष्ट निर्णयों से प्रकट होती है, यह है कि मृत्यु दंडादेश विरल से विरलतम मामलों के सिवाय अधिरोपित नहीं किया जा सकता है, जिसके लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 354(3) में आदिष्ट अनुसार विशेष कारणों को अभिलिखित किया जाना चाहिए । यह विनिश्चय करने के लिए कि क्या कोई मामला विरल से विरलतम प्रवर्ग के अंतर्गत आता है या नहीं, अपराध की नृशंसता और/या विभत्स और/या जघन्य प्रकृति एकमात्र मानदंड नहीं है । यह केवल अपराध ही नहीं, जिस पर न्यायालय को ध्यान देना चाहिए अपितु अपराधी, उसकी मानसिक दशा, उसकी सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि आदि को भी ध्यान में रखना चाहिए । मृत्यु दंडादेश देना एक अपवाद है और आजीवन कारावास नियम है ।"

16. **मोफिल खान और एक अन्य** बनाम **झारखंड राज्य**[4] वाले

---

[1] [1980] 3 उम. नि. प. 856 = (1980) 2 एस. सी. सी. 684.

[2] [1983] 4 उम. नि. प. 215 = (1983) 3 एस. सी. सी. 470.

[3] (2019) 16 एस. सी. सी. 584.

[4] ए. आई. आर. ऑनलाइन 2014 एस. सी. 123.

मामले में निम्नलिखित मत व्यक्त किया था :–

"8. शमनकारी परिस्थितियों में से एक परिस्थिति अभियुक्त में सुधार होने और पुनर्वासित होने की अधिसंभाव्यता है । राज्य इस बात के लिए कर्तव्याधीन है कि यह सिद्ध करने के लिए साक्ष्य उपाप्त करे कि अभियुक्त में सुधार होने और पुनर्वास की कोई संभाव्यता नहीं है । मृत्यु दंडादेश सिवाय विरल से विरलतम मामलों के, जब एक कमतर दंड का आनुकल्पिक विकल्प असंदिग्ध रूप से पुरोबंधित हो गया हो, नहीं दिया जाना चाहिए । {बचन सिंह **बनाम** पंजाब राज्य [1980] 3 उम. नि. प. 856 = (1980) 2 एस. सी. सी. 684 वाला मामला देखें} । इस बात का समाधान करने के लिए दंड देकर सुधार करने की कोई गुंजाइश नहीं है, और आजीवन कारावास देना पूरी तरह से व्यर्थ होगा, जो न्यायालय को उस स्पष्ट साक्ष्य को रेखांकित करना होगा कि सिद्धदोष व्यक्ति क्यों किसी प्रकार की सुधारात्मक और पुनर्वासन स्कीम के लिए उपयुक्त नहीं है । यह विश्लेषण केवल तब कड़ाई से किया जा सकता है जब न्यायालय अन्य परिस्थितियों के साथ-साथ अपराधी से संबंधित परिस्थितियों पर भी ध्यान केंद्रित करे । [संतोष कुमार सतीशभूषण बरियार **बनाम** महाराष्ट्र राज्य (2009) 6 एस. सी. सी. 498 वाला मामला देखें] । राजेन्द्र प्रहलादराव वासनिक **बनाम** महाराष्ट्र राज्य [(2019) 12 एस. सी. सी. 460] वाले मामले में इस न्यायालय ने मृत्यु दंडादेश की पुष्टि करते हुए इस न्यायालय के एक निर्णय के पुनर्विलोकन पर विचार किया था और निम्नलिखित मत व्यक्त किया था :–

'45. इस न्यायालय के विभिन्न विनिश्चयों द्वारा अधिकथित विधि में स्पष्ट और असंदिग्ध रूप से यह आदिष्ट किया गया है कि न्यायालयों द्वारा मृत्यु दंडादेश अधिनिर्णीत करने से पूर्व इस बात की अधिसंभाव्यता (न कि संभाव्यता या अनधिसंभाव्यता या असंभाव्यता) पर गंभीरतापूर्वक विचार करना चाहिए कि सिद्धदोष व्यक्ति को सुधारा जा सकता है

> और समाज में पुनर्वासित किया जा सकता है । यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 354(3) में आदिष्ट 'विशेष कारणों' की अपेक्षा है और इसे हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए चूंकि इसमें किसी व्यक्ति के जीवन को समाप्त करना अंतर्वलित होता है । इस आदेश को प्रभावी करने के लिए, अभियोजन पक्ष पर यह आबद्धता है कि वह न्यायालय में, साक्ष्य द्वारा, यह साबित करे कि अधिसंभाव्यता यह है कि सिद्धदोष व्यक्ति को सुधारा या पुनर्वासित नहीं किया जा सकता है । इस बात की पूर्ति, अन्य बातों के साथ-साथ, कारागार में उसके आचरण, कारागार से बाहर उसके आचरण यदि वह कुछ समय के लिए जमानत पर रहा हो, के बारे में सामग्री, उसके मानसिक हाव-भाव के बारे में चिकित्सीय साक्ष्य, उसके परिवार के साथ संपर्क और इसी प्रकार की अन्य बातों को अभिलेख पर लाकर की जा सकती है । इसी प्रकार, सिद्धदोष व्यक्ति भी इन मुद्दों पर साक्ष्य प्रस्तुत कर सकता है ।'"

17. विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय के निर्णयों के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि मृत्यु दंडादेश अधिरोपित करते समय अपराध की घोरता पर विचार किया गया था । न्यूनकारी परिस्थितियों और अभियुक्त में सुधार या पुनर्वास होने की संभाव्यता पर विचार नहीं किया गया था । **राजेन्द्र प्रहलादराव वासनिक** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की निम्नलिखित मताभिव्यक्तियों को निर्दिष्ट करना सुसंगत है :–

> "47. सिद्धदोष व्यक्ति में सुधार होने, समाज में उसके पुनर्वास और पुन:एकीकृत करने की बात पर अधिक जोर नहीं दिया जा सकता है । बचन सिंह {बचन सिंह **बनाम** पंजाब राज्य [1980] 3 उम. नि. प. 856 = (1980) 2 एस. सी. सी. 684 वाले मामले तक न्यायालयों द्वारा दिया जाने वाला जोर प्राथमिक रूप से अपराध की प्रकृति, इसकी नृशंसता और घोरता पर था ।

[1] (2019) 12 एस. सी. सी. 460.

बचन सिंह {बचन सिंह **बनाम** पंजाब राज्य [1980] 3 उम. नि. प. 856 = (1980) 2 एस. सी. सी. 684 वाले मामले में दंडादेश देने की प्रक्रिया को एक नई पृष्ठभूमि में प्रस्तुत किया गया और सिद्धदोष व्यक्ति में सुधार होने या उसके पुनर्वास पर विचार करने की आवश्यकता पुर:स्थापित की गई । संविधान न्यायपीठ द्वारा अभिव्यक्त किए गए मत के बावजूद, ऐसे बहुत सारे दृष्टांत हैं जिनमें से कुछ में बरियार [संतोष कुमार सतीशभूषण बरियार **बनाम** महाराष्ट्र राज्य (2009) 6 एस. सी. सी. 498 और संगीत **बनाम** हरियाणा राज्य [(2013) 2 एस. सी. सी. 452 = (2013) 2 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 611] वाले मामलों का उल्लेख किया गया है, जहां अपराध को प्राथमिकता देने की प्रवृत्ति रही है और अपराधी पर कहीं न कहीं द्वितीयक रीति में विचार करने की रही है । जैसा कि संगीत **बनाम** हरियाणा राज्य [(2013) 2 एस. सी. सी. 452 = (2013) 2 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 611] वाले मामले में मत व्यक्त किया गया है 'दंडादेश देने की प्रक्रिया में अपराध और अपराधी दोनों समान रूप से महत्वपूर्ण हैं ।' अत: हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि अपराधी चाहे कितना भी निष्ठुर हो, तो भी वह एक मानव है और उसके अपराध के होते हुए भी वह एक गरिमामय जीवन का हकदार है । अत: अभियोजन पक्ष और न्यायालयों को यह अवधारण करना चाहिए कि क्या ऐसे व्यक्ति को, उसके अपराध के होते हुए भी, सुधारा और पुनर्वासित किया जा सकता है या नहीं । इस जानकारी को अभिप्राप्त करना और इसका विश्लेषण करना निश्चित रूप से एक आसान काम नहीं है किंतु तो भी इसे अवश्य किया जाना चाहिए । पुनर्वास की प्रक्रिया भी एक आसान प्रक्रिया नहीं है चूंकि इसमें सिद्धदोष व्यक्ति का समाज में सामाजिक पुन:एकीकरण अंतर्वलित होता है । निस्संदेह, कोई जानकारी उपलब्ध होते हुए भी और विशेषज्ञों द्वारा इसके विश्लेषण के साथ-साथ अभिलेख पर साक्ष्य होते हुए ऐसे दृष्टांत हो सकते हैं जहां सिद्धदोष व्यक्ति का सामाजिक पुन:एकीकरण संभव न हो । यदि ऐसा होता है, तो कारावास की लंबी अवधि का

विकल्प अनुज्ञेय है ।"

18. अपराध कारित करने की तारीख को अपीलार्थी की आयु 25 वर्ष थी और वह एक अनुसूचित जनजाति समुदाय का है और मजदूरी करके मुश्किल से अपनी आजीविका चलाता है । अभियोजन पक्ष द्वारा अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है कि अपीलार्थी में सुधार या पुनर्वास होने की कोई संभाव्यता नहीं है और मृत्यु दंडादेश का आनुकल्पिक विकल्प पूरोबंधित हो गया है । जिस अपराध के लिए उसे दोषसिद्ध किया गया है, उसके कारित करने से पूर्व उसकी कोई आपराधिक पृष्ठभूमि नहीं है । ऐसी कोई प्रतिकूल बात नहीं है जो कारागार में उसके आचरण के विरुद्ध रिपोर्ट की गई हो । इसलिए मृत्यु दंडादेश को आजीवन कारावास में लघुकृत किया जाना चाहिए । तथापि, उस बर्बरतापूर्ण और क्रूर रीति, जिसमें अपीलार्थी द्वारा एक 11 वर्षीया असहाय लड़की के साथ बलात्संग किया गया था और उसी हत्या कर दी गई थी, को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी को 30 वर्ष की अवधि के आजीवन कारावास का दंडादेश दिया जाता है, जिसके दौरान उसे परिहार प्रदान नहीं किया जाएगा ।

19. ये अपीलें भागत: मंजूर की जाती हैं । अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 363, 366क, 364, 346, 376घ, 376क, 302, 201 और लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम, 2012 की धारा 6 के साथ पठित धारा 5(च)(ड) के अधीन दोषसिद्धि को कायम रखा जाता है और मृत्यु दंडादेश को 30 वर्ष की अवधि के आजीवन कारावास में, परिहार बिना, संपरिवर्तित किया जाता है ।

अपीलें भागत: मंजूर की गईं ।

जस.

[2022] 1 उम. नि. प. 132

पप्पू तिवारी

बनाम

झारखंड राज्य

और

लॉ तिवारी उर्फ **उपेन्द्र कुमार तिवारी**

बनाम

झारखंड राज्य

[2021 की दांडिक अपील सं. 1492 और 2014 की दांडिक अपील सं. 1202-1203]

31 जनवरी, 2022

न्यायमूर्ति संजय किशन कौल और न्यायमूर्ति एम. एम. सुंदरेश

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302/34 [सपठित आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 27] – हत्या – दोषसिद्धि – अभियुक्तों में से एक अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा घटना की तारीख को अन्यत्र उपस्थित होने का अभिवाक् किया जाना – सबूत – जहां अभियुक्त द्वारा यह अभिवाक् किया गया हो कि वह घटना की तारीख को किसी दूसरे स्थान पर उपस्थित था और वहां उसकी टांग का अस्थि-भंग होने के कारण उपचार के लिए अस्पताल में भर्ती था और उसे मामले में मिथ्या रूप से फंसाया गया था, किंतु जब उसके द्वारा अस्पताल में भर्ती होने का कोई कागजात प्रस्तुत नहीं किया गया और न ही उपचार करने वाले डाक्टर को प्रतिरक्षा साक्षी के रूप में पेश या समन किया गया, वहां अभियुक्त अपने अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् को सिद्ध करने के भार का निर्वहन करने में असफल रहने पर उसके ऐसे अभिवाक् को मान्य नहीं ठहराया जा सकता है और प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य के आधार पर की गई उसकी दोषसिद्धि उचित है ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 302/34 [सपठित आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 27] – हत्या – दोषसिद्धि – अभियुक्तों द्वारा मृतक पर गोली चलाकर और चाकुओं से प्रहार करके हत्या किया जाना – दोषसिद्धि – प्रथम इत्तिला रिपोर्ट समय-पूर्व होने और इत्तिलाकर्ता मृतक का घनिष्ठ नातेदार होने का अभिवाक् किया जाना – संधार्यता – मृतक के भाई के विश्वसनीय परिसाक्ष्य को मात्र इस आधार पर त्यक्त नहीं किया जा सकता है कि वह मृतक का घनिष्ठ नातेदार है और जहां अन्वेषक अभिकरण द्वारा घटना की इत्तिला प्राप्त होने पर शीघ्रतापूर्वक इत्तिलाकर्ता का फर्दब्यान लेखबद्ध किया गया हो, तुरंत मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट तैयार की गई हो और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई हो तथा शव को शीघ्रातिशीघ्र मरणोत्तर परीक्षा के लिए भेजा गया हो और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अगले दिन सवेरे ही न्यायालय में प्रेषित की गई हो, वहां ऐसा अभिवाक् मान्य नहीं है और प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य के आधार पर की गई अभियुक्तों की दोषसिद्धि उचित है ।

इन अपीलों के तथ्य इस प्रकार हैं कि मृतक विकास कुमार सिंह, आयु लगभग 22 वर्ष तारीख 7 मार्च, 2000 को लगभग 1.00 बजे अपराह्न में शारीरिक व्यायाम करने के लिए अपने मकान से भंडार की ओर जा रहा था । अभियोजन का यह पक्षकथन है कि उसके छोटे भाई, पंकज कुमार सिंह के फर्दब्यान के आधार पर, जिसे सदर अस्पताल, गढ़वा में 2.00 बजे अपराह्न में लेखबद्ध किया गया था, जब विकास कुमार सिंह रामधर राम के मकान के सामने पहुंचा तो यकायक छह व्यक्तियों अर्थात् पप्पू तिवारी (2021 की दांडिक अपील सं. 1492 में अपीलार्थी), संजय राम, उदय पाल, अजय पाल, पिंटू तिवारी और लॉ तिवारी (2014 की दांडिक अपील सं. 1202-1203 में अपीलार्थी) ने, जो सड़क पर बैठे हुए थे, उसे घेर लिया । पप्पू तिवारी ने अपनी पिस्तौल से विकास कुमार सिंह पर गोली चला दी, जिसके परिणामस्वरूप वह क्षतिग्रस्त हो गया और सड़क के किनारे गिर गया । अन्य अभियुक्त अभिकथित रूप से चाकू लिए हुए थे और वे उस पर झपट पड़े तथा उसके संपूर्ण शरीर पर चाकुओं से प्रहार किए । शोर-शराबा सुनकर उसका छोटा भाई पंकज कुमार सिंह उस दिशा में दौड़ा । उसे और अन्य

ग्रामवासियों को आते हुए देखकर अभियुक्त भाग गए । मृतक के छोटे भाई के फर्दब्यान के आधार पर भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 302 और 304 तथा आयुध अधिनियम, 1959 के अधीन छह नामित अभियुक्तों के विरुद्ध प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई । सहायक उप निरीक्षक, मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट तैयार की, किंतु अग्न्यायुध की क्षति की शनाख्त करने में असफल रहा । डा. महेश प्रसाद सिंह, चिकित्सा अधिकारी, उप मंडल अस्पताल, गढ़वा द्वारा मरणोत्तर परीक्षा की गई और यह राय व्यक्त की गई थी कि मृत्यु का कारण बहुविध क्षतियों द्वारा कारित सदमा और रक्तस्राव था । क्षति सं. 1 और 2 की शनाख्त अग्न्यायुध से पहुंची क्षतियों के रूप में की गई थी । सभी अभियुक्तों को गिरफ्तार किया गया था । अन्वेषण पूर्ण होने पर सभी छह अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया और उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन आरोपित किया गया और पप्पू तिवारी को अतिरिक्त रूप से आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन आरोपित किया गया । सभी अभियुक्त व्यक्तियों को उन्हें आरोपित किए गए अनुसार दोषसिद्ध किया गया और उन्हें आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया । पप्पू तिवारी को अतिरिक्त रूप से आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन तीन वर्ष का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया । विचारण न्यायालय के निर्णय को दो अलग-अलग अपीलें फाइल करके चुनौती दी गई । लॉ तिवारी और पिंटू तिवारी ने संयुक्त रूप से दांडिक अपील फाइल की जबकि शेष चार सिद्धदोष व्यक्तियों द्वारा एक अन्य फाइल की गई । झारखंड उच्च न्यायालय ने तारीख 7 मई, 2012 के एक सामान्य निर्णय द्वारा सभी छह सिद्धदोष व्यक्तियों के विरुद्ध विचारण न्यायालय के दोषसिद्धि के निर्णय की अभिपुष्टि की । तथापि, विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा किशोरता के पहलू पर की गई जांच के अनुसरण में उच्च न्यायालय ने यह राय व्यक्त की कि चूंकि पिंटू तिवारी घटना की तारीख को अप्राप्तवय था और पहले ही तीन वर्ष से अधिक जेल में रह चुका है, इसलिए किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 की धारा 15 और 16 के उपबंधों को दृष्टिगत करते हुए आगे

कोई निरोध आदेश पारित नहीं किया जा सकता है । जहां तक संजय राम और उदय पाल का संबंध है, उन दोनों ने उच्च न्यायालय के निर्णय को स्वीकार किया । पप्पू तिवारी द्वारा उच्चतम न्यायालय में एक विशेष इजाजत याचिका और इसके साथ अभ्यर्पण से छूट की ईप्सा करते हुए एक आवेदन फाइल किया गया । उस आवेदन को इस न्यायालय द्वारा 9 नवंबर, 2012 को खारिज कर दिया गया और पप्पू तिवारी को अभ्यर्पण करने के लिए चार सप्ताह का समय दिया गया । उसने अभ्यर्पण नहीं किया और इसलिए तारीख 18 फरवरी, 2013 के आदेश के निबंधनों के अनुसार विशेष इजाजत याचिका खारिज हो गई । पप्पू तिवारी को अंतत: तारीख 25 जून, 2015 को गिरफ्तार किया गया । इसके पश्चात् उसने अपनी विशेष इजाजत याचिका के प्रत्यावर्तन की ईप्सा करते हुए एक आवेदन फाइल किया और इसके साथ विलंब की माफी के लिए भी आवेदन फाइल किया गया, किंतु सूचना जारी करने के पश्चात् तारीख 7 मार्च, 2017 को इसे 862 दिनों के विलंब का समुचित रूप से स्पष्टीकरण देने में असफल रहने के आधार पर खारिज कर दिया गया । पप्पू तिवारी ने तारीख 22 जनवरी, 2021 को जमानत की ईप्सा करते हुए फाइल किए गए आवेदन के साथ एक पुनर्विलोकन याचिका दायर की । पुनर्विलोकन याचिका पर विचार किया गया और इसे तारीख 27 जनवरी, 2021 को मंजूर किया गया । इसके पश्चात् अपीलों को सूचीबद्ध किए जाने का निदेश दिया गया । लॉ **उर्फ** उपेन्द्र तिवारी और अजय पाल ने विलंब की माफी के लिए आवेदन के साथ संयुक्त रूप से एक विशेष इजाजत याचिका फाइल की । जब अपीलें उच्चतम न्यायालय के समक्ष विचार के लिए आईं, तब अजय पाल (याची सं. 2) के संबंध में अपील खारिज कर दी गई, जबकि लॉ तिवारी द्वारा फाइल की गई अपील के संबंध में सूचना जारी की गई । इसी बीच, लॉ तिवारी को अपना दंडादेश भुगत लेने के पश्चात् तारीख 28 सितंबर, 2016 को रिहा कर दिया गया और तारीख 1 सितंबर, 2021 को इस बात की जांच-पड़ताल की गई कि क्या वह अभी भी अपील को अग्रसर करने का इच्छुक है या नहीं, जिसका सकारात्मक उत्तर दिया गया क्योंकि लॉ तिवारी अपनी दोषसिद्धि के पहलू पर बहस करना चाहता था । उच्चतम

न्यायालय द्वारा अपीलें खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – जहां तक लॉ तिवारी का संबंध है, विद्वान् काउंसेल से एक प्रश्न पूछा गया था कि उसके (लॉ तिवारी) और अजय पाल द्वारा संयुक्त रूप से अपील फाइल किए जाने पर और अजय पाल की अपील खारिज हो जाने पर, साक्ष्य एक-समान होने, भूमिका एक-समान होने अर्थात् पांच लोगों द्वारा सामूहिक रूप से मृतक पर, उसे गोली मारे जाने के पश्चात्, चाकुओं से क्षतियां कारित की गई थीं, तब वह क्या प्रतिरक्षा हो सकती है जो लॉ तिवारी को उपलब्ध होगी । विद्वान् काउंसेल ने उचित रूप से यह कथन किया कि उसकी अपील सीमित दायरे में है और इस न्यायालय ने भी अपील को उसके अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् के आधार पर ग्रहण किया । इस न्यायालय ने लॉ तिवारी की अपील की सीमित परिधि पर विचार किया है और यह न्यायालय इसमें किसी प्रकार का कोई गुणागुण नहीं पाता है । राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा ठीक ही यह उल्लेख किया गया है कि अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् को सिद्ध करने का भार लॉ तिवारी पर था, जिसका निर्वहन करने में वह असफल रहा था । यह ऐसा मामला नहीं है जहां उसे अवसर प्रदान न किया गया हो । वास्तव में, लॉ तिवारी द्वारा प्रतिरक्षा में दो साक्षियों को प्रस्तुत किया गया था और न्यायालय द्वारा दोनों साक्षियों को समन भी किया गया था । तथापि, सुसंगत साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था । यह ठीक ही उल्लेख किया गया है कि सर्वाधिक तात्विक साक्षी डा. एम. पी. सिंह रहे होते, जिसे प्रतिरक्षा साक्षी के रूप में पेश नहीं किया गया था और न ही उसे समन किया गया था । न्यायालय यह उल्लेख कर सकता है कि विचारण न्यायालय के निर्णय में कुछ पहचान संबंधी भ्रम है क्योंकि किसी डा. एम. पी. सिंह (अभि. सा. 1) के प्रतिनिर्देश किया गया है, जो वही डाक्टर नहीं है । डा. एम. पी. सिंह द्वारा कथित रूप से जो परामर्श दिया गया था, उसे भी साबित नहीं किया गया था और न ही एक्स-रे प्लेट प्रस्तुत की गई थी । प्रति. सा. 2 ने यह कथन किया था कि वह लॉ तिवारी को गढ़वा अस्पताल लाया था किंतु अस्पताल में उसकी अस्थि-भंग टांग के उपचार के लिए भर्ती होने या अस्पताल में उपचार कराने के समर्थन में कोई

कागजात प्रस्तुत नहीं किया गया था । इस प्रकार, इन सभी पहलुओं पर लॉ तिवारी अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् को सिद्ध करने के भार का निर्वहन करने में असफल रहा था और इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् को नामंजूर करके कोई गलती की थी । केवल इसी पहलू की इस न्यायालय द्वारा परीक्षा की जानी थी । पूर्वोक्त चर्चा का परिणाम यह है कि यह न्यायालय लॉ **उर्फ** उपेन्द्र तिवारी की दांडिक अपील में कोई गुणागुण नहीं पाता है । (पैरा 11, 12, 17, 18, 19 और 21)

जहां तक पप्पू तिवारी द्वारा फाइल की गई अपील का संबंध है, साक्ष्य का परिशीलन करने पर यह नहीं कहा जा सकता है कि प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्य में कोई बड़ी विसंगतियां हैं जिससे अभियोजन के वृत्तांत पर संदेह किया जा सके । इस मामले में तीन प्रत्यक्षदर्शी साक्षी हैं । इत्तिलाकर्ता, अभि. सा. 6 के परिसाक्ष्य का केवल इस कारण त्याग नहीं किया जा सकता है कि यह एक घनिष्ठ नातेदार का साक्ष्य है । इसी प्रकार, अभि. सा. 13 हालांकि एक संयोगवश साक्षी है, उसने अपनी मौजूदगी की बात को स्पष्ट किया था और यह कथन किया था कि वह अभियुक्तों की शनाख्त कर सकता है जो उस क्षेत्र में जाने-पहचाने हैं, हालांकि उनकी एक नकारात्मक छवि है । तथापि, जहां तक अभि. सा. 18, तृतीय प्रत्यक्षदर्शी साक्षी का संबंध है, हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि उच्च न्यायालय ने इस साक्षी की परीक्षा कराने में दो माह से अधिक का विलंब होने के कारण उसके परिसाक्ष्य पर विश्वास नहीं किया था, जिसने प्रत्यक्षदर्शी साक्षी होने का दावा किया था और वह मृतक का मामा था । विद्वान् काउंसेल ने जोरदार रूप से यह दलील दी कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट समय-पूर्व की थी और स्वयमेव इस बात से अभियोजन के वृत्तांत पर संदेह उत्पन्न होता है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट तारीख 7 मार्च, 2000 को ठीक दोपहर बाद अभिलिखित की गई थी किंतु यह न्यायालय में अगले दिन तारीख 8 मार्च, 2000 को पहुंची थी जबकि न्यायालय और पुलिस थाने के बीच की दूरी मुश्किल से एक कि. मी. थी । अधिकथित किए गए सिद्धांतों की कसौटी के आधार पर मुश्किल से यह कहा जा सकता है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 157

के अधीन विधि के आदेश का पालन नहीं किया गया था । घटना की सूचना प्राप्त होने पर शीघ्रता से फर्दब्यान अभिलिखित किया गया था, मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट तैयार की गई थी और इस सूचना के 25 मिनट के भीतर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई थी । शव को तुरंत मरणोत्तर परीक्षा के लिए भेजा गया था और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अगले दिन सवेरे न्यायालय में भेजी गई थी । न्यायालय यह नहीं कह सकता है कि ऐसी कोई खामी है जिसका उपयोग किया जा सकता था या प्रथम इत्तिला रिपोर्ट समय-पूर्व की थी और इस प्रकार मजिस्ट्रेट को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट भेजने के उद्देश्य की अपेक्षा का पालन किया गया था । अत: इस अभिवाक् में कोई गुणागुण नहीं है । अब अगले अभिवाक् पर आते हैं जिस पर अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा काफी जोर दिया गया और यह दलील दी गई कि मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट (प्रदर्श-3) और मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट (प्रदर्श-1) के बीच बड़ी विसंगति है । इस पहलू को वास्तव में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट समय-पूर्व होने के अभिवाक् से जोड़ा जाना चाहा गया । यह उल्लेख किया गया कि ब्यान में भिन्नताएं हैं जिससे यह दर्शित होता है कि फर्दब्यान केवल मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट के पश्चात् दर्ज किया गया था । इस बात के लिए तथ्यात्मक आधार यह होना बताया गया कि मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट में छह क्षतियां उल्लिखित हैं और बंदूक की गोली से पहुंची क्षति का कोई उल्लेख नहीं है, जबकि मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट से दर्शित होता है कि बंदूक की गोली से पहुंची क्षति सहित 26 क्षतियां हैं । उससे पिस्तौल बरामद नहीं की गई थी और न ही कोई कारतूस पाया गया था और सहायक उप निरीक्षक रजनीकांत झा, जिसने फर्दब्यान तथा मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट दोनों अभिलिखित की थी, की अभियोजन पक्ष द्वारा परीक्षा नहीं की गई थी । इस अभिवाक् पर विचार करने पर इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि चिकित्सा और प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य के बीच वास्तव में कोई फर्क नहीं है किंतु डाक्टर द्वारा उस दूरी के बारे में राय व्यक्त नहीं करने के कारण जिस दूरी से अग्न्यायुध की क्षति कारित हुई थी, अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा इस फर्क को अत्यधिक उजागर करना चाहा गया है । इसके अतिरिक्त, प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों ने यह स्पष्ट साक्ष्य दिया है कि

अन्य अभियुक्तों ने मृतक पर चाकुओं से हमला किया था । पांच व्यक्तियों द्वारा मृतक पर हमला करने की प्रक्रिया में यह नहीं कहा जा सकता है कि मृतक एक-जैसी स्थिति में पड़ा रहा होगा और इसलिए पीछे और सामने दोनों तरफ क्षतियां पहुंचने की पूरी संभाव्यता है । घटना की प्रकृति और प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्य से संदेह अभियोजन के वृत्तांत पर किया जाना चाहिए न कि मात्र खाए गए भोजन के पहलू पर । इस न्यायालय को ऐसी कोई खामी दिखाई नहीं देती है, जो निचले न्यायालयों के एक-जैसे निष्कर्षों को उलटने के लिए प्रेरित करे । अपीलार्थी की ओर से शेष दलीलें त्रुटिपूर्ण अन्वेषण, स्वतंत्र साक्षियों का अभाव होने के अभिवाक् पर आधारित हैं किंतु ऐसा कोई कारण नहीं है कि प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के वृत्तांत पर, जो विश्वसनीय है, क्यों पूरी तरह से विश्वास न किया जाए । मामले को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने के लिए जो कसौटी लागू की जाती है, उसका यह अर्थ नहीं है कि प्रयास खामियां निकालने का हो और जैसे-तैसे दोषमुक्ति प्राप्त करने के लिए कोई न कोई बहाना ढूंढ़ा जाए । पूर्वोक्त चर्चा के सिंहावलोकन में इस न्यायालय का यह मत है कि अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए वृत्तांत को सिद्ध किया गया है और अपीलार्थी-अभियुक्तों द्वारा ऐसी कोई कमी नहीं निकाली गई है, जिससे कोई संदेह किया जा सके और उन्हें संदेह के फायदे का हकदार बना सके । (पैरा 24, 29, 35, 36 और 38)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2018]	(2018) 6 एस. सी. सी. 72 : **तहसीन पूनावाला** बनाम **भारत संघ** ;	31
[2017]	(2017) 11 एस. सी. सी. 195 : **योगेश सिंह** बनाम **महाबीर सिंह और अन्य** ;	30
[2015]	(2015) 4 एस. सी. सी. 749 : **विजय पाल** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली सरकार)** ;	16

[2014] (2014) 12 एस. सी. सी. 312 :
सुदर्शन और एक अन्य बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ; 27

[2012] (2012) 6 एस. सी. सी. 204 :
जितेन्द्र कुमार बनाम **हरियाणा राज्य** ; 16

[2011] (2011) 15 एस. सी. सी. 136 :
प्रह्लाद सिंह बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ; 34

[2000] (2000) 4 एस. सी. सी. 84 :
सुरेश राय बनाम **बिहार राज्य** ; 30

[1983] (1983) 1 एस. सी. सी. 379 :
मौला बख्श और अन्य बनाम **राजस्थान राज्य** ; 29

[1975] [1975] 3 उम. नि. प. 843 =
(1975) 4 एस. सी. सी. 153 :
पेड्डा नारायण और अन्य बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** ; 30

[1956] ए. आई. आर. 1956 एस. सी. 425 :
सुरजन और अन्य बनाम **राजस्थान राज्य** । 30

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2021 की दांडिक अपील सं. 1492 (इसके साथ 2014 की दांडिक अपील सं. 1202-1203).

2002 की दांडिक अपील सं. 242 और 398 में झारखंड उच्च न्यायालय के तारीख 7 मई, 2012 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपीलें ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री श्रीप्रकाश सिन्हा, राकेश मिश्रा, (सुश्री) महुआ सिन्हा, नवलेन्द्र कुमार, सिद्धार्थ सिंह और शेखर कुमार

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री तपेश कुमार सिंह, अपर महाधिवक्ता, आदित्य प्रताप सिंह और

आदित्य नारायण दास

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति संजय किशन कौल ने दिया ।

न्या. कौल – विकास कुमार सिंह, आयु लगभग 22 वर्ष तारीख 7 मार्च, 2000 को लगभग 1.00 बजे अपराह्न में शारीरिक व्यायाम करने के लिए अपने मकान से भंडार की ओर जा रहा था । अभियोजन का यह पक्षकथन है कि उसके छोटे भाई, पंकज कुमार सिंह के फर्दबयान के आधार पर, जिसे सदर अस्पताल, गढ़वा में 2.00 बजे अपराह्न में लेखबद्ध किया गया था, जब विकास कुमार सिंह रामधर राम के मकान के सामने पहुंचा तो यकायक छह व्यक्तियों अर्थात् पप्पू तिवारी (2021 की दांडिक अपील सं. 1492 में अपीलार्थी), संजय राम, उदय पाल, अजय पाल, पिंटू तिवारी और लॉ तिवारी (2014 की दांडिक अपील सं. 1202-1203 में अपीलार्थी) ने, जो सड़क पर बैठे हुए थे, उसे घेर लिया । पप्पू तिवारी ने अपनी पिस्तौल से विकास कुमार सिंह पर गोली चला दी, जिसके परिणामस्वरूप वह क्षतिग्रस्त हो गया और सड़क के किनारे गिर गया । अन्य अभियुक्त अभिकथित रूप से चाकू लिए हुए थे और वे उस पर झपट पड़े तथा उसके संपूर्ण शरीर पर चाकू से प्रहार किए । शोर-शराबा सुनकर पंकज कुमार सिंह उस दिशा में दौड़ा । उक्त इत्तिलाकर्ता और अन्य ग्रामवासियों को आते हुए देखकर अभियुक्त अहर पर बने रास्ते की ओर भाग गए । उन्होंने कथित रूप से वहां मौजूद व्यक्तियों को भी मामले में उनके विरुद्ध कोई साक्ष्य देने के लिए भी धमकी दी थी । बाद में, इत्तिलाकर्ता के अनुसार, उसने यह दावा किया कि उसे यह जानकारी प्राप्त हुई थी कि वे एक मारुति वैन जिसका रजिस्ट्रेशन संख्यांक डी एल 2 सी 5170 था, में भागे थे, जो पिंटू तिवारी की थी । फर्दबयान के आधार पर 2000 का गढ़वा पुलिस थाना मामला सं. 33 में भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 302 और 304 तथा आयुध अधिनियम, 1959 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'आयुध अधिनियम' कहा गया है) के अधीन छह नामित अभियुक्तों के विरुद्ध प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई ।

2. सहायक उप निरीक्षक, रजनीकांत झा ने मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट

तैयार की, किंतु अग्न्यायुध की क्षति की शनाख्त करने में असफल रहा । डा. महेश प्रसाद सिंह, चिकित्सा अधिकारी, उप मंडल अस्पताल, गढ़वा द्वारा मरणोत्तर परीक्षा की गई थी और यह राय व्यक्त की गई थी कि मृत्यु का कारण मार्मिक और बहुविध क्षतियों द्वारा कारित सदमा और रक्तस्राव था । क्षति सं. 1 और 2 की शनाख्त अग्न्यायुध से पहुंची क्षतियों के रूप में की गई थी । मारुति वैन को बाद में तारीख 9 मार्च, 2000 को बरामद किया गया था । सभी अभियुक्तों को गिरफ्तार किया गया था, यद्यपि लॉ **उर्फ** उपेन्द्र तिवारी को तारीख 16 मार्च, 2000 को गिरफ्तार किया गया था । अन्वेषण पूर्ण होने पर सभी छह व्यक्तियों के विरुद्ध तारीख 2 जून, 2000 को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 34 तथा आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया और उसी दिन अपराध का संज्ञान लिया गया । मामले को तारीख 26 जुलाई, 2000 को सेशन न्यायाधीश के न्यायालय को सुपुर्द किया गया, जहां सभी छह अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन आरोपित किया गया और पप्पू तिवारी को अतिरिक्त रूप से आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन आरोपित किया गया ।

3. 2001 के सेशन विचारण सं. 159 के अनुक्रम में अभियोजन पक्ष ने 22 साक्षियों की परीक्षा की और प्रतिरक्षा पक्ष ने दो साक्षियों की परीक्षा कराई । तारीख 27 मई, 2002 के निर्णय के निबंधनों के अनुसार, सभी अभियुक्त व्यक्तियों को उन्हें आरोपित किए गए अनुसार दोषसिद्ध किया गया और तारीख 28 मई, 2002 के आदेश के निबंधनों के अनुसार उन्हें आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया । पप्पू तिवारी को अतिरिक्त रूप से आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन तीन वर्ष का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया ।

4. विचारण न्यायालय के निर्णय को दो अलग-अलग अपीलें फाइल करके चुनौती दी गई । लॉ तिवारी और पिंटू तिवारी ने संयुक्त रूप से 2002 की दांडिक अपील सं. 242 फाइल की जबकि शेष चार सिद्धदोष व्यक्तियों द्वारा 2002 की दांडिक अपील सं. 398 फाइल की गई ।

झारखंड उच्च न्यायालय ने तारीख 7 मई, 2012 के एक सामान्य निर्णय द्वारा सभी छह सिद्धदोष व्यक्तियों के विरुद्ध विचारण न्यायालय के दोषसिद्धि के निर्णय की अभिपुष्टि की । तथापि, विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा किशोरता के पहलू पर की गई जांच के अनुसरण में उच्च न्यायालय ने यह राय व्यक्त की कि चूंकि पिंटू तिवारी घटना की तारीख को अप्राप्तवय था और पहले ही तीन वर्ष से अधिक जेल में रह चुका है, इसलिए किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 की धारा 15 और 16 के उपबंधों को दृष्टिगत करते हुए आगे कोई निरोध आदेश पारित नहीं किया जा सकता है । जहां तक संजय राम और उदय पाल का संबंध है, उन दोनों ने उच्च न्यायालय के निर्णय को स्वीकार किया । शेष तीन अपीलार्थी हैं जो मामले को आगे इस न्यायालय में लेकर आए ।

5. पप्पू तिवारी ने एक विशेष इजाजत याचिका और इसके साथ अभ्यर्पण से छूट की ईप्सा करते हुए एक आवेदन फाइल किया । उस आवेदन को इस न्यायालय द्वारा 9 नवंबर, 2012 को खारिज कर दिया गया और पप्पू तिवारी को अभ्यर्पण करने के लिए चार सप्ताह का समय दिया गया । पप्पू तिवारी द्वारा किए गए अनुरोध पर तारीख 18 फरवरी, 2013 को और चार सप्ताह का विस्तार अभ्यर्पण करने के लिए प्रदान किया गया, जिसके असफल रहने पर विशेष इजाजत याचिका न्यायालय को निर्देश किए बिना खारिज हो जाएगी । पप्पू तिवारी ने अभ्यर्पण नहीं किया और इसलिए तारीख 18 फरवरी, 2013 के आदेश के निबंधनों के अनुसार विशेष इजाजत याचिका खारिज हो गई ।

6. लॉ **उर्फ** उपेन्द्र तिवारी और अजय पाल ने विलंब की माफी के लिए आवेदन के साथ संयुक्त रूप से एक विशेष इजाजत याचिका फाइल की । जब अपीलें तारीख 19 नवंबर, 2013 को इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए आईं, तब अजय पाल (याची सं. 2) के संबंध में अपील खारिज कर दी गई, जबकि लॉ तिवारी द्वारा फाइल की गई अपील के संबंध में सूचना जारी की गई । तारीख 7 मई, 2014 को उक्त अपील के संबंध में इजाजत दी गई, जिसे 2014 की दांडिक अपील सं. 1202-

1203 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया ।

7. पप्पू तिवारी को अंततः तारीख 25 जून, 2015 को गिरफ्तार किया गया । इसके पश्चात् उसने अपनी विशेष इजाजत याचिका के प्रत्यावर्तन की ईप्सा करते हुए एक आवेदन फाइल किया और इसके साथ विलंब की माफी के लिए भी आवेदन फाइल किया गया, किंतु सूचना जारी करने के पश्चात् तारीख 7 मार्च, 2017 को इसे 862 दिनों के विलंब का समुचित रूप से स्पष्टीकरण देने में असफल रहने के आधार पर खारिज कर दिया गया । पप्पू तिवारी ने तारीख 22 जनवरी, 2021 को जमानत की ईप्सा करते हुए फाइल किए गए आवेदन के साथ एक पुनर्विलोकन याचिका दायर की । पुनर्विलोकन याचिका पर विचार किया गया और इसे तारीख 27 जनवरी, 2021 को मंजूर किया गया । इसके पश्चात् अपीलों को सूचीबद्ध किए जाने का निदेश दिया गया ।

8. इसी बीच, लॉ तिवारी को अपना दंडादेश भुगत लेने के पश्चात् तारीख 28 सितंबर, 2016 को रिहा कर दिया गया और तारीख 1 सितंबर, 2021 को इस बात की जांच-पड़ताल की गई कि क्या वह अभी भी अपील को अग्रसर करने का इच्छुक है या नहीं, जिसका सकारात्मक उत्तर दिया गया क्योंकि लॉ तिवारी अपनी दोषसिद्धि के पहलू पर बहस करना चाहता था ।

9. जहां तक पप्पू तिवारी का संबंध है, उसके जमानत आवेदन को तारीख 4 अक्तूबर, 2021 को खारिज कर दिया गया किंतु अपील को ही सुने जाने का निदेश दिया गया । उक्त विशेष इजाजत याचिका में तारीख 23 नवंबर, 2021 को इजाजत भी दे दी गई ।

10. पूर्वोक्त वह पृष्ठभूमि है जिसमें ये दो अपीलें सुनवाई के लिए हमारे समक्ष सूचीबद्ध की गई थीं ।

2014 की दांडिक अपील सं. 1202-1203 (लॉ उर्फ **उपेन्द्र तिवारी द्वारा की गई अपील)**

11. जहां तक लॉ तिवारी का संबंध है, विद्वान् काउंसेल से एक प्रश्न पूछा गया था कि उसके (लॉ तिवारी) और अजय पाल द्वारा

संयुक्त रूप से अपील फाइल किए जाने पर और अजय पाल की अपील खारिज हो जाने, साक्ष्य एक-समान होने, भूमिका एक-समान होने अर्थात् पांच लोगों द्वारा सामूहिक रूप से मृतक पर, उसे गोली मारे जाने के पश्चात्, चाकुओं से क्षतियां कारित की गई थीं, तब वह क्या प्रतिरक्षा हो सकती है जो लॉ तिवारी को उपलब्ध होगी ।

12. विद्वान् काउंसेल ने उचित रूप से यह कथन किया कि उसकी अपील सीमित दायरे में है और इस न्यायालय ने भी अपील को उसके अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् के आधार पर ग्रहण किया है ।

13. विद्वान् काउंसेल ने हमारा ध्यान विचारण न्यायालय के निर्णय की ओर दिलाया क्योंकि उनके अनुसार इस विशिष्ट पहलू पर अपील न्यायालय के निर्णय में मुश्किल से कोई चर्चा की गई थी । विचारण न्यायालय ने दो प्रतिरक्षा साक्षियों, राजेन्द्र यादव (प्रति. सा. 1) और समसुद्दीन अंसारी (प्रति. सा. 2) के अभिसाक्ष्यों को निर्दिष्ट किया था । प्रति. सा. 1 ने अपनी मुख्य परीक्षा में यह अभिसाक्ष्य दिया था कि तारीख 24 जनवरी, 2000 को उसने लॉ **उर्फ** उपेन्द्र तिवारी के दाएं घुटने का एक्स-रे किया था । उसने कैश मेमो (प्रदर्श-ए) को साबित किया था और यह कथन किया था कि उसने डा. एम. पी. सिंह के परामर्श पर घुटने का एक्स-रे किया था । प्रति. सा. 2 ने यह कथन किया था कि वह लॉ **उर्फ** उपेन्द्र तिवारी को जानता था और वह तारीख 24 जनवरी, 2000 को बस द्वारा सिल्लिया डोंगर से गढ़वा आया था । उसने लॉ तिवारी को मोटरसाइकिल से गिरने के पश्चात् देखा था जो दर्द में कराह रहा था । उसने एक अन्य व्यक्ति को उसे पकड़े हुए देखा था । एक रिक्शा बुलाई गई थी और लॉ तिवारी को रिक्शा में बैठाया गया था तथा गढ़वा अस्पताल में डा. एम. पी. सिंह के पास लाया गया था, जिसने एक्स-रे कराने का परामर्श दिया था । जनता क्लीनिक में एक्स-रे कराया गया था और डाक्टर ने यह राय व्यक्त की थी कि उसकी घुटने के निकट से टांग टूट गई है । जिस व्यक्ति के बारे में यह बताया गया था कि उसने लॉ तिवारी की मदद की थी, उसकी शनाख्त कंचन यादव के रूप में की गई थी । लॉ तिवारी को उसे सौंपने के पश्चात् प्रति. सा. 2

चला गया था ।

14. प्रतिरक्षा पक्ष के अनुरोध पर दो साक्षियों की भी न्यायालय साक्षियों के रूप में परीक्षा की गई थी – अल्मुद्दीन खान (न्या. सा. 1) जिसने डा. एम. पी. सिंह के प्रमाणपत्र (प्रदर्श-ए) और ओषधियों की रसीद (प्रदर्श-ए/1) को साबित किया था तथा अक्षय कुमार महतो (न्या. सा. 2), जिसने यह कथन किया था कि वह लॉ तिवारी को जानता था और लॉ तिवारी खरीददारी करने के लिए गढ़वा आया था और अपने चचेरे भाई मोहन प्रसाद महतो के बीमार पुत्र से मिलने के लिए अस्पताल गया था । उसने उपचार का साक्षी होने का दावा किया था और लॉ **उर्फ** उपेन्द्र तिवारी बिस्तर पर था और उसकी टांग पर प्लास्टर लगा हुआ था । यद्यपि उसने उससे बात नहीं की थी । उक्त परिसाक्ष्य को दृष्टिगत करते हुए, तर्क जो विचारण न्यायालय के समक्ष दिया गया था और हमारे समक्ष भी दिया गया है, यह था कि चूंकि घटना की तारीख को उसकी टांग में अस्थि-भंग था, इसलिए लॉ तिवारी के लिए अपराध में भाग लेना संभव नहीं था और उसे मामले में मिथ्या रूप से फंसाया गया था । विचारण न्यायालय ने यह पाया कि न तो एक्स-रे प्लेट और न ही डा. एम. पी. सिंह के परामर्श को न्यायालय में प्रस्तुत किया गया था । प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा डाक्टर को भी पेश नहीं किया गया था । गढ़वा अस्पताल में भर्ती होने या उपचार कराने का कोई कागजात अस्पताल में भर्ती होने और उसकी अस्थि-भंग टांग का उपचार कराने के समर्थन में प्रस्तुत नहीं किया गया था और प्रमाणपत्र से ऐसे किसी पक्षकथन का समर्थन नहीं होता है ।

15. दूसरी ओर, अभियोजन का यह पक्षकथन था और है कि अन्य बातों के साथ-साथ, फर्दब्यान के अनुसार 2000 के पुलिस थाना मामला सं. 6 में भारतीय दंड संहिता की धारा 364, 365 और 120ख के अधीन एक औपचारिक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई थी । उस मामले में घटना की तारीख 26 जनवरी, 2000 थी और अभिकथन हत्या करने के प्रयोजनार्थ व्यपहरण करने का था । लॉ तिवारी को भी उस मामले में अभियुक्त के रूप में नामित किया गया था । घटना तारीख

26 जनवरी, 2000 की थी और प्रतिरक्षा यह है कि लॉ तिवारी की टांग का अस्थि-भंग तारीख 24 जनवरी, 2000 को हुआ था । लॉ तिवारी को तारीख 28 फरवरी, 2000 के निर्णय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 365 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था । तथापि, हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि उस दोषसिद्धि के विरुद्ध फाइल की गई अपील में अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल के अनुसार लॉ तिवारी को 17 दिसंबर, 2005 को दोषमुक्त कर दिया गया था ।

16. राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि इस मामले में पंकज कुमार सिंह (अभि. सा. 6), सुबोध कुमार सिंह (अभि. सा. 13) और चंद्रमन सिंह (अभि. सा. 18) तीन प्रत्यक्षदर्शी साक्षी हैं और उनके परिसाक्ष्य मोटे तौर पर समनुरूप रहे हैं जो लॉ तिवारी की भूमिका को बतलाते हैं । उसे तारीख 7 मार्च, 2020 को गिरफ्तार करने का प्रयास सफल नहीं रहा था क्योंकि अन्वेषक अधिकारी द्वारा छह भिन्न-भिन्न अवसरों पर उसके परिसरों पर जाने पर उसे फरार पाया गया था । उसे केवल बाद में गिरफ्तार किया गया था और तारीख 4 अप्रैल, 2000 को रिमांड पर लिया गया था । राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल की दलील यह थी कि न तो डा. एम. पी. सिंह के परामर्श को और न ही एक्स-रे प्रस्तुत किया गया था और डा. एम. पी. सिंह को प्रतिरक्षा साक्षी के रूप में पेश या समन नहीं किया गया था, इसलिए अस्पताल में लॉ तिवारी के भर्ती होने और उपचार कराने के साक्ष्य के लिए कोई ऐसा कागज का टुकड़ा नहीं है जिसे उसके अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् के समर्थन में प्रस्तुत किया जा सका हो । उन्होंने हमारा ध्यान फर्दब्यान की ओर यह उपदर्शित करने के लिए दिलाया कि लॉ तिवारी और अन्य अभियुक्तों ने एक मामले के संबंध में मेराल जाने के लिए मृतक की मोटरसाइकिल मांगी थी, जिसके लिए उसने इनकार कर दिया था । राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि लॉ तिवारी का आचरण यहां तक कि अभिरक्षा के दौरान भी उचित नहीं था क्योंकि उसने इत्तिलाकर्ता को धमकी दी थी और इत्तिलाकर्ता को तारीख 13 जून, 2001 को अग्न्यायुध की क्षति कारित हुई थी । परिणामतः, पुलिस थाना गढ़वा में 2001 का मामला

सं. 107 रजिस्ट्रीकृत किया गया था । अंत में यह दलील दी गई कि अपीलार्थी की भूमिका को अजय पाल की भूमिका से सुभिन्न करने का कोई प्रयास नहीं किया गया था और अजय पाल की अपील खारिज हो जाने के कारण एकमात्र पहलू, जिसकी परीक्षा की जानी है, यह है कि क्या अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् को नामंजूर करते हुए दो निचले न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्षों में इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप किया जाना अपेक्षित है, जबकि इसका भार पूरी तरह से अपीलार्थी पर है क्योंकि जब ऐसा अभिवाक् किया जाता है तो अभियुक्त को अवश्य इस भार का निर्वहन करना चाहिए । हम इस संबंध में **विजय पाल** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली सरकार)**[1] वाले मामले में न्यायिक दृष्टिकोण को निर्दिष्ट कर सकते हैं, जिसमें इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि :–

> "27. हमारी सुविचारित राय में, जब विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय ने अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् को अविश्वसनीय माना है, जो कि तथ्य का एक समवर्ती निष्कर्ष है, तो इसको अस्वीकार करने की आवश्यकता नहीं है । अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् को साबित करने के लिए अभियुक्त द्वारा जो साक्ष्य प्रस्तुत किया गया है, वह खोखला है और वास्तव में इसकी संभावना बहुत कम है । यह ऐसा मामला नहीं है, जहां अभियुक्त ने पूरी निश्चितता से इस बात को साबित किया हो, जिससे घटनास्थल पर उसकी मौजूदगी की संभाव्यता को अपवर्जित किया जा सके । अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत किया गया साक्ष्य ऐसी गुणवत्ता का नहीं है कि न्यायालय को कोई युक्तियुक्त संदेह न होता हो । अभियुक्त पर इस बात को साबित करने का भार बेशक अधिक है और उससे यह अपेक्षा की जाती है कि वह अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् को निश्चितता के साथ सिद्ध करे ।"

जितेन्द्र कुमार बनाम **हरियाणा राज्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने

---

[1] (2015) 4 एस. सी. सी. 749.

[2] (2012) 6 एस. सी. सी. 204.

यह मत व्यक्त किया था कि :–

> "71. ..... अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् को सिद्ध करने का भार अपीलार्थियों पर था और अपीलार्थी अभिलेख पर कोई ऐसा साक्ष्य लाने में असफल रहे हैं, जिससे, यहां तक कि युक्तियुक्त अधिसंभाव्यता द्वारा उनके अन्यत्र उपस्थित होने का अभिवाक् सिद्ध होता हो । वास्तव में, अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् को निश्चितता के साथ साबित किया जाना चाहिए, जिससे घटनास्थल पर और उस मकान में, जो उनके नातेदारों का घर था, अभियुक्तों की मौजूदगी की संभावना पूरी तरह से अपवर्जित हो सके ।"

17. हमने लॉ तिवारी की अपील की सीमित परिधि पर विचार किया है और हम इसमें किसी प्रकार का कोई गुणागुण नहीं पाते हैं । राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा ठीक ही यह उल्लेख किया गया है कि अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् को सिद्ध करने का भार लॉ तिवारी पर था [**विजय पाल** और **जितेन्द्र कुमार** (उपरोक्त) वाले मामले देखें], जिसका निर्वहन करने में वह असफल रहा था । यह ऐसा मामला नहीं है जहां उसे अवसर प्रदान न किया गया हो । वास्तव में, लॉ तिवारी द्वारा प्रतिरक्षा में दो साक्षियों को प्रस्तुत किया गया था और न्यायालय द्वारा दोनों साक्षियों को समन भी किया गया था । तथापि, सुसंगत साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था ।

18. यह ठीक ही उल्लेख किया गया है कि सर्वाधिक तात्विक साक्षी डा. एम. पी. सिंह रहे होते, जिसे प्रतिरक्षा साक्षी के रूप में पेश नहीं किया गया था और न ही उसे समन किया गया था ।

19. हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि विचारण न्यायालय के निर्णय में कुछ पहचान संबंधी भ्रम है क्योंकि किसी डा. एम. पी. सिंह (अभि. सा. 1) के प्रति निर्देश किया गया है, जो वही डाक्टर नहीं है । डा. एम. पी. सिंह द्वारा कथित रूप से जो परामर्श दिया गया था, उसे भी साबित नहीं किया गया था और न ही एक्स-रे प्लेट प्रस्तुत की गई थी । प्रति. सा. 2 ने यह कथन किया था कि वह लॉ तिवारी को गढ़वा अस्पताल लाया था किंतु अस्पताल में उसकी अस्थि-भंग टांग के उपचार

के लिए भर्ती होने या अस्पताल में उपचार कराने के समर्थन में कोई कागजात प्रस्तुत नहीं किया गया था । इस प्रकार, इन सभी पहलुओं पर लॉ तिवारी अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् को सिद्ध करने के भार का निर्वहन करने में असफल रहा था और इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् को नामंजूर करके कोई गलती की थी । केवल इसी पहलू की हमारे द्वारा परीक्षा की जानी थी ।

20. हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि विचारण न्यायालय के निर्णय में लॉ तिवारी के विरुद्ध रजिस्ट्रीकृत एक अन्य मामले और उक्त मामले में उसकी दोषसिद्धि के पहलू पर चर्चा की गई है । वह घटना उसके अभिकथित अस्थि-भंग के समकालीन थी और इसलिए अस्थि-भंग पर आधारित अभिवाक् को असंधार्य पाया गया था क्योंकि लॉ तिवारी को उक्त मामले में दोषसिद्ध किया गया था । तथापि, उसने अपील में दोषमुक्ति के आदेश को फाइल किया था । यही कारण है कि हमने इस पहलू पर विचार नहीं किया है किंतु हमारे पूर्वोक्त निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए यह पहलू महत्वपूर्ण नहीं रह जाता है ।

21. पूर्वोक्त चर्चा का परिणाम यह है कि हम लॉ **उर्फ** उपेन्द्र तिवारी की दांडिक अपील में कोई गुणागुण नहीं पाते हैं ।

2021 की दांडिक अपील सं. 1492 (पप्पू तिवारी द्वारा फाइल की गई अपील)

22. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने विविध प्रकार की दलीलें दीं कि अभियोजन पक्ष को अपना पक्षकथन युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करना होता है । यह ऐसी बात नहीं है जिसका वास्तव में उल्लेख किया जाना चाहिए और यह दांडिक विधि शास्त्र का मूलभूत सिद्धांत है । यह कहना पर्याप्त होगा कि विद्वान् काउंसेल ने यह दलील देते हुए इस सिद्धांत का अवलंब लेना चाहा कि यदि अभियोजन के वृत्तांत में कोई युक्तियुक्त संदेह उत्पन्न हो सकता हो, तो अपीलार्थी को इसमें अवश्य सफलता मिलनी चाहिए ।

23. पूर्वोक्त दलील के संबंध में विद्वान् काउंसेल ने प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्यों को निर्दिष्ट करना चाहा । इत्तिलाकर्ता पंकज कुमार सिंह मृतक का भाई है, जिसकी अभि. सा. 6 के रूप में परीक्षा की गई थी । फर्दब्यान में उसने किसी साक्षी का नाम नहीं लिया था, यद्यपि उसने उनको "बहुत सारे साक्षी" होने के रूप में निर्दिष्ट किया था । यह उल्लेख किया गया कि प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्यों में विरोधाभास था । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि अभि. सा. 13 एक संयोगवश साक्षी था और उस स्थान पर उसकी मौजूदगी संदेहास्पद थी क्योंकि वह उस क्षेत्र में मैट्रिक की परीक्षा में बैठने के लिए घटना से केवल दस दिन पूर्व आया था और किसी व्यक्ति को नहीं जानता था ।

24. तथापि, हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि साक्ष्य का परिशीलन करने पर यह नहीं कहा जा सकता है कि प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्य में कोई बड़ी विसंगतियां हैं जिससे अभियोजन के वृत्तांत पर संदेह किया जा सके । इस मामले में तीन प्रत्यक्षदर्शी साक्षी हैं । इत्तिलाकर्ता, अभि. सा. 6 के परिसाक्ष्य का केवल इस कारण त्याग नहीं किया जा सकता है कि यह एक घनिष्ठ नातेदार का साक्ष्य है । इसी प्रकार, अभि. सा. 13 हालांकि एक संयोगवश साक्षी है, उसने अपनी मौजूदगी की बात को स्पष्ट किया था और यह कथन किया था कि वह अभियुक्तों की शनाख्त कर सकता है जो उस क्षेत्र में जाने-पहचाने हैं, हालांकि उनकी एक नकारात्मक छवि है । तथापि, जहां तक अभि. सा. 18, तृतीय प्रत्यक्षदर्शी साक्षी का संबंध है, हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि उच्च न्यायालय ने इस साक्षी की परीक्षा कराने में दो माह से अधिक का विलंब होने के कारण उसके परिसाक्ष्य पर विश्वास नहीं किया था, जिसने प्रत्यक्षदर्शी साक्षी होने का दावा किया था और वह मृतक का मामा था ।

25. विद्वान् काउंसेल ने जोरदार रूप से यह दलील दी कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट समय-पूर्व की थी और स्वयमेव इस बात से अभियोजन के वृत्तांत पर संदेह उत्पन्न होता है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट तारीख 7 मार्च, 2000 को ठीक दोपहर बाद अभिलिखित की गई थी किंतु यह न्यायालय में अगले दिन तारीख 8 मार्च, 2000 को पहुंची थी जबकि

न्यायालय और पुलिस थाने के बीच की दूरी मुश्किल से एक कि. मी. थी ।

26. दूसरी ओर, राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह उल्लेख किया कि घटना तारीख 7 मार्च, 2000 को 1.00 बजे अपराह्न में घटी थी और 1.43 बजे अपराह्न में अस्पताल से टेलीफोन कॉल करके यह इत्तिला दी गई थी कि क्षतिग्रस्त अस्पताल में आया है और फर्दबयान अभिलिखित करने का समय 2.00 बजे अपराह्न का है । मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट 2.10 बजे अपराह्न में तैयार की गई थी और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट 2.25 बजे अपराह्न में रजिस्ट्रीकृत की गई थी । मरणोत्तर परीक्षा के लिए शव 2.45 बजे अपराह्न में प्राप्त हुआ था और साथ ही साथ अन्वेषक अधिकारी घटनास्थल पर पहुंचा था । मरणोत्तर परीक्षा 3.50 बजे अपराह्न में आरंभ हुई थी । अन्वेषक अधिकारी अर्द्ध-रात्रि में घर वापस गया था और कई बार अभियुक्तों के मकान पर गया था । इस प्रकार, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट न्यायालय में तारीख 8 मार्च, 2000 को पहुंची थी । समय और तारीखों के इन क्रमों का उल्लेख यह दर्शित करने के लिए किया गया कि पूर्व-दिनांकित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने की कोई गुंजाइश नहीं हो सकती थी ।

27. हम इस पहलू की परीक्षा विद्वान् काउंसेल द्वारा उद्धृत **सुदर्शन और एक अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में के निर्णय के संदर्भ में कर सकते हैं । अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा बताए गए सुसंगत पैरा से यह दर्शित होता है कि उक्त मामले में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का स्तंभ 15, जो न्यायालय को प्रेषित करने की तारीख और समय से संबंधित था, खाली छोड़ा गया था । अन्वेषक अधिकारी यह साबित नहीं कर सका था कि कब और कैसे प्रथम इत्तिला रिपोर्ट न्यायालय को भेजी गई थी । ऐसा करने की आवश्यकता पर निर्णय में जोर दिया गया था क्योंकि इसका प्राथमिक उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में सत्य वृत्तांत अभिलिखित किया गया हो और उसमें कोई छल साधन या जोड़-तोड़ न हो । यही कारण है कि यह कानूनी अपेक्षा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (जिसे इसमें इसके पश्चात् दंड

[1] (2014) 12 एस. सी. सी. 312.

प्रक्रिया संहिता कहा गया है) की धारा 157 में उपबंधित है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के संबंध में गंभीर संदेह था ।

28. ऊपर अधिकथित किए गए सिद्धांतों की कसौटी के आधार पर मुश्किल से यह कहा जा सकता है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 157 के अधीन विधि के आदेश का पालन नहीं किया गया था । घटना की सूचना प्राप्त होने पर शीघ्रता से फर्दब्यान अभिलिखित किया गया था, मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट तैयार की गई थी और इस सूचना के 25 मिनट के भीतर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई थी । शव को तुरंत मरणोत्तर परीक्षा के लिए भेजा गया था और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अगले दिन सवेरे न्यायालय में भेजी गई थी । हम यह नहीं कह सकते हैं कि ऐसी कोई खामी है जिसका उपयोग किया जा सकता था या प्रथम इत्तिला रिपोर्ट समय-पूर्व की थी और इस प्रकार मजिस्ट्रेट को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट भेजने के उद्देश्य की अपेक्षा का पालन किया गया था । अत: इस अभिवाक् में कोई गुणागुण नहीं है ।

29. अब अगले अभिवाक् पर आते हैं जिस पर अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा काफी जोर दिया गया और यह दलील दी गई कि मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट (प्रदर्श-3) और मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट (प्रदर्श-1) के बीच बड़ी विसंगति है । इस पहलू को वास्तव में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट समय-पूर्व होने के अभिवाक् से जोड़ा जाना चाहा गया । यह उल्लेख किया गया कि ब्यान में भिन्नताएं हैं जिससे यह दर्शित होता है कि फर्दब्यान केवल मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट के पश्चात् दर्ज किया गया था । इस बात के लिए तथ्यात्मक आधार यह होना बताया गया कि मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट में छह क्षतियां उल्लिखित हैं और बंदूक की गोली से पहुंची क्षति का कोई उल्लेख नहीं है, जबकि मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट से दर्शित होता है कि बंदूक की गोली से पहुंची क्षति सहित 26 क्षतियां हैं । उससे पिस्तौल बरामद नहीं की गई थी और न ही कोई कारतूस पाया गया था और सहायक उप निरीक्षक रजनीकांत झा, जिसने फर्दब्यान तथा मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट दोनों अभिलिखित की थी, की अभियोजन पक्ष द्वारा परीक्षा नहीं की गई थी । इस पहलू पर विद्वान् काउंसेल ने **मौला बक्स**

और अन्य बनाम **राजस्थान राज्य**[1] वाले मामले में की गई मताभिव्यक्तियों का अवलंब लिया ।

30. दूसरी ओर, राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट को सारभूत साक्ष्य के रूप में नहीं माना जा सकता है किंतु इसका उपयोग मृत्युसमीक्षा के साक्षी से सामना कराने के लिए किया जा सकता है । **सुरेश राय** बनाम **बिहार राज्य**[2] वाला मामला देखें । उन्होंने यह दलील दी कि मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट वास्तव में स्वयमेव एक साक्ष्य नहीं होती है और न्यायालय में चिकित्सा साक्षी के साक्ष्य के विरुद्ध प्रस्तुत नहीं की जा सकती है । **सुरजन और अन्य** बनाम **राजस्थान राज्य**[3] वाला मामला देखें । विद्वान् काउंसेल ने हमारा ध्यान **पेड्डा नारायण और अन्य** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[4] वाले मामले में की गई मताभिव्यक्तियों की ओर यह राय व्यक्त करने के लिए दिलाया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 174 के अधीन कार्यवाहियों का उद्देश्य केवल यह अभिनिश्चित करना है कि क्या व्यक्ति की मृत्यु संदेहास्पद परिस्थितियों में हुई थी या अस्वाभाविक मृत्यु थी और यदि ऐसा था तो मृत्यु का स्पष्ट कारण क्या था । तथापि, मृतक पर कैसे हमला किया गया था या उस पर किसने हमला किया था, यह ब्यौरे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 176 के अधीन कार्यवाहियों की परिधि में नहीं आएंगे, न ही ये ऐसे ब्यौरे हैं जिनका मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट में उल्लेख किया जाना अपेक्षित है । **योगेश सिंह** बनाम **महाबीर सिंह और अन्य**[5] वाला मामला देखें ।

31. इसके पश्चात् विद्वान् काउंसेल ने **तहसीन पूनावाला** बनाम **भारत संघ**[6] वाले मामले में इस न्यायालय के बिल्कुल हाल ही के निर्णय का यह राय व्यक्त करने के लिए आश्रय लिया कि मृत्युसमीक्षा करने

---

[1] (1983) 1 एस. सी. सी. 379.

[2] (2000) 4 एस. सी. सी. 84.

[3] ए. आई. आर. 1956 एस. सी. 425.

[4] [1975] 3 उम. नि. प. 843 = (1975) 4 एस. सी. सी. 153.

[5] (2017) 11 एस. सी. सी. 195.

[6] (2018) 6 एस. सी. सी. 72.

का प्रयोजन सीमित होता है और मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट से सारभूत साक्ष्य का गठन नहीं होता है । मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट की तुलना में जो डाक्टर मरणोत्तर परीक्षण करता है, वह चिकित्सा-विधिक परिप्रेक्ष्य से शव का परीक्षण करता है । इस प्रकार, यह मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट ही है जिसमें एक वैज्ञानिक परीक्षण के माध्यम से क्षतियों का ब्यौरा अंतर्विष्ट होने की प्रत्याशा की जाती है । इस संदर्भ में उन्होंने यह दलील दी कि **मौला बक्स और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले से अपीलार्थी को कोई सहायता नहीं मिलती है क्योंकि पुलिस अधिकारी, जिसने मृत्युसमीक्षा पंचनामा तैयार किया था, वह चिकित्सा विधिशास्त्र में एक विशेषज्ञ नहीं है ।

32. जहां तक तथ्यात्मक पृष्ठभूमि का संबंध है, पूर्वोक्त अभिवाकों की परीक्षा करने पर थोड़ा संदेह होता है कि मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट और मरणोत्तर समीक्षा रिपोर्ट में मृतक पर पहुंची क्षतियों की संख्या के अभिलेखन में थोड़ा-बहुत नहीं अपितु एक बड़ा फर्क है । तथापि, हमारे मत में यह फर्क घातक नहीं होगा । हम ऐसा मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट के प्रयोजन को ध्यान में रखते हुए कह सकते हैं, जो कि एक सारभूत साक्ष्य नहीं है । इसका उद्देश्य यह पता लगाना है कि जिस व्यक्ति की मृत्यु संदेहास्पद परिस्थितियों में हुई थी, उसकी मृत्यु का स्पष्ट कारण क्या हो सकता है । प्रस्तुत मामले में, मृत्यु अस्वाभाविक थी । शव पर घाव पाए गए थे । इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह एक मानववध का मामला है । डाक्टर ही विशेषज्ञ है, जो मरणोत्तर परीक्षा करता है और चिकित्सा विधिक विशेषज्ञ होता है । अग्न्यायुध की दो क्षतियों की प्रवेश और निकास के घावों के साथ पहचान की गई थी । हमने सूचना प्राप्त होने और पुलिस की कार्यवाही के बीच समयावधि की सन्निकटता की, उस प्रक्रम से लेकर जब मरणोत्तर परीक्षा आरंभ हुई थी, पहले ही चर्चा की है । हम इस अभिवाक् में कोई सार नहीं पाते हैं ।

33. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा जिस तीसरे पहलू पर जोर दिया गया है, वह चिकित्सा साक्ष्य और प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य के बीच अभिकथित फर्क होना है । अभि. सा. 1 ने मृतक की मरणोत्तर परीक्षा करने पर 26 क्षतियां पाई थीं । विद्वान् काउंसेल ने यह उल्लेख

किया कि उस दूरी के बारे में पूछे जाने पर जिससे अग्न्यायुध का प्रयोग किया गया था, उसने कोई राय व्यक्त नहीं की थी । विद्वान् काउंसेल ने यह भी उल्लेख किया कि अभियोजन का यह पक्षकथन है कि पप्पू तिवारी द्वारा अग्न्यायुध से क्षति कारित करने के पश्चात् मृतक नीचे गिर गया था और अन्य अभियुक्तों ने उस पर चाकुओं से हमला किया था । मृतक के पिछले भाग पर क्षतियां होने के बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है । अभियोजन के वृत्तांत के अनुसार, साक्षी लगभग 1.00 बजे अपराह्न में जिम की ओर जा रहा था किंतु मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट से यह प्रकट होता है कि उदर खाली था और मलाशय और मूत्राशय भरा हुआ था, जिससे यह दर्शित होता है कि यह व्यक्ति शौच नहीं गया था और उसने नाश्ता भी नहीं किया था । यह स्थिति सवेरे ही हो सकती है, न कि दिन के समय ।

34. दूसरी ओर, राज्य की ओर विद्वान् काउंसेल ने प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्य के साथ-साथ चिकित्सा अधिकारी-अभि. सा. 1 के साक्ष्य को भी निर्दिष्ट किया । इन मुद्दों पर कि कौन-सा अग्न्यायुध प्रयुक्त किया गया था, क्या क्षतियां गोली से कारित हुई थी या छर्रे से और वह दूरी कितनी थी, जिससे अग्न्यायुध का प्रयोग किया गया था, यह दलील दी गई कि जहां आयुध और गोला-बारूद अनिश्चित बनावट और गुणवत्ता का हो, वहां मानक आयुध और गोला-बारूद पर आधारित सामान्य छर्रा पैटर्न को विशुद्धता के साथ लागू नहीं किया जा सकता है । (**प्रह्लाद सिंह** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाला मामला देखें) ।

35. इस अभिवाक् पर विचार करने पर हमारा यह निष्कर्ष है कि चिकित्सा और प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य के बीच वास्तव में कोई फर्क नहीं है किंतु डाक्टर द्वारा उस दूरी के बारे में राय व्यक्त नहीं करने के कारण जिस दूरी से अग्न्यायुध की क्षति कारित हुई थी, अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा इस फर्क को अत्यधिक उजागर करना चाहा गया है । इसके अतिरिक्त, प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों ने यह स्पष्ट साक्ष्य दिया है कि अन्य अभियुक्तों ने मृतक पर चाकुओं से हमला किया था । पांच

---

[1] (2011) 15 एस. सी. सी. 136.

व्यक्तियों द्वारा मृतक पर हमला करने की प्रक्रिया में यह नहीं कहा जा सकता है कि मृतक एक-जैसी स्थिति में पड़ा रहा होगा और इसलिए पीछे और सामने दोनों तरफ क्षतियां पहुंचने की पूरी संभाव्यता है । घटना की प्रकृति और प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्य से संदेह अभियोजन के वृत्तांत पर किया जाना चाहिए न कि मात्र खाए गए भोजन के पहलू पर । हम ऐसी कोई खामी नहीं देख सकते हैं, जो हमें निचले न्यायालयों के एक-जैसे निष्कर्षों को उलटने के लिए प्रेरित करे ।

36. अपीलार्थी की ओर से शेष दलीलें त्रुटिपूर्ण अन्वेषण, स्वतंत्र साक्षियों का अभाव होने के अभिवाक् पर आधारित हैं किंतु ऐसा कोई कारण नहीं है कि प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के वृत्तांत पर, जो विश्वसनीय है, क्यों पूरी तरह से विश्वास न किया जाए । मामले को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने के लिए जो कसौटी लागू की जाती है, उसका यह अर्थ नहीं है कि प्रयास खामियां निकालने का हो और जैसे-तैसे दोषमुक्ति प्राप्त करने के लिए कोई न कोई बहाना ढूंढ़ा जाए ।

37. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा आग्रह किया गया अंतिम पहलू यह था कि अन्वेषक अधिकारी ने अपीलार्थी और अन्य अभियुक्तों के पूर्ववृत्त को निर्दिष्ट किया था, जिस पर उच्च न्यायालय द्वारा भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 53 के कानूनी उपबंधों के प्रतिकूल गलत रूप से विचार किया गया था । उक्त उपबंध में यह अनुबंधित है कि पूर्वतन दुष्चरित्र उत्तर में होने के सिवाय सुसंगत नहीं है अर्थात् जब तक इस बात का साक्ष्य न दिया गया हो कि वह अच्छे शील का है, उस दशा में वह सुसंगत हो जाता है । तथापि, प्रस्तुत मामले में जो घटित हुआ है वह यह है कि अन्वेषक अधिकारी के परिसाक्ष्य के इस भाग का समर्थन कोई साक्ष्य प्रस्तुत करके नहीं किया गया था कि अभियुक्त खतरनाक हैं और न ही निचले न्यायालय द्वारा इस पर विचार किया गया था । अभि. सा. 13 अपीलार्थियों की शनाख्त करने में इसलिए समर्थ रहा था क्योंकि वे सड़क पर आते-जाते रहते थे और वे कथित रूप से "क्षेत्र के मालिक" होने के रूप में जाने जाते थे । अत: हमारा यह मत है कि भरसक प्रयास के बावजूद अपीलार्थी की ओर

से विद्वान् काउंसेल विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय पर कोई संदेह करने में समर्थ नहीं रहे हैं ।

निष्कर्ष

38. पूर्वोक्त चर्चा के सिंहावलोकन में हमारा यह मत है कि अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए वृत्तांत को सिद्ध किया गया है और अपीलार्थी-अभियुक्तों द्वारा ऐसी कोई कमी नहीं निकाली गई है, जिससे कोई संदेह किया जा सके और उन्हें संदेह के फायदे का हकदार बना सके । परिणामत: ये अपीलें खारिज की जाती हैं और पक्षकार अपना-अपना खर्च स्वयं वहन करेंगे ।

अपीलें खारिज की गईं ।

जस.

संसद् के अधिनियम

माल-विक्रय अधिनियम, 1930

(1930 का अधिनियम संख्यांक 3)[1]

[15 मार्च, 1930]

माल के विक्रय से संबंधित विधि को परिभाषित और संशोधित करने के लिए अधिनियम

माल के विक्रय से संबंधित विधि को परिभाषित और संशोधित करना समीचीन है, अतः एतद्द्वारा यह निम्नलिखित रूप में अधिनियमित किया जाता है :–

अध्याय 1

प्रारंभिक

1. **संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ** – (1) यह अधिनियम [2]*** माल विक्रय अधिनियम, 1930 कहा जा सकेगा ।

[3][(2) इसका विस्तार [4][जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय] संपूर्ण भारत पर है ।]

(3) यह जुलाई, 1930 के प्रथम दिन को प्रवृत्त होगा ।

---

[1] इस अधिनियम का विस्तार बरार पर 1941 के अधिनियम सं. 4 द्वारा दादरा और नागर हवेली पर ; 1963 के विनियम सं. 6 की धारा 2 और अनुसूची 1 द्वारा (1-7-1965 से) गोवा, दमण और दीव पर ; 1963 के विनियम सं. 11 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा पाण्डिचेरी पर ; 1968 के अधिनियम सं. 26 की धारा 3, अनुसूची द्वारा लक्षदीप पर ; 1965 के विनियम सं. 8 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा (1-10-1967 से) ; तथा सिक्किम पर अधिसूचना सं. का. आ. 645(अ), तारीख 24-8-1984, भारत का राजपत्र (अंग्रेजी) आसाधारण, भाग II, अनुभाग 3(ii) द्वारा (1-9-1984 से) किया गया है ।

[2] 1963 के अधिनियम सं. 33 की धारा 2 द्वारा "भारतीय" शब्द का लोप किया गया ।

[3] विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा उपधारा (2) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[4] 1951 के अधिनियम सं. 3 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा "भाग ख राज्यों के सिवाय" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

2. **परिभाषाएं** – इस अधिनियम में, जब तक कोई बात, विषय या संदर्भ में विरुद्ध न हो, –

(1) "क्रेता" से वह व्यक्ति अभिप्रेत है जो माल का क्रय करता है या क्रय करने का करार करता है ;

(2) "परिदान" से एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को कब्जे का स्वेच्छया अन्तरण अभिप्रेत है;

(3) माल का "परिदेय स्थिति" में होना तब कहा जाता है जबकि वह ऐसी स्थिति में हो कि क्रेता उसका परिदान लेने के लिए संविदा के अधीन आबद्ध हो;

(4) "माल पर हक की दस्तावेज" के अन्तर्गत वहनपत्र, डाक-वारण्ट, भाण्डागारिक प्रमाणपत्र, घाटवाल का प्रमाणपत्र, रेल-रसीद [1][बहुविध परिवहन दस्तावेज], माल के परिदान के लिए वारण्ट या आदेश और ऐसी अन्य कोई भी दस्तावेज आती है जिसका कारबार के मामूली अनुक्रम में उपयोग माल पर कब्जे या नियंत्रण के सबूत के रूप में किया जाता है या जो उस दस्तावेज पर कब्जा रखने वाले व्यक्ति को वह माल जिसके बारे में वह दस्तावेज है अन्तरित या प्राप्त करने के लिए, या तो पृष्ठांकन द्वारा या परिदान द्वारा, प्राधिकृत करती है या प्राधिकृत करने वाली तात्पर्यित है;

(5) "कसूर" से सदोष कार्य या व्यतिक्रम अभिप्रेत है;

(6) "भावी माल" से वह माल अभिप्रेत है जिसे विक्रय की संविदा करने के पश्चात् विक्रेता को विनिर्मित या उत्पादित या अर्जित करना है;

(7) "माल" से अनुयोज्य दावों और धन से भिन्न हर किस्म की जंगम सम्पत्ति अभिप्रेत है, तथा इसके अन्तर्गत आते हैं स्टाक और अंश, उगती फसलें, घास और भूमि से बद्ध या उसकी भागरूप ऐसी चीजें जिनका विक्रय से पूर्व या विक्रय की संविदा के अधीन भूमि से पृथक् किए जाने का करार किया गया हो;

---

[1] 1993 के अधिनियम सं. 28 की धारा 31 और अनुसूची भाग 3 द्वारा अन्त:स्थापित ।

(8) वह व्यक्ति "दिवालिया" कहलाता है जिसने कारबार के मामूली अनुक्रम में अपने ऋणों का संदाय बन्द कर दिया हो या जो अपने ऋणों का, जैसे-जैसे वे शोध्य होते जाएं संदाय न कर सकता हो, चाहे उसने दिवालिएपन का कोई कार्य किया हो या नहीं;

(9) "वाणिज्यिक अभिकर्ता" से ऐसा वाणिज्यिक अभिकर्ता अभिप्रेत है जो ऐसा अभिप्रेत होने के नाते कारबार के रूढ़िक अनुक्रम में या तो माल के विक्रय का या विक्रय के प्रयोजनों के लिए माल के परेषण का या माल के क्रय का या माल की प्रतिभूति पर धन खड़ा करने का प्राधिकार रखता हो;

(10) "कीमत" से वह प्रतिफल अभिप्रेत है जो माल के विक्रय का धन के रूप में है;

(11) "संपत्ति" से माल में की साधारण संपत्ति, न कि केवल कोई विशेष संपत्ति, अभिप्रेत है;

(12) "माल की क्वालिटी" के अंतर्गत उसकी स्थिति या दशा भी आती है;

(13) "विक्रेता" से वह व्यक्ति अभिप्रेत है जो माल का विक्रय करता है या विक्रय करने का करार करता है;

(14) "विनिर्दिष्ट माल" से वह माल अभिप्रेत है जो उस समय, जब विक्रय की संविदा की जाती है, परिलक्षित और करारित किया जाता है ; तथा

(15) उन पदों के जो इस अधिनियम में प्रयुक्त किए गए हैं किन्तु परिभाषित नहीं हैं और भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 (1872 का 9) में परिभाषित हैं, वे ही अर्थ हैं जो उन्हें उस अधिनियम में समनुदिष्ट हैं ।

3. **1872 के अधिनियम 9 के उपबंधों का लागू होना** - भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 के अनिरसित उपबंध, वहां तक के सिवाय जहां तक कि वे इस अधिनियम के अभिव्यक्त उपबंधों से असंगत हैं, माल के विक्रय की संविदाओं को लागू होते रहेंगे ।

अध्याय 2

संविदा की विरचना

विक्रय की संविदा

4. **विक्रय और विक्रय करने का करार** – (1) माल के विक्रय की संविदा ऐसी संविदा है जिसके द्वारा विक्रेता माल में की संपत्ति क्रेता को कीमत पर अन्तरित करता है या अन्तरित करने का करार करता है । एक भागिक स्वामी और दूसरे भागिक स्वामी के बीच विक्रय की संविदा हो सकेगी ।

(2) विक्रय की संविदा आत्यन्तिक या सशर्त हो सकेगी ।

(3) जहां कि माल में की संपत्ति विक्रेता से क्रेता को विक्रय की संविदा के अधीन अन्तरित होती है वहां संविदा विक्रय कहलाती है, किन्तु जहां कि माल में की संपत्ति का अन्तरण किसी आगामी समय में या किसी ऐसी शर्त के अध्यधीन होना है जो तत्पश्चात् पूरी की जानी है वहां संविदा विक्रय करने का करार कहलाती है ।

(4) विक्रय करने का करार तब विक्रय हो जाता है जब वह समय बीत जाता है या वे शर्तें पूरी हो जाती हैं जिनके अध्यधीन माल में की संपत्ति अन्तरित होनी है ।

संविदा की प्ररूपिताएं

5. **विक्रय की संविदा कैसे की जाती है** – (1) विक्रय की संविदा कीमत पर माल का क्रय या विक्रय करने की प्रस्थापना और उस प्रस्थापना के प्रतिग्रहण द्वारा की जाती है । संविदा माल के तुरन्त परिदान के या कीमत के तुरन्त संदाय के या उन दोनों के लिए अथवा किस्तों में परिदान या संदाय के लिए अथवा इस बात के लिए कि परिदान या संदाय या दोनों मुल्तवी रहेंगे, उपबंध कर सकेगी ।

(2) किसी तत्समय प्रवृत्त विधि के उपबंधों के अध्यधीन यह है कि विक्रय की संविदा लिखित या वाचिक या भागतः लिखित और भागतः वाचिक तौर पर की जा सकेगी अथवा पक्षकारों के आचरण से विवक्षित हो सकेगी ।

संविदा की विषय-वस्तु

6. **वर्तमान या भावी माल** – (1) वह माल जो विक्रय की संविदा का विषय हो या तो ऐसा वर्तमान माल हो सकेगा जो विक्रेता के स्वामित्व या कब्जे में हो या भावी माल हो सकेगा ।

(2) उस माल के विक्रय के लिए संविदा हो सकेगी जिसका क्रेता द्वारा अर्जन ऐसी अनिश्चित घटना पर अवलम्बित हो जो घटित हो या न हो ।

(3) जहां कि विक्रय की संविदा द्वारा विक्रेता का भावी माल का साप्रतिक विक्रय करना तात्पर्यित है वहां वह संविदा उस माल का विक्रय करने के करार के रूप में प्रवृत्त होती है ।

7. **संविदा की जाने के पूर्व माल का नष्ट होना** – जहां कि संविदा विनिर्दिष्ट माल के विक्रय के लिए है, वहां यदि विक्रेता के ज्ञान के बिना वह माल उस समय, जब संविदा की गई थी, नष्ट हो गया था या इतना नुकसानग्रस्त हो गया था कि वह संविदा में के अपने वर्णन के अनुरूप नहीं रह गया था, तो संविदा शून्य है ।

8. **विक्रय के पूर्व किन्तु विक्रय करने के करार के पश्चात् माल का नष्ट हो जाना** – जहां कि करार विनिर्दिष्ट माल के विक्रय का है और तत्पश्चात् इसके पूर्व कि जोखिम क्रेता को संक्रान्त हो वह माल क्रेता या विक्रेता की तरफ के किसी कसूर के बिना नष्ट हो जाता है या इतना नुकसानग्रस्त हो जाता है कि वह करार में के अपने वर्णन के अनुरूप नहीं रह जाता वहां करार तद्द्वारा शून्य हो जाता है ।

कीमत

9. **कीमत अभिनिश्चित करना** – (1) विक्रय की संविदा में की कीमत उस संविदा द्वारा नियत की जा सकेगी या तद्द्वारा कारित रीति से नियत किए जाने के लिए छोड़ी जा सकेगी, या पक्षकारों के बीच की व्यवहार-चर्या द्वारा अवधारित की जा सकेगी ।

(2) जहां कि कीमत पूर्वगामी उपबंधों के अनुसार अवधारित नहीं की गई है, वहां क्रेता को युक्तियुक्त कीमत देगा । युक्तियुक्त कीमत

क्या है, यह तथ्य का प्रश्न है जो हर विशिष्ट मामले की परिस्थितियों पर अवलम्बित है ।

10. **मूल्यांकन पर विक्रय करने का करार** – (1) जहां कि इस निबन्धन पर माल का विक्रय करने का करार है कि कीमत किसी पर-व्यक्ति के मूल्यांकन द्वारा नियत की जाती है और ऐसा पर-व्यक्ति मूल्यांकन नहीं कर सकता या नहीं करता, वहां वह करार तद्द्वारा शून्य हो जाता है :

परन्तु यदि वह माल या उसका कोई भाग क्रेता को परिदत्त कर दिया गया हो और उसके द्वारा विनियोजित कर लिया गया हो, तो वह उसके लिए युक्तियुक्त कीमत देगा ।

(2) जहां कि विक्रेता या क्रेता के कसूर से ऐसा पर-व्यक्ति मूल्यांकन करने से निवारित हो जाता है, वहां जिस पक्षकार का कसूर नहीं है वह उस पक्ष के विरुद्ध जिसका कसूर है नुकसानी के लिए वाद ला सकेगा ।

शर्तें और वारंटियां

11. **समय के बारे में अनुबंध** – जब तक कि उस संविदा के निबंधनों से कोई भिन्न आशय प्रतीत हो, संदाय के समय के बारे में अनुबंध विक्रय की संविदा के मर्म नहीं समझे जाते । समय के बारे में कोई अन्य अनुबंध उस संविदा का मर्म है या नहीं, यह बात उस संविदा के निबंधनों पर अवलंबित होती है ।

12. **शर्तें और वारंटी** – (1) विक्रय की संविदा में कोई अनुबंध जो उस माल के बारे में हो जो उस संविदा का विषय है शर्त या वारंटी हो सकेगा ।

(2) शर्त संविदा के मुख्य प्रयोजन के लिए मर्मभूत वह अनुबंध है जिसका भंग उस संविदा को निराकृत मानने का अधिकार पैदा करता है ।

(3) वारंटी संविदा के मुख्य प्रयोजन का सांपार्श्विक अनुबंध है जिसका भंग नुकसानी के लिए दावा पैदा करता है किन्तु माल को प्रतिक्षेपित करने और संविदा को निराकृत मानने का अधिकार पैदा नहीं

करता ।

(4) विक्रय की संविदा में कोई अनुबंध शर्त है या वारंटी, यह बात हर एक मामले में उस संविदा के अर्थान्वयन पर अवलंबित होती है । अनुबंध शर्त हो सकता है, यद्यपि संविदा में उसे वारंटी कहा गया हो ।

13. **शर्त कब वारंटी मानी जा सकेगी** – (1) जहां कि विक्रय की संविदा किसी ऐसी शर्त के अध्यधीन है जिसकी पूर्ति विक्रेता द्वारा की जानी है, वहां क्रेता उस शर्त का अधित्यजन कर सकेगा अथवा यह निर्वाचन कर सकेगा कि शर्त के भंग को वारंटी का भंग, न कि संविदा को निराकृत मानने का आधार माने ।

(2) जहां कि विक्रय की संविदा विभाजनीय नहीं है और क्रेता ने माल को या उसके भाग को प्रतिगृहीत कर लिया है [1]*** वहां क्रेता द्वारा पूरी की जाने वाली किसी शर्त का भंग केवल वारंटी का भंग न कि माल को प्रतिक्षेपित करने का और संविदा को निराकृत मानने का आधार, माना जा सकेगा, जब तक कि संविदा में कोई तत्प्रभावी अभिव्यक्त या विवक्षित निबंधन न हो ।

(3) इस धारा की कोई भी बात किसी ऐसी शर्त या वारंटी के मामले पर प्रभाव न डालेगी जिसे पूरा करने से माफी उसकी असंभवता के कारण या अन्यथा विधि द्वारा प्रदत्त हो ।

14. **हक आदि के बारे में विवक्षित परिवंचन** – विक्रय की संविदा में, जब तक कि संविदा की परिस्थितियां ऐसी न हों कि भिन्न आशय दर्शित होता हो –

(क) विक्रेता की तरफ से विक्रय की दशा में यह विवक्षित शर्त रहती है उसे माल के विक्रय का अधिकार है और विक्रय करने के करार की दशा में यह विवक्षित शर्त रहती है कि उसे उस माल के विक्रय का अधिकार उस समय रहेगा जब सम्पत्ति संक्रंत होनी है;

(ख) यह विवक्षित वारण्टी रहती है कि क्रेता को उस माल का

---

[1] 1963 के अधिनियम सं. 33 की धारा 3 द्वारा "या जहां संविदा उस विनिर्दिष्ट माल के लिए है जिसमें कि संपत्ति क्रेता को संक्रांत होती है" शब्दों का लोप किया गया ।

निर्बाध कब्जा प्राप्त होगा और वह ऐसे कब्जे का उपभोग करेगा;

(ग) यह विवक्षित वारण्टी रहती है कि माल किसी पर-व्यक्ति के पक्ष में किए गए किसी ऐसे भार या विल्लंगम् से मुक्त रहेगा जो क्रेता को संविदा किए जाने के पूर्व या किए जाने के समय घोषित नहीं किया गया था या ज्ञात न था ।

15. **वर्णनानुसार विक्रय** – जहां कि संविदा वर्णनानुसार माल के विक्रय के लिए हो वहां यह विवक्षित शर्त रहती है कि माल वर्णन के अनुरूप होगा और यदि विक्रय नमूने और वर्णन दोनों के अनुसार हो तो माल के प्रपुंज का नमूने के अनुरूप होना पर्याप्त नहीं है जब तक कि माल वर्णन के अनुरूप भी न हो ।

16. **क्वालिटी या योग्यता के बारे में विवक्षित शर्तें** – इस अधिनियम के और किसी अन्य तत्समय प्रवृत्त विधि के उपबंधों के अध्यधीन यह है कि जिस माल का प्रदाय विक्रय की संविदा के अधीन किया गया है उसकी क्वालिटी के बारे में या किसी विशिष्ट प्रयोजन के लिए उसकी योग्यता के बारे में विवक्षित वारण्टी या शर्त निम्नलिखित के सिवाय नहीं रहती है –

(1) जहां कि क्रेता वह विशिष्ट प्रयोजन, जिसके लिए माल अपेक्षित है, विक्रेता को अभिव्यक्त या विवक्षित रूप से इस प्रकार ज्ञात करा देता है कि उससे यह दर्शित हो कि विक्रेता के कौशल या विवेकबुद्धि पर क्रेता भरोसा कर रहा है और माल उस वर्णन का है, जिस वर्णन के माल का प्रदाय विक्रेता के कारबार के अनुक्रम में है (चाहे विक्रेता उसका विनिर्माता या उत्पादक हो या नहीं), वहां यह विवक्षित शर्त होती है कि माल ऐसे प्रयोजन के लिए युक्तियुक्ततः योग्य होगा :

परन्तु विनिर्दिष्ट चीज के पेटेन्ट-नाम या अन्य व्यापार नाम से विक्रय की संविदा की दशा में उस चीज के किसी विशिष्ट प्रयोजन के लिए योग्य होने के बारे में कोई विवक्षित शर्त नहीं होगी ।

(2) जहां कि माल का ऐसे विक्रेता से वर्णनानुसार क्रय किया

जाता है जो उस वर्णन के माल का व्यापार करता है (चाहे वह उसका विनिर्माता या उत्पादक हो या नहीं), वहां यह विवक्षित शर्त होती है कि माल वाणिज्यिक क्वालिटी का होगा :

परन्तु यदि क्रेता ने माल की परीक्षा कर ली है तो उन त्रुटियों के बारे में जो ऐसी परीक्षा से प्रकट हो जानी चाहिए थी कोई विवक्षित शर्त नहीं होगी ।

(3) क्वालिटी के बारे में या विशिष्ट प्रयोजन के लिए योग्य होने के बारे में विवक्षित वारंटी या शर्त व्यापार की प्रथा द्वारा उपाबद्ध हो सकेगी ।

(4) अभिव्यक्त वारंटी या शर्त इस अधिनियम द्वारा विवक्षित वारंटी या शर्त का नकार नहीं करती जब तक कि वह उससे असंगत न हो ।

17. **नमूने के अनुसार विक्रय** – (1) विक्रय की संविदा वहां नमूने के अनुसार विक्रय के लिए होती है जहां कि संविदा में तत्प्रभावी अभिव्यक्त या विवक्षित निबंधन हो ।

(2) नमूने के अनुसार विक्रय के लिए संविदा की दशा में यह विवक्षित शर्त रहती है –

(क) कि माल का प्रपुंज क्वालिटी में नमूने के सदृश्य होगा;

(ख) कि क्रेता को माल के प्रपुंज का नमूने से मिलान करने का युक्तियुक्त अवसर प्राप्त होगा;

(ग) कि माल उसे अवाणिज्यिक बना देने वाली किसी ऐसी त्रुटि से मुक्त होगा जो नमूने की युक्तियुक्त परीक्षा से प्रकट न होती हो ।

अध्याय 3

संविदा के प्रभाव

विक्रेता और क्रेता के बीच संपत्ति का अन्तरण

18. **माल को अभिनिश्चित करना होगा** – जहां कि संविदा

अभिनिश्चित माल के विक्रय के लिए है वहां यदि और जब तक अभिनिश्चित नहीं कर लिया जाता, माल में कोई सम्पत्ति क्रेता को अन्तरित नहीं होगी ।

19. **सम्पत्ति तब संक्रंत होती है जब उसका संक्रंत होना आशयित हो** – (1) जहां कि संविदा विनिर्दिष्ट या अभिनिश्चित माल के विक्रय के लिए हो वहां उस माल में की सम्पत्ति क्रेता को उस समय अन्तरित होती है जिस समय उसका अन्तरित किया जाना उस संविदा के पक्षकारों द्वारा आशयित हो ।

(2) संविदा के निबन्धन, पक्षकारों का आचरण और मामले की परिस्थितियां पक्षकारों के आशय को अभिनिश्चित करने के प्रयोजन के लिए ध्यान में रखी जाएंगी ।

(3) जब तक कि भिन्न आशय प्रतीत न हो, उस समय के बारे में जिस पर माल में की सम्पत्ति क्रेता को संक्रंत होनी है, पक्षकारों के आशय के अभिनिश्चयन के लिए नियम वे नियम हैं जो धारा 20 से लेकर 24 तक में अन्तर्विष्ट हैं ।

20. **परिदेय स्थिति में विनिर्दिष्ट माल** – जहां कि संविदा परिदेय स्थिति के विनिर्दिष्ट माल के विक्रय के लिए वहां उस माल में की संपत्ति क्रेता को उस समय संक्रान्त होती है जब संविदा की जाती है, और यह तत्वहीन है कि कीमत के संदाय का समय या माल के परिदान का समय या दोनों मुल्तवी कर दिए गए हैं ।

21. **विनिर्दिष्ट माल का परिदेय स्थिति में लाया जाना** – जहां कि संविदा विनिर्दिष्ट माल के विक्रय के लिए है और विक्रेता माल को परिदेय स्थिति में लाने के प्रयोजन से माल के प्रति कुछ करने के लिए आबद्ध है, वहां सम्पत्ति तब तक संक्रान्त नहीं होती जब तक वह कर नहीं दिया जाता और क्रेता को उसकी सूचना नहीं हो जाती ।

22. **परिदेय स्थिति में विनिर्दिष्ट माल, जब कि उसकी कीमत अभिनिश्चित करने के लिए उसके प्रति विक्रेता को कुछ करना है** – जहां कि संविदा परिदेय स्थिति के विनिर्दिष्ट माल के विक्रय के लिए है किन्तु विक्रेता कीमत अभिनिश्चित करने के प्रयोजन से माल को तोलने,

मापने, परखने या उसके बारे में कोई अन्य कार्य या बात करने के लिए आबद्ध है वहां सम्पत्ति तब तक संक्रान्त नहीं होती जब तक वह कार्य या बात नहीं कर जाती और क्रेता को उसकी सूचना नहीं हो जाती ।

23. **अनभिनिश्चित माल का विक्रय और विनियोग** – (1) जहां कि अनभिनिश्चित या भावी माल के वर्णनानुसार विक्रय की संविदा है और ऐसा माल जो उस वर्णन का और परिदेय स्थिति में है या तो क्रेता की अनुमति से विक्रेता द्वारा या विक्रेता की अनुमति से क्रेता द्वारा संविदा मद्दे अशर्त विनियोजित कर दिया जाता है वहां तदुपरि माल में की सम्पत्ति क्रेता को संक्रान्त हो जाती है । ऐसी अनुमति अभिव्यक्त या विवक्षित हो सकेगी और विनियोग किए जाने के पूर्व या पश्चात् दी जा सकेगी ।

(2) **वाहक को परिदान** – जहां कि संविदा के अनुसरण में विक्रेता क्रेता को अथवा क्रेता को माल परेषित किए जाने के प्रयोजन से वाहक को या अन्य उपनिहिती को (चाहे वह क्रेता द्वारा नामित हो या न हो) माल का परिदान कर देता है और व्ययन का अधिकार आरक्षित नहीं रखता वहां यह समझा जाएगा कि उसने संविदा मद्दे उस माल का अशर्त विनियोग कर दिया है ।

24. **अनुमोदनार्थ अथवा "विक्रय या वापसी के लिए" भेजा गया माल** – जब कि क्रेता को माल अनुमोदनार्थ अथवा "विक्रय या वापसी के लिए" या ऐसे ही अन्य निबन्धनों पर परिदत्त किया जाता है तब माल में की सम्पत्ति का क्रेता को संक्रमण –

(क) उस समय होता है जब वह अपना अनुमोदन या प्रतिग्रहण विक्रेता को संज्ञापित करता है या उस संव्यवहार को अंगीकार करने का कोई अन्य कार्य करता है;

(ख) उस दशा में जब कि वह अपना अनुमोदन या प्रतिग्रहण विक्रेता को संज्ञापित नहीं करता किन्तु प्रतिक्षेप की सूचना दिए बिना माल को प्रतिधारित रखता है, यदि माल की वापसी के लिए कोई समय नियत किया गया हो तो उस समय के अवसान पर होता है, और यदि कोई समय नियत नहीं किया गया हो तो

युक्तियुक्त समय के अवसान पर होता है ।

25. **व्ययन के अधिकार का आरक्षण** – (1) जहां कि संविदा विनिर्दिष्ट माल के विक्रय के लिए है या जहां कि माल संविदा मद्दे तत्पश्चात् विनियोजित कर दिया जाता है वहां विक्रेता उस माल के व्ययन का अधिकार संविदा या विनियोग के निबन्धनों द्वारा तब तक के लिए आरक्षित रख सकेगा जब तक अमुक शर्तें पूरी नहीं हो जातीं । ऐसी दशा में इस बात के होते हुए भी कि माल का परिदान क्रेता को, या क्रेता को उसका परेषण करने के प्रयोजन से वाहक को या अन्य उपनिहिती को, कर दिया गया है, माल में की सम्पत्ति क्रेता को तब तक संक्रान्त नहीं होती जब तक विक्रेता द्वारा लगाई गई शर्तें पूरी नहीं हो जाती ।

[1][(2) जहां कि माल पोत द्वारा भेजा जाता है या रेल द्वारा वहन किए जाने के लिए रेल-प्रशासन को परिदत्त किया जाता है और, यथास्थिति, वहन-पत्र या रेल-रसीद पर माल विक्रेता के या उसके अभिकर्ता के आदेशानुसार परिदेय है, वहां प्रथमदृष्टया यह समझा जाता है कि विक्रेता ने व्ययन का अधिकार आरक्षित कर लिया है ।

(3) जहां कि माल का विक्रेता क्रेता पर कीमत के लिए विनिमय-पत्र लिखता है और विनिमय-पत्र, यथास्थिति, वहन-पत्र या रेल-रसीद के साथ क्रेता को इस दृष्टि से पारेषित करता है कि विनिमय-पत्र प्रतिगृहीत कर लिया जाए या उसका भुगतान कर दिया जाए वहां यदि क्रेता विनिमय-पत्र का आदरण नहीं करता तो वह उस वहन-पत्र या रेल-रसीद को लौटाने के लिए आबद्ध है और यदि वह उस वहन-पत्र या रेल-रसीद को सदोष प्रतिधारित करता है तो माल में की संपत्ति उसको संक्रंत नहीं होती ।

स्पष्टीकरण - इस धारा में "रेल" और "रेल-प्रशासन" पदों के वे ही अर्थ होंगे जो भारतीय रेल अधिनियम, 1890 (1890 का 9) में उन्हें क्रमश: समनुदिष्ट हैं ।]

---

[1] 1963 के अधिनियम सं. 33 की धारा 4 द्वारा उपधारा (2) और उपधारा (3) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

26. **जोखिम प्रथमदृष्ट्या संपत्ति के साथ संक्रंत हो जाती है** – जब तक कि अन्यथा कारित न हो, माल तब तक विक्रेता की जोखिम पर रहता है जब तक उसमें की संपत्ति क्रेता को अंतरित नहीं हो जाती ; किन्तु जब उसमें की संपत्ति क्रेता को अंतरित हो जाती है तब चाहे परिदान किया गया हो या नहीं, माल क्रेता की जोखिम पर रहता है :

परन्तु जहां कि परिदान क्रेता या विक्रेता के कसूर से विलम्बित हो गया है वहां माल किसी हानि की बाबत, जो ऐसे कसूर के अभाव में न हुई होती, उस पक्षकार की जोखिम पर रहता है जिसका कसूर हो :

परन्तु यह और भी कि इस धारा की कोई भी बात क्रेता या विक्रेता के उन कर्तव्यों या दायित्वों पर प्रभाव नहीं डालेगी जो दूसरे पक्षकार के माल के उपनिहिती के नाते उसके हैं ।

हक का अन्तरण

27. **उस व्यक्ति द्वारा विक्रय जो स्वामी नहीं है** – इस अधिनियम और किसी तत्समय प्रवृत्त विधि के उपबन्धों के अध्यधीन यह है कि जहां कि माल ऐसे व्यक्ति द्वारा बेचा जाता है जो उसका स्वामी नहीं है और जो स्वामी के प्राधिकार के अधीन या सम्मति से उसे नहीं बेचता वहां क्रेता उस माल पर उस हक से, जो विक्रेता का था, बेहतर हक नहीं अर्जित करता, जब तक कि माल का स्वामी विक्रेता के विक्रय-प्राधिकार का प्रत्याख्यान करने से अपने आचरण द्वारा प्रवारित नहीं हो जाता :

परन्तु जहां कि वाणिज्यिक अभिकर्ता माल पर या माल पर हक की दस्तावेज पर स्वामी की सम्मति से कब्जा रखता है वहां जब तक वह वाणिज्यिक अभिकर्ता के कारबार के मामूली अनुक्रम में कार्य कर रहा हो, उसके द्वारा किया गया कोई भी विक्रय वैसा ही विधिमान्य होगा मानो माल के स्वामी द्वारा वह ऐसा करने के लिए अभिव्यक्ततः प्राधिकृत हो ; परन्तु यह तब जब कि क्रेता सद्भावपूर्वक कार्य करे और विक्रय की संविदा के समय उसे यह सूचना न हो कि विक्रेता को विक्रय-प्राधिकार नहीं है ।

28. **संयुक्त स्वामियों में से एक द्वारा विक्रय** – यदि माल के कई संयुक्त स्वामियों में से एक का उस माल पर एकमात्रिक कब्जा

सहस्वामियों की अनुज्ञा से है तो उस माल में की सम्पत्ति ऐसे किसी व्यक्ति को अन्तरित हो जाती है जो ऐसे संयुक्त स्वामी में उसे सद्भावपूर्वक क्रय करे और जिसे विक्रय की संविदा के समय यह सूचना न हो कि विक्रेता को विक्रय-प्राधिकार नहीं है ।

29. **शून्यकरणीय संविदा के अधीन कब्जा रखने वाले व्यक्ति द्वारा विक्रय** – जब कि माल के विक्रेता ने भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 (1872 का 9) की धारा 19 या 19क के अधीन शून्यकरणीय संविदा के अधीन उस पर कब्जा अभिप्राप्त किया है किन्तु वह संविदा विक्रय के समय विखण्डित नहीं हो चुकी है, तब क्रेता उस माल पर अच्छा हक अर्जित कर लेता है; परन्तु यह तब जब कि वह उसे सद्भावपूर्वक और विक्रेता के हक की त्रुटि की सूचना के बिना क्रय करे ।

30. **विक्रय के पश्चात् विक्रेता या क्रेता का कब्जा रहना** – (1) जहां कि किसी व्यक्ति के माल का विक्रय कर देने पर भी उस माल पर या उस माल पर हक की दस्तावेजों पर कब्जा बना रहता है या होता है वहां उस व्यक्ति द्वारा या उसके लिए कार्य करने वाले वाणिज्यिक अभिकर्ता द्वारा उस माल का या हक की दस्तावेजों का किसी विक्रय, गिरवी या अन्य व्ययन के अधीन किसी ऐसे व्यक्ति को किया गया परिदान या अन्तरण जो उसे सद्भावपूर्वक और पूर्वतन विक्रय की सूचना के बिना प्राप्त करता है, वही प्रभाव रखेगा मानो परिदान या अन्तरण करने वाला व्यक्ति माल के स्वामी द्वारा वैसा करने के लिए अभिव्यक्ततः प्राधिकृत था ।

(2) जहां कि कोई व्यक्ति माल का क्रय करके या क्रय करने का करार करके उस माल का या उस माल पर हक की दस्तावेजों का कब्जा विक्रेता की सम्मति से अभिप्राप्त करता है वहां उस व्यक्ति द्वारा या उसके लिए कार्य करने वाले वाणिज्यिक अभिकर्ता द्वारा उस माल का या हक की दस्तावेजों का किसी विक्रय, गिरवी या अन्य व्ययन के अधीन किसी ऐसे व्यक्ति को किया गया परिदान या अन्तरण, जो उसे सद्भावपूर्वक और माल के बारे में मूल विक्रेता के किसी धारणाधिकार या अन्य अधिकार की सूचना के बिना प्राप्त करता है, ऐसा प्रभाव रखेगा मानो ऐसा धारणाधिकार या अधिकार अस्तित्व में था ही नहीं ।

अध्याय 4

संविदा का पालन

31. **विक्रेता और क्रेता के कर्तव्य** – विक्रेता का कर्तव्य है कि माल का परिदान और क्रेता का कर्तव्य है कि उसका प्रतिग्रहण और उसके लिए संदाय विक्रय की संविदा के निबन्धनों के अनुसार करे ।

32. **संदाय और परिदान समवर्ती शर्तें हैं** – जब तक कि अन्यथा करार न हुआ हो माल का परिदान और कीमत का संदाय समवर्ती शर्तें हैं अर्थात् विक्रेता कीमत के विनिमय में माल का कब्जा क्रेता को देने को तैयार और रजामन्द होगा और क्रेता माल के कब्जे के विनिमय में कीमत देने को तैयार और रजामन्द होगा ।

33. **परिदान** – विक्रीत माल का परिदान ऐसा कोई काम करके किया जा सकेगा जिसके बारे में पक्षकारों में करार हो कि वह परिदान माना जाएगा या जो माल पर क्रेता का या उसकी ओर से धारित करने के लिए प्राधिकृत व्यक्ति का कब्जा करा देने का प्रभाव रखता हो ।

34. **भागिक परिदान का प्रभाव** – सम्पूर्ण माल का परिदान चालू रहने के दौरान में माल के भाग का परिदान ऐसे माल में की सम्पत्ति के संक्रमण के प्रयोजन के लिए वही प्रभाव रखता है जो सम्पूर्ण का परिदान; किन्तु माल के भाग का ऐसा परिदान, जो उसे सम्पूर्ण से पृथक् करने के आशय से किया जाए, शेष के परिदान के रूप में प्रवृत्त नहीं होता ।

35. **परिदान के लिए क्रेता आवेदन करे** – कोई अभिव्यक्त संविदा न हो तो, जब तक क्रेता परिदान के लिए आवेदन न करे माल का विक्रेता उसका परिदान करने के लिए आबद्ध नहीं है ।

36. **परिदान विषयक नियम** – (1) यह बात कि माल का कब्जा क्रेता को लेना है या माल क्रेता को विक्रेता द्वारा भेजा जाना है हर मामले में पक्षकारों के बीच अभिव्यक्त या विवक्षित संविदा पर अवलंबित है कोई ऐसी संविदा न हो तो विक्रीत माल का परिदान उस स्थान पर जिसमें यह विक्रय के समय हो और विक्रय करने के लिए करारित माल का परिदान उस स्थान पर जिसमें वह विक्रय करने के करार के समय

हो या यदि माल तब अस्तित्व में न हो तो उस स्थान पर, जिसमें वह विनिर्मित या उत्पादित किया जाता है, किया जाएगा ।

(2) जहां कि विक्रय की संविदा के अधीन क्रेता को माल भेजने के लिए विक्रेता आबद्ध हो, किन्तु उसे भेजने के लिए कोई समय नियत न हो वहां विक्रेता उसे युक्तियुक्त समय के अन्दर भेजने के लिए आबद्ध है ।

(3) जहां कि माल विक्रय के समय किसी पर-व्यक्ति के कब्जे में हो, वहां क्रेता को विक्रेता द्वारा परिदान नहीं होता यदि और जब तक ऐसा पर-व्यक्ति क्रेता से यह अभिस्वीकार न कर ले कि वह माल को उसकी ओर से धारित किए हुए है :

परन्तु इस धारा की कोई भी बात माल पर हक की किसी दस्तावेज के प्रदान या अन्तरण के प्रवर्तन पर प्रभाव न डालेगी ।

(4) परिदान की मांग या निविदा, जब तक कि वह युक्तियुक्त समय पर न की जाए, प्रभावहीन मानी जा सकेगी युक्तियुक्त समय क्या है, यह तथ्य का प्रश्न है ।

(5) जब तक कि अन्यथा करार न हो, माल को परिदेय स्थिति में लाने के और तदनुषंगिक व्यय विक्रेता द्वारा उठाए जाएंगे ।

37. **गलत परिमाण का परिदान** – (1) जहां कि विक्रेता उस परिमाण से, जिसके विक्रय की संविदा उसने की थी, कम परिमाण के माल का परिदान क्रेता को करता है वहां क्रेता उसे प्रतिक्षेपित कर सकेगा, किन्तु यदि क्रेता ऐसे परिदत्त माल को प्रतिगृहीत कर लेता है तो वह संविदा-दर से उसके लिए संदाय करेगा ।

(2) जहां कि विक्रेता उस परिमाण से, जिसके विक्रय की संविदा उसने की थी, अधिक परिमाण के माल का परिदान क्रेता को करता है वहां क्रेता उस माल को, जो संविदा के अन्तर्गत है, प्रतिगृहीत कर सकेगा और शेष को प्रतिक्षेपित कर सकेगा अथवा सम्पूर्ण को प्रतिक्षेपित कर सकेगा । यदि क्रेता ऐसे परिदत्त समस्त माल को प्रतिगृहीत कर ले तो वह संविदा-दर से उसके लिए संदाय करेगा ।

(3) जहां कि विक्रेता उस माल को, जिसके विक्रय की उसने संविदा की थी, उससे भिन्न वर्णन के ऐसे माल से, जो संविदा के अन्तर्गत नहीं

है, मिश्रित करके परिदत्त करता है वहां क्रेता उस माल को प्रतिगृहीत कर सकेगा जो संविदा के अनुसार है और शेष को प्रतिक्षेपित कर सकेगा, अथवा समस्त को प्रतिक्षेपित कर सकेगा ।

(4) इस धारा के उपबंध व्यापार की प्रथा अथवा पक्षकारों के बीच के विशेष करार या व्यवहार-चर्या के अध्यधीन हैं ।

38. **किस्तों में परिदान** – (1) जब तक कि अन्यथा करार न हो, माल का क्रेता उसका परिदान किस्तों में प्रतिगृहीत करने के लिए आबद्ध नहीं है ।

(2) जहां कि संविदा ऐसे माल के विक्रय के लिए हो जिसका परिदान ऐसी कथित किस्तों में किया जाना है, जिनके लिए संदाय पृथक्-पृथक् किया जाना है और विक्रेता एक या अधिक किस्तों की बाबत कोई परिदान नहीं करता है या त्रुटियुक्त परिदान करता है अथवा क्रेता एक या अधिक किस्तों का परिदान लेने में उपेक्षा या लेने से इंकार या एक या अधिक किस्तों के लिए संदाय करने में उपेक्षा या संदाय करने से इंकार करता है वहां यह प्रश्न हर एक मामले में संविदा के निबन्धनों और मामले की परिस्थितियों पर अवलम्बित होगा कि संविदा का भंग सम्पूर्ण संविदा का निराकरण है या वह उसका ऐसा पृथक्करणीय भंग है, जिससे प्रतिकर के लिए दावा तो उद्भूत होता है किन्तु सम्पूर्ण संविदा को निराकृत मानने का अधिकार नहीं ।

39. **वाहक या घाटवाल को परिदान** – (1) जहां कि विक्रय की संविदा के अनुसरण में विक्रेता को यह प्राधिकार है या उससे यह अपेक्षित है कि वह क्रेता को माल भेजे, वहां उस माल का क्रेता के पास पारेषण करने के प्रयोजन से वाहक को परिदान, चाहे वाहक क्रेता द्वारा नामित हो या न हो, अथवा घाटवाल को सुरक्षित अभिरक्षा के लिए परिदान प्रथमदृष्टया उस माल का क्रेता को परिदान समझा जाता है ।

(2) जब तक कि क्रेता द्वारा विक्रेता अन्यथा प्राधिकृत न हो, वह क्रेता की ओर से वाहक से या घाटवाल से ऐसी संविदा करेगा, जो माल की प्रकृति और मामले की अन्य परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए युक्तियुक्त हो । यदि विक्रेता ऐसा करने का लोप करता है और माल

अभिवहन के अनुक्रम में, अथवा उस समय, जब वह घाटवाल की अभिरक्षा में है, खो जाता है या नुकसानग्रस्त हो जाता है, तो क्रेता, वाहक या घाटवाल को किया गया परिदान अपने को किया गया परिदान मानने से इंकार कर सकेगा या विक्रेता को नुकसानी के लिए उत्तरदायी ठहरा सकेगा ।

(3) जब तक कि अन्यथा करार न हो, जहां कि विक्रेता द्वारा क्रेता को ऐसे मार्ग से, जिसमें समुद्र अभिवहन अन्तर्वलित है, ऐसी परिस्थितियों में माल भेजा जाता है, जिनमें प्रायः बीमा कराया जाता है, वहां क्रेता को विक्रेता ऐसी सूचना देगा जिससे क्रेता उसके समुद्र अभिवहन के दौरान के लिए उसका बीमा कराने को समर्थ हो सके और यदि विक्रेता ऐसा करने में असफल रहता है तो माल ऐसे समुद्र अभिवहन के दौरान में उसकी जोखिम पर समझा जाएगा ।

40. **जोखिम, जहां कि माल का परिदान दूर के स्थान पर किया जाता है** – जहां कि माल का विक्रेता अपनी ही जोखिम पर उसका परिदान उस स्थान से भिन्न स्थान पर करने का करार करता है जहां वह माल विक्रय के समय है, वहां, ऐसा होते हुए भी क्रेता, जब तक कि अन्यथा करार न हो, उस माल में ऐसे क्षय की जोखिम उठाएगा जो अभिवहन के अनुक्रम में अवश्यमेव हुआ करता है ।

41. **माल की परीक्षा करने का क्रेता का अधिकार** – (1) जहां कि क्रेता को ऐसा माल परिदत्त किया जाता है, जिसकी परीक्षा उसने तत्पूर्व नहीं की है, वहां यह न समझा जाएगा कि उसने उसका प्रतिग्रहण कर लिया है यदि और जब तक उसे यह अभिनिश्चित करने के प्रयोजन से कि वह संविदा के अनुरूप है या नहीं, उसकी परीक्षा करने का युक्तियुक्त अवसर न मिल गया हो ।

(2) यदि अन्यथा करार न हो, तो जब विक्रेता माल का परिदान क्रेता को निविदत्त करता है तब वह इस बात के लिए आबद्ध है कि यह अभिनिश्चित करने के प्रयोजन से कि माल संविदा के अनुरूप है या नहीं, माल की परीक्षा करने का युक्तियुक्त अवसर, प्रार्थना किए जाने पर, क्रेता को दे ।

42. **प्रतिग्रहण** – क्रेता ने माल को प्रतिगृहीत कर लिया है, यह तब समझा जाता है, जब वह विक्रेता को यह प्रज्ञापित कर देता है कि उसने वह माल प्रतिगृहीत कर लिया है, या जब माल क्रेता को परिदत्त कर दिया गया है और उसने उसके संबंध में ऐसा कोई कार्य किया है जो विक्रेता के स्वामित्व से असंगत है या जब युक्तियुक्त समय के बीत जाने पर भी वह विक्रेता को अपना प्रतिक्षेपण प्रज्ञापित किए बिना माल को प्रतिधारित किए रहता है ।

43. **क्रेता प्रतिक्षेपित माल को वापस करने के लिए आबद्ध नहीं है** – जब तक कि अन्यथा करार न हो, जहां कि क्रेता को माल परिदत्त किया जाता है और वह उसका प्रतिग्रहण करने से इंकार, ऐसा करने का अधिकार रखते हुए, करता है वहां वह उसे विक्रेता को वापस करने के लिए आबद्ध नहीं है, किन्तु यह पर्याप्त होगा कि वह विक्रेता को प्रतिज्ञापित कर दे कि वह उसका प्रतिग्रहण करने से इंकार करता है ।

44. **माल का परिदान लेने में उपेक्षा या लेने से इंकार करने के लिए क्रेता का दायित्व** – जब कि विक्रेता माल का परिदान करने को तैयार और रजामन्द है और क्रेता से परिदान लेने की प्रार्थना करता है और क्रेता ऐसी प्रार्थना के पश्चात् युक्तियुक्त समय के अन्दर उस माल का परिदान नहीं लेता है तब वह विक्रेता के प्रति ऐसी किसी हानि के लिए, जो परिदान लेने में क्रेता द्वारा की गई उपेक्षा या इंकार से हुई है, और माल की देखरेख और अभिरक्षा के युक्तियुक्त प्रभार के लिए भी, दायी है :

परन्तु जहां कि परिदान लेने में क्रेता द्वारा की गई उपेक्षा या इनकार संविदा के निराकरण की कोटि में आता है वहां इस धारा की कोई भी बात विक्रेता के अधिकारों पर प्रभाव न डालेगी ।

अध्याय 5

माल पर असंदत्त विक्रेता के अधिकार

45. **"असंदत्त विक्रेता" की परिभाषा** – (1) माल का विक्रेता इस अधिनियम के अर्थ के अन्दर "असंदत्त विक्रेता" तब समझा जाता है –

(क) जब कि पूरी कीमत संदत्त या निविदत्त न की गई हो;

(ख) जब कि विनिमय-पत्र या अन्य परक्राम्य लिखत सशर्त संदाय के रूप में प्राप्त हुई हो और जिस शर्त पर वह प्राप्त हुई थी वह लिखत के अनादरण के कारण या अन्यथा पूरी न हुई हो ।

(2) इस अध्याय में "विक्रेता" पद के अन्तर्गत ऐसा कोई भी व्यक्ति आता है जो विक्रेता की स्थिति में हो, उदाहरणार्थ विक्रेता का वह अभिकर्ता जिसे वहन-पत्र पृष्ठांकित कर दिया गया है या वह परेषक या अभिकर्ता जिसने कीमत स्वयं दे दी है या जो कीमत के लिए सीधे उत्तरदायी है ।

46. **असंदत्त विक्रेता के अधिकार** – (1) इस अधिनियम के और किसी तत्समय प्रवृत्त विधि के उपबन्धों के अध्यधीन यह है कि इस बात के होते हुए भी कि माल में की सम्पत्ति क्रेता को संक्रान्त हो गई हो, माल के असंदत्त विक्रेता को उस नाते विधि की विवक्षा से निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं –

(क) माल पर कीमत लेखे तब तक धारणाधिकार जब तक उसका उस पर कब्जा रहता है;

(ख) क्रेता के दिवालिया हो जाने की दशा में, माल अपने कब्जे से अलग कर देने के पश्चात् उसे अभिवहन में रोक देने का अधिकार;

(ग) पुनर्विक्रय का अधिकार, जैसा इस अधिनियम द्वारा परिसीमित है ।

(2) जहां कि माल में की सम्पत्ति क्रेता को संक्रान्त नहीं हुई है वहां असंदत्त विक्रेता को अपने अन्य उपचारों के अतिरिक्त परिदान के विधारण का ऐसा अधिकार प्राप्त है, जो विक्रेता के उस धारणाधिकार और अभिवहन में रोकने के अधिकार के समान और समविस्तीर्ण है जो उसे उस दशा में प्राप्त होता है जब क्रेता को सम्पत्ति संक्रान्त हो जाती है ।

असंदत्त विक्रेता का धारणाधिकार

47. **विक्रेता का धारणाधिकार** – (1) इस अधिनियम के उपबन्धों के अध्यधीन यह है कि माल का असंदत्त विक्रेता, जिसका कब्जा माल

पर है, उस पर निम्नलिखित दशाओं में तब तक कब्जा प्रतिधारित रखने का हकदार है, जब तक कीमत संदत्त या निविदत्त नहीं कर दी जाती, अर्थात् :-

(क) जहां कि माल का विक्रय उधार के बारे में किसी अनुबन्ध के बिना किया गया है;

(ख) जहां कि माल का विक्रय उधार पर किया गया है किन्तु उधार की अवधि का अवसान हो गया है;

(ग) जहां कि क्रेता दिवालिया हो जाता है ।

(2) विक्रेता अपने धारणाधिकार का प्रयोग इस बात के होते हुए भी कर सकेगा कि माल पर उसका कब्जा क्रेता के अभिकर्ता या उपनिहिती के रूप में है ।

48. **भागिक परिदान** – जहां कि असंदत्त विक्रेता ने माल का भागिक परिदान कर दिया है वहां वह अपने धारणाधिकार का प्रयोग शेष पर कर सकेगा, जब तक कि ऐसा भागिक परिदान ऐसी परिस्थितियों में न किया गया हो जो धारणाधिकार के अधित्यजन का करार दर्शित करती हों ।

49. **धारणाधिकार का पर्यवसान** – (1) माल का असंदत्त विक्रेता माल पर अपना धारणाधिकार खो देता है –

(क) जब वह क्रेता के पास पारेषित किए जाने के प्रयोजन से माल को, उसके व्ययन का अधिकार आरक्षित किए बिना, वाहक या अन्य उपनिहिती को परिदत्त कर देता है;

(ख) जब क्रेता या उसका अभिकर्ता माल पर कब्जा विधिपूर्वक अभिप्राप्त कर लेता है;

(ग) उसके अधित्यजन द्वारा ।

(2) माल का असंदत्त विक्रेता, जिसका उस पर धारणाधिकार है, अपना धारणाधिकार केवल इस कारण नहीं खो देता कि उस माल की कीमत के लिए उसने डिक्री अभिप्राप्त कर ली है ।

अभिवहन में रोकना

50. **अभिवहन में रोकने का अधिकार** – इस अधिनियम के उपबन्धों

के अध्यधीन यह है कि जब कि माल का क्रेता दिवालिया हो जाए तब असंदत्त विक्रेता, जिसने माल अपने कब्जे से अलग कर दिया है, माल को अभिवहन से रोक देने का अधिकार रखता है, अर्थात् जब तक माल अभिवहन में रहे वह उस पर फिर कब्जा कर सकेगा और उसे तब तक प्रतिधारित रख सकेगा जब तक कीमत संदत्त या निविदत्त न कर ली जाए ।

51. **अभिवहन की कालावधि** – (1) उस समय से, जब विक्रेता के पास पारेषित किए जाने के प्रयोजन से माल वाहक को या अन्य उपनिहिती को परिदत्त किया जाता है, उस समय तक, जब क्रेता या उसका तन्निमित्त अभिकर्ता उसका परिदान ऐसे वाहक या अन्य उपनिहिती से ले लेता है, माल अभिवहन के अनुक्रम में समझा जाता है ।

(2) यदि क्रेता या उसका तन्निमित्त अभिकर्ता उस माल का परिदान उसके नियत गन्तव्य स्थान पर पहुंचने से पूर्व अभिप्राप्त कर लेता है, तो अभिवहन का अन्त हो जाता है ।

(3) यदि नियत गन्तव्य स्थान पर माल के पहुंचने के पश्चात् वाहक या अन्य उपनिहिती यह बात क्रेता से या उसके अभिकर्ता से अभिस्वीकृत कर ले कि वह माल को क्रेता या उसके अभिकर्ता की ओर से धारण किए हुए है और क्रेता या उसके अभिकर्ता की ओर से उपनिहिती के रूप में उस पर कब्जा बनाए रखे तो अभिवहन का अन्त हो जाता है और यह तत्वहीन है कि क्रेता द्वारा माल के लिए आगे का गन्तव्य स्थान उपदर्शित किया गया हो ।

(4) यदि क्रेता ने माल को प्रतिक्षेपित कर दिया हो, और वाहक या अन्य उपनिहिती उस पर अपना कब्जा बनाए रखे तो, यद्यपि विक्रेता ने उसे वापस लेने से इंकार कर दिया हो, यह नहीं समझा जाता कि अभिवहन का अंत हो गया है ।

(5) जबकि माल का परिदान क्रेता द्वारा भाड़े पर लिए गए पोत को किया जाता है तब यह बात कि माल मास्टर के कब्जे में वाहक के रूप में है या क्रेता के अभिकर्ता के रूप में, एक ऐसा प्रश्न है जो उस विशिष्ट मामले की परिस्थितियों पर अवलम्बित रहता है ।

(6) जहां कि वाहक या अन्य उपनिहिती माल का परिदान क्रेता को या उसके तन्निमित्त अभिकर्ता को करने से इनकार सदोष करता है वहां अभिवहन का अन्त हुआ समझा जाता है ।

(7) जहां कि क्रेता को या उसके तन्निमित्त अभिकर्ता को माल का भागिक परिदान कर दिया गया है वहां शेष माल अभिवहन में रोका जा सकेगा, जब तक कि ऐसा भागिक परिदान ऐसी परिस्थितियों में न किया गया हो जिनसे यह दर्शित होता हो कि सारे माल पर कब्जा छोड़ देने का करार है ।

52. **अभिवहन में रोका कैसे जाता है** – (1) असंदत्त विक्रेता अभिवहन में रोकने के अपने अधिकार का प्रयोग या तो माल पर वास्तविक कब्जा करके या जिस वाहक या अन्य उपनिहिती के कब्जे में माल है उसे अपने दावे की सूचना देकर कर सकेगा । ऐसी सूचना या तो उस व्यक्ति को, जिसका उस माल पर वास्तविक कब्जा है, या उसके मालिक को दी जा सकेगी । पश्चात्कथित दशा में सूचना प्रभावी होने के लिए ऐसे समय पर और ऐसी परिस्थितियों में दी जाएगी कि मालिक युक्तियुक्त तत्परता के प्रयोग द्वारा उसे अपने सेवक या अभिकर्ता को इतना समय रहते संसूचित कर सके कि क्रेता को परिदान निवारित किया जा सके ।

(2) जबकि माल को अभिवहन में रोकने की सूचना माल के वाहक या उस पर कब्जा रखने वाले अन्य उपनिहिती को विक्रेता द्वारा दी जाती है तब वह माल का प्रतिपरिदान विक्रेता को या उसके निदेशानुसार करेगा । ऐसे प्रतिपरिदान के व्यय विक्रेता द्वारा उठाए जाएंगे ।

क्रेता और विक्रेता द्वारा अन्तरण

53. **क्रेता द्वारा अनुविक्रय या गिरवी का प्रभाव** – (1) इस अधिनियम के उपबन्धों के अध्यधीन यह है कि माल का कोई भी विक्रय या अन्य व्ययन, जो क्रेता ने किया हो, असंदत्त विक्रेता के धारणाधिकार या अभिवहन में रोकने के अधिकार पर प्रभाव नहीं डालता, जब तक कि विक्रेता ने उसके लिए अपनी अनुमति न दे दी हो :

परन्तु जहां कि माल पर हक की दस्तावेज किसी व्यक्ति को उस

माल का क्रेता या स्वामी होने के नाते दी गई है या विधिपूर्वक अन्तरित की गई है और वह व्यक्ति उस दस्तावेज को किसी ऐसे व्यक्ति को अन्तरित कर देता है, जो उस दस्तावेज को सद्भावपूर्वक और प्रतिफलेन लेता है, वहां यदि ऐसा अन्तिम वर्णित अन्तरण विक्रय के रूप में था तो असंदत्त विक्रेता का धारणाधिकार या अभिवहन में रोकने का अधिकार विफल हो जाता है और यदि ऐसा अन्तिम वर्णित अन्तरण गिरवी या अन्य मूल्यार्थ व्ययन के रूप में था तो असंदत्त विक्रेता के धारणाधिकार या अभिवहन में रोकने के अधिकार का प्रयोग उस अन्तरिती के अधिकारों के अध्यधीन ही किया जा सकता है ।

(2) जहां कि अन्तरण गिरवी के रूप में है वहां असंदत्त विक्रेता गिरवीदार से यह अपेक्षा कर सकेगा कि यावत्सम्भव वह गिरवी द्वारा प्रतिभूत रकम की तुष्टि प्रथमतः क्रेता के ऐसे किसी अन्य माल या प्रतिभूतियों से कराए जो गिरवीदार के हाथों में हो और क्रेता के विरुद्ध काम में लाई जा सकती है ।

54. **धारणाधिकार से या अभिवहन में रोकने से विक्रय का विखंडन साधारणतः नहीं होता** – (1) इस धारा के उपबन्धों के अध्यधीन यह है कि असंदत्त विक्रेता द्वारा अपने धारणाधिकार या अभिवहन में रोकने के अधिकार के प्रयोग मात्र से विक्रय की संविदा का विखण्डन नहीं होता ।

(2) जहां कि माल विनश्वर प्रकृति का है या जहां कि असंदत्त विक्रेता, जिसने अपने धारणाधिकार या अभिवहन में रोकने के अधिकार का प्रयोग किया है, पुनर्विक्रय करने के अपने आशय की सूचना क्रेता को देता है वहां यदि क्रेता युक्तियुक्त समय के अन्दर कीमत संदत्त या निविदत्त नहीं कर देता तो असंदत्त विक्रेता युक्तियुक्त समय के अन्दर माल का पुनर्विक्रय कर सकेगा और उसके संविदा भंग से कारित हानि के लिए मूल विक्रेता से नुकसानी वसूल कर सकेगा, किन्तु क्रेता उस लाभ का हकदार न होगा जो पुनर्विक्रय से हो । यदि ऐसी सूचना नहीं दी जाती है तो असंदत्त विक्रेता ऐसी नुकसानी वसूल करने का हकदार न होगा और क्रेता पुनर्विक्रय पर हुए लाभ का, यदि कोई हो, हकदार होगा ।

(3) जहां कि असंदत्त विक्रेता, जिसने अपने धारणाधिकार का या अभिवहन में रोकने के अधिकार का प्रयोग किया है, माल का पुनर्विक्रय

करता है वहां क्रेता, उस पर मूल क्रेता के विरुद्ध अच्छा हक इस बात के होते हुए भी अर्जित कर लेता है कि मूल क्रेता को पुनर्विक्रय की कोई सूचना नहीं दी गई है ।

(4) जहां कि विक्रेता यह अधिकार अभिव्यक्ततः आरक्षित कर लेता है कि यदि क्रेता व्यतिक्रम करे तो पुनर्विक्रय किया जा सकेगा और क्रेता के व्यतिक्रम करने पर माल का पुनर्विक्रय कर देता है वहां मूल विक्रय संविदा का तद्द्वारा विखंडन हो जाता है किन्तु उससे विक्रेता के किसी ऐसे दावे पर, जो वह नुकसानी के लिए रखता हो, प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता ।

अध्याय 6

संविदा-भंग के लिए वाद

55. **कीमत के लिए वाद** – (1) जहां कि विक्रय की संविदा के अधीन माल में की सम्पत्ति क्रेता को संक्रान्त हो गई है और क्रेता संविदा के निबन्धनों के अनुसार उस माल का संदाय करने की उपेक्षा या करने से इनकार सदोष करता है वहां विक्रेता माल की कीमत के लिए उसके विरुद्ध वाद ला सकेगा ।

(2) जहां कि विक्रय की संविदा के अधीन कीमत, इस बात को दृष्टि में लाए बिना कि परिदान हुआ है या नहीं, किसी निश्चित दिन को देय हो, और क्रेता ऐसी कीमत का संदाय करने की उपेक्षा या करने से इनकार सदोष करता है वहां विक्रेता कीमत के लिए उसके विरुद्ध वाद ला सकेगा, यद्यपि माल में की संपत्ति संक्रान्त न हुई हो और वह माल संविदा मद्दे विनियोजित न किया गया हो ।

56. **अप्रतिग्रहण के लिए नुकसानी** – जहां कि क्रेता माल का प्रतिग्रहण और उसके लिए संदाय करने की उपेक्षा या करने से इनकार सदोष करता है वहां विक्रेता अप्रतिग्रहण के लिए नुकसानी का वाद उसके विरुद्ध ला सकेगा ।

57. **अपरिदान के लिए नुकसानी** – जहां कि विक्रेता माल का परिदान क्रेता को करने की उपेक्षा या करने से इनकार सदोष करता है वहां क्रेता अपरिदान के लिए नुकसानी का वाद विक्रेता के विरुद्ध ला सकेगा ।

58. **विनिर्दिष्ट पालन** – विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1877 (1877 का 1) के अध्याय 2 के उपबन्धों के अध्यधीन यह है कि विनिर्दिष्ट या अभिनिश्चित माल के परिदान की संविदा के भंग के किसी वाद में न्यायालय, यदि वह ठीक समझे, वादी के आवेदन पर अपनी डिक्री द्वारा प्रतिवादी को, यह विकल्प दिए बिना कि वह नुकसानी देकर माल को प्रतिधारित रखे, यह निदेश दे सकेगा कि संविदा का पालन विनिर्दिष्टतः किया जाए । डिक्री अशर्त हो सकेगी अथवा नुकसानी या कीमत के संदाय विषयक या अन्यथा ऐसे निबन्धनों और शर्तों सहित हो सकेगी जिन्हें न्यायालय न्यायसंगत समझे, और वादी द्वारा आवेदन डिक्री से पूर्व किसी समय भी किया जा सकेगा ।

59. **वारंटी के भंग का उपचार** – (1) जहां कि वारंटी का भंग विक्रेता द्वारा किया जाता है या जहां कि क्रेता यह निर्वाचन करता है या ऐसा मानने के लिए विवश हो जाता है कि विक्रेता पक्ष से जो शर्त का भंग हुआ है वह वारण्टी का भंग है, वहां क्रेता वारण्टी के ऐसे भंग के कारण ही उस माल को प्रतिक्षेपित करने का हकदार नहीं हो जाता, किन्तु वह -

(क) वारण्टी के भंग को कीमत कम या निर्वापित कराने में विक्रेता के विरुद्ध रख सकेगा; अथवा

(ख) वारण्टी के भंग के लिए विक्रेता के विरुद्ध नुकसानी का वाद ला सकेगा ।

(2) यह तथ्य कि क्रेता ने वारण्टी के भंग को कीमत कम या निर्वापित कराने में रखा है वारण्टी के उसी भंग के लिए वाद लाने से उसे निवारित नहीं करता यदि उसे अतिरिक्त नुकसान उठाना पड़ा हो ।

60. **सम्यक् तारीख से पूर्व संविदा का निराकरण** – जहां कि विक्रय की संविदा के पक्षकारों में से कोई सा भी पक्षकार परिदान की तारीख से पूर्व उस संविदा का निराकरण कर देता है वहां दूसरा पक्षकार या तो यह मान सकेगा कि संविदा अस्तित्व में बनी हुई है और परिदान की तारीख तक प्रतीक्षा कर सकेगा या संविदा को विखंडित मान सकेगा और उस भंग के लिए वाद ला सकेगा ।

61. **नुकसानी के तौर पर ब्याज और विशेष नुकसानी** – (1) उस दशा में, जिसमें ब्याज या विशेष नुकसानी विधि द्वारा वसूलीय हो, ब्याज या विशेष नुकसानी को, अथवा जहां कि धन के संदाय का जो प्रतिफल था वह निष्फल हो गया है, दिए हुए धन को, वसूल करने के विक्रेता या क्रेता के अधिकार पर इस अधिनियम की कोई भी बात प्रभाव न डालेगी ।

(2) तत्प्रतिकूल संविदा के अभाव में न्यायालय कीमत की रकम पर ऐसी दर से जिसे वह ठीक समझे ब्याज –

(क) विक्रेता को उस वाद में, जो उसने कीमत के लिए किया है माल की निविदा की तारीख से या उस तारीख से जिस तारीख को कीमत संदेय थी, अधिनिर्णीत कर सकेगा;

(ख) क्रेता को उस वाद में, जो उसने विक्रेता की तरफ से संविदा-भंग की दशा में कीमत के प्रतिदान के लिए किया है, उस तारीख से अधिनिर्णीत कर सकेगा जिस तारीख को कीमत का संदाय किया गया था ।

अध्याय 7
प्रकीर्ण

62. **विवक्षित निबन्धनों और शर्तों का अपवर्जन** – जहां कि विधि की विवक्षा से कोई अधिकार, कर्तव्य या दायित्व विक्रय की संविदा के अधीन उद्भूत होता हो वहां अभिव्यक्त करार द्वारा या पक्षकारों के बीच की व्यवहार-चर्या द्वारा या प्रथा द्वारा, यदि प्रथा ऐसी हो जो संविदा के दोनों पक्षकारों पर आबद्धकर हो, उसका नकार या उसमें फेरफार किया जा सकेगा ।

63. **युक्तियुक्त समय तथ्य का प्रश्न है** – जहां कि इस अधिनियम में युक्तियुक्त समय के प्रति कोई निर्देश किया गया है वहां युक्तियुक्त समय क्या है, यह तथ्य का प्रश्न है ।

64. **नीलाम विक्रय** – नीलाम द्वारा विक्रय की दशा में –

(1) जहां कि माल लाटों में विक्रय के लिए रखा जाता है वहां हर एक लाट के बारे में प्रथमदृष्टया यह समझा जाता है कि वह

विक्रय की एक पृथक् संविदा का विषय है;

(2) वह विक्रय तब पूर्ण हो जाता है जब नीलामकर्ता उसका पूर्ण होना धनपात द्वारा या अन्य रूढ़िक प्रकार से आख्यापित करता है और जब तक ऐसा आख्यापन न किया जाए कोई भी बोली लगाने वाला अपनी बोली वापस ले सकेगा;

(3) बोली लगाने का अधिकार विक्रेता द्वारा या उसकी ओर से अभिव्यक्ततः आरक्षित रखा जा सकेगा और जहां कि ऐसा अधिकार अभिव्यक्ततः आरक्षित रखा जाता है, किन्तु अन्यथा नहीं, विक्रेता या उसकी ओर से कोई एक व्यक्ति नीलाम में बोली एतस्मिन्पश्चात् अन्तर्विष्ट उपबन्धों के अध्यधीन लगा सकेगा;

(4) जहां कि विक्रय का विक्रेता की ओर से बोली लगाने के अधिकार के अध्यधीन होना अधिसूचित नहीं है वहां ऐसे विक्रय में स्वयं बोली लगाना या किसी व्यक्ति को बोली लगाने के लिए नियोजित करना विक्रेता के लिए विधिपूर्ण न होगा, और न नीलामकर्ता के लिए यह विधिपूर्ण होगा कि वह विक्रेता से या ऐसे किसी व्यक्ति से कोई बोली जानते हुए ले, और इस नियम के उल्लंघनकारी विक्रय को क्रेता कपटपूर्ण मान सकेगा ।

(5) विक्रय का किसी आरक्षित कीमत या अपसेट कीमत के अध्यधीन होना अधिसूचित किया जा सकेगा;

(6) यदि विक्रेता अपदेशी बोली का प्रयोग कीमत बढ़ाने के लिए करता है तो विक्रय क्रेता के विकल्प पर शून्यकरणीय है ।

[1][64क. **वर्धित या कम किए गए करों की रकम का विक्रय की संविदाओं में जोड़ा या घटाया जाना** – (1) जब तक कि संविदा के निबन्धनों से भिन्न आशय प्रतीत न हो, किसी माल की बाबत उपधारा (2) में वर्णित प्रकृति का कोई कर ऐसे माल के विक्रय या क्रय के लिए, वहां पर जहां कि संविदा के किए जाने के समय कर प्रभार्य नहीं था, कर के संदाय के बारे में किसी अनुबन्ध के बिना, या वहां पर जहां कि उस समय कर प्रभार्य था, ऐसे माल के दत्त-कर विक्रय या क्रय के लिए,

---

[1] 1963 के अधिनियम सं. 33 की धारा 5 द्वारा धारा 64क के स्थान पर प्रतिस्थापित । यह धारा 1940 के अधिनियम सं. 41 की धारा 2 द्वारा अन्तःस्थापित की गई थी ।

कोई संविदा की जाने के पश्चात् अधिरोपित, वर्धित, कम या परिहृत किए जाने की दशा में –

(क) यदि ऐसा अधिरोपण या वर्धन इस प्रकार प्रभाव में आता है कि, यथास्थिति, कर या वर्धित कर या ऐसे कर का कोई भाग संदत्त किया जाता है या संदेय है तो विक्रेता संविदा-कीमत में उतनी रकम जोड़ सकेगा जितनी ऐसे कर या कर की वृद्धि की बाबत संदत्त या संदेय रकम के बराबर हो और ऐसी जोड़ी गई रकम अपने को संदत्त किए जाने का तथा वह उस रकम के लिए वाद लाने और उसे वसूल करने का हकदार होगा; तथा

(ख) यदि ऐसी कमी या परिहार इस प्रकार प्रभाव में आता है कि, यथास्थिति, केवल कम किया गया कर संदत्त किया जाता है या संदेय है या कोई भी कर न संदत्त किया गया है, न संदेय है तो क्रेता संविदा कीमत में से उतनी रकम काट सकेगा जितनी कर की कमी या परिहृत कर के बराबर हो और ऐसी कटौती के लिए या की बाबत संदाय करने का वह दायी न होगा और न उस पर वाद लाया जा सकेगा ।

(2) उपधारा (1) के उपबन्ध निम्नलिखित करों को लागू होते हैं, अर्थात् :–

(क) माल पर कोई भी सीमाशुल्क या उत्पाद-शुल्क;

(ख) माल के विक्रय या क्रय पर कोई भी कर ।]

65. [**निरसन ।**] – निरसन अधिनियम, 1938 (1938 का 1) की धारा 2 और अनुसूची द्वारा निरसित ।

66. **व्यावृत्तियां** – (1) इस अधिनियम या एतद्द्वारा किए किसी भी निरसन में की कोई भी बात निम्नलिखित पर न तो प्रभाव डालेगी और न प्रभाव डालने वाली समझी जाएगी –

(क) इस अधिनियम के प्रारम्भ से पूर्व अर्जित, प्रोद्भूत या उपगत कोई भी अधिकार, हक, हित, बाध्यता या दायित्व; अथवा

(ख) ऐसे किसी अधिकार, हक, हित, बाध्यता या दायित्व के विषय में कोई वैध कार्यवाहियां या उपचार; अथवा

(ग) इस अधिनियम के प्रारम्भ के पूर्व की गई या सहन की गई कोई भी बात; अथवा

(घ) माल के विक्रय से संबंधित ऐसी कोई भी अधिनियमिति, जो इस अधिनियम द्वारा अभिव्यक्ततः निरसित नहीं की गई है; अथवा

(ङ) विधि का ऐसा कोई भी नियम जो इस अधिनियम से असंगत नहीं है ।

(2) दिवाला विषयक नियम, जो माल के विक्रय की संविदाओं से संबंधित हों इस अधिनियम में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, उन्हें लागू बने रहेंगे ।

(3) विक्रय की संविदाओं से संबंधित इस अधिनियम के उपबंध विक्रय की संविदा के रूप में किसी ऐसे संव्यवहार को लागू नहीं है जो बन्धक, गिरवी, भार या अन्य प्रतिभूति के तौर पर प्रवर्तित होने के लिए आशयित हों ।

———————

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय (द्वितीय संस्करण) – डा. एस. सी. खरे – 1996	273	115	29.00
2.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) – विधि साहित्य प्रकाशन – 2000	209	225	57.00
3.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	145.00
4.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–
6.	भारत का सांविधानिक इतिहास - (103वां संशोधन तक) - श्री चन्द्रशेखर मिश्र	340	325	–
7.	भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व - डा. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी	906	750	–
8.	पर्यावरण विधि - श्री मदन लाल	138	175	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. विधि शब्दावली	सातवां संस्करण, 2015	कीमत रु. 375/-
2. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2019	कीमत रु. 1,900/-
3. भारत का संविधान	2021	कीमत रु. 300/-

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
Website : www.lawmin.nic.in
Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 16288/68

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं - **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका** और **उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः सिविल और दांडिक के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को ऑन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष **:** 011-23385259, 23387589, फैक्स **:** 011-23387589, ई-मेल **:** am.vsp-molj@gov.in